UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182168

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—901—26-3-70—5,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83/S53H/ Accession No. 11.2778

Author चतुरसेन आचार्य

Title अपराधी

This book should be returned on or before the date last marked below.

आलमगीर

(मुग़ल कालीन ऐतिहासिक उपन्यास)

लेखक :
आचार्य चतुरसेन



भागलपुर-२ (बिहार)

प्रकाशक :
शारदा प्रकाशन, भागलपुर-२.

मुद्रक :
शारदा प्रेस, भागलपुर-२.

आवरण चित्रकार :
श्री अमल सेन

आवरण मुद्रक :
शारदा प्रेस, भागलपुर.

स्केच :
श्री अमल कुमार

प्रथम संस्करण :
सन् १९५४ ई०

परिच्छेद-सूची--

		पृष्ठ
	प्रवचन ...	क से ड
१—	दिल्ली में उत्साह की लहर ...	१
२—	आम ख़ास का दरबार ...	३
३—	तख़्ते ताऊस ...	४
४—	बादशाह सलामत ...	८
५—	अमीर मीरजुमला ...	१३
६—	वालिए-अहद ...	२२
७—	जहाँ-आरा ...	२८
८—	शाही परिवार ...	३०
९—	दिल्ली का लाल किला ...	३२
१०—	हरम ...	३४
११—	महान् साम्राज्य ...	४५
१२—	लुक़मए शाहजहाँ ...	५५
१३—	ख़ासगाह ...	५७
१४—	पिता, पुत्री और पुत्र ...	६४
१५—	बेगम की सवारी ...	७३
१६—	बेगम की बारहदरी ...	८१
१७—	हुगली के क़ैदी ...	९३
१८—	क़ौल-क़रार ...	९६
१९—	दरबारे ख़िलवत ...	१००
२०—	दलित कुसुम ...	१०३
२१—	रोशनआरा ...	१०७
२२—	मीरजुमला का कूच ...	११२
२३—	मुग़ल तख़्त डगमग ...	११७

२४— औरंगज़ेब ... १२१
२५— औरंगज़ेब का हरम ... १२६
२६— हीराबाई ... १२६
२७— मराठों का उदय ... १३३
२८— औरंगज़ेब का कूटचक्र ... १४२
२६— पहली चाल ... १४५
३०— शिकार ... १४६
३१— मीरबाबा से मुलाकात ... १५२
३२— मीरजुमला की शह ... १५४
३३— औरंगज़ेब की दूसरी चाल ... १५८
३४— सूरत ... १६०
३५— ज़ीनतुल्-निसां ... १६५
३६— कूच का नक्क़ारा ... १७१
३७— गुस्लख़ाने का दरबार ... १७५
३८— औरंगज़ेब की कठिनाइयां ... १८१
३६— मुतासिब फ़क़ीर ... १८५
४०— अपनी-अपनी डफली अपना-अपना राग १८८
४१— बहादुरपुर का युद्ध ... १६१
४२— दरबारे ख़िलवत ... १६७
४३— क्षिप्रा के तट पर ... २०२
४४— धरमत का युद्ध ... २०६
४५— सफ़ेद डाकू ... २१४
४६— पान का ख़र्चा ... २१६
४७— वालिए अहद की सेवा में ... २२४
४८— बुरी ख़बर ... २२६
४६— चम्बल के तीर पर ... २३०
५०— चम्बल के पार २३२

५१— समूम गढ़ का युद्ध ... २३७
५२— घमासान युद्ध ... २४२
५३— मुराद का संकट ... २४५
५४— दारा का पलायन ... २४८
५५— भाग्य का हेर फेर ... २५०
५६— आगरे में बदहवासी ... २५३
५७— आगरे में ... २५५
५८— क़ैद में ... २६३
५९— शह-मात ... २६८
६०— बेअदबी ... २७१
६१— अगला क़दम ... २७२
६२— सुनहरा जाल ... २७७
६३— पहिला शिकार ... २८२
६४— आलमगीर ग़ाज़ी ... २८६
६५— सुलेमान शिकोह की दुर्दशा ... २९१
६६— खजुआ की लड़ाई ... २९४
६७— औरंगज़ेब की उलझन ... २९८
६८— शुजा की शामत ... ३००
६९— औरंगज़ेब का नया क़दम ... ३०५
७०— दोराई की लड़ाई ... ३०७
७१— विश्वासघाती के हाथ में ... ३११
७२— दिल्ली के बाज़ारों में ... ३१४
७३— क़त्ल ... ३१६
७४— शाहो क़ैदखाना ... ३१८
७५— शुजा की समाप्ति ... ३२१
७६— आखिरी शिकार ... ३२३
विहंगम दृष्टि ... ३२७

आत्मगीत

प्रवचन

(१)

मुहीउद्दीन मुहम्मद औरंगजेब, शाहजहां और मुमताज महल की सातवीं सन्तान था। उसका जन्म दोहद में जो बम्बई सूबे के पंचमहल जिले में इसी नाम के तालुके का प्रधान नगर है, २४ अक्टूबर सन् १६१८ में हुआ।

वह साहसी, तीव्र बुद्धि, गम्भीर और विलक्षण स्मृति का युवक था। उसका कुरान का ज्ञान तथा हदीस का अध्ययन सम्पूर्ण था। वह बात बात में उनका उल्लेख करता था। अरबी, फारसी का वह पण्डित था। वह इन भाषाओं को विद्वान की भांति लिख और बोल सकता था। उन दिनों मुगल हरम की घरेलू भाषा हिन्दवी थी, औरंगजेब को भी उसका अच्छा ज्ञान था। वह हिन्दी की लोकप्रिय कहावतों का बातचीत में बहुधा प्रयोग करता था। शृंगारिक काव्य-साहित्य से उसे घृणा थी। उपदेशात्मक वाक्य, कविताएं उसे पसन्द थीं। धार्मिक ग्रन्थ और कुरान की टीकाएं, मुहम्मद के जीवनवृत्त वह चाव से पढ़ता था। इमाम मुहम्मद गजनवी की कृतियां, मुनीर निवासी शेख शर्फ याहिया और शेख जैबुद्दीन कुतुबमुही शीराज़ी के चुने हुए पत्र वह प्रेम से पढ़ता था। चित्रकारी भी उसे पसन्द न थी और गान विद्या का भी उसे शौक न था। न उसे स्थपत्य से प्रेम था। हां, चीनी के सुन्दर बर्त्तनों का उसे शौक था।

इसी औरंगजेब ने आलमगीर प्रथम के नाम से मुगल तख्त पर बैठ कर पचास वर्ष अबाध शासन किया।

(२)

बादशाह शाहजहां के फीलखाने में दो दिग्गज हाथी थे। एक का नाम था 'सुधाकर' और दूसरे का 'सूरत सुन्दर'। २८ मई सन् १६३३ के दिन प्रभात में बादशाह ने इन दोनों हाथियों की लड़ाई का आयोजन आगरा में जमुना के समतल तट पर किया। दो भिन्न दिशाओं से दौड़ते हुए वे दोनों हाथी किले के उस झरोखे के नीचे, जहां सुबह में बादशाह प्रजा को दर्शन देता था, आपस में भिड़ गए। हाथियों की यह लड़ाई देखने को उत्सुक शाहजहां शीघ्रता से वहां पहुँचा। उसके तीनों बड़े पुत्र उससे कुछ कदम आगे घोड़े पर सवार खड़े थे। उत्सुकता-वश औरंगजेब हाथियों के बहुत निकट पहुँच गया था।

कुछ देर बाद दोनों हाथी एक दूसरे को छोड़ कर पीछे हटे। 'सूरत सुन्दर' एक ओर को भाग गया। अपने प्रतिद्वन्द्वी को पास न पाकर 'सुधाकर' ने पास खड़े औरंगजेब पर हमला कर दिया। उस समय औरंगजेब की आयु चौदह वर्ष की थी। परन्तु यह निडर अल्पवयस्क शाहज़ादा हाथी से नहीं डरा, अपने घोड़े को सम्हाले वहीं डटा रहा। और अवसर पाकर उसने निश्शंक आगे बढ़ कर हाथी के सिर पर भाले का वार किया। लोग घबरा कर इधर उधर भागने लगे। हाथी को डराने के लिये पटाखे छोड़े गए, पर हाथी बढ़ता ही चला आया। उसने अपने बड़े बड़े दांतों की टक्कर से औरंगजेब के घोड़े को गिरा दिया। परन्तु बहादुर शाहज़ादा फुर्ती से उठ खड़ा हुआ और तलवार खींच कर क्रुद्ध हाथी पर वार करने लगा। इसी समय उसका भाई शुजा घोड़ा दौड़ा कर वहां आन पहुँचा

और हाथी पर भाले से चोट करने लगा। महाराज जयसिंह भी फुर्ती से आ गए और हाथी पर पिल पड़े। फिर भी हाथी पीछे न हटा। इसी समय 'सूरत सुन्दर' भी झूमता हुआ आ गया। भालों और तलवारों से घायल और पटाखों की आवाज से बौखलाया हुआ 'सुधाकर' चिंघाड़ता हुआ भागा। 'सूरत सुन्दर' ने उसका पीछा किया और शाहजादा औरंगजेब बच गया। बादशाह ने दौड़ कर उसे छाती से लगा लिया—और 'बहादुर' की पदवी देकर उसकी प्रशंसा की। पर इस अविवेकी साहस के लिए प्यार से उसे डांटा। तब औरंगजेब ने कहा—'इस लड़ाई में मैं यदि मारा भी जाता तो शर्म की क्या बात थी। मौत तो बादशाहों पर भी परदा डालती है।'

(३)

१३ दिसम्बर १६३४ को जब कि औरंगजेब केवल पन्द्रह बरस का था, उसे दस हजार घोड़ों का शाही मनसब मिला और इसके एक वर्ष बाद उसे तीन सेनाओं का अधिपति बनाकर बुन्देलखण्ड पर आक्रमण करने भेजा गया। इस मुहिम को उसने एक ही मास में जय किया, ओरछा का प्रसिद्ध मन्दिर ढहा दिया और एक करोड़ का लूट का माल ले वह पीछे फिरा।

(४)

१४ जुलाई १६३६ को औरंगजेब को दक्षिणी सूबों का सूबेदार बनाया गया। वहां की स्थिति बहुत पेचीली थी। अहमदनगर के निजाम शाही राज्य के अंतिम सुलतान हुसैन शाह कैद कर लिए गए थे। पर, बीजापुर और गोलकुण्डा के सुलतानों ने अपने राज्यों से संलग्न अहमदनगर राज्य के कुछ प्रदेशों पर अधिकार कर लिया था। शिवाजी के पिता शाहजी ने बीजापुर राज्य की सहायता से एक नए निजाम शाह सुलतान को अहमद-

नगर राज्य के सिंहासन पर ला बैठाया था, जो वास्तव में उनके हाथ की कठपुतली था। वास्तव में शाहजी ही तब अहमदनगर के अवशिष्ट प्रदेशों पर शासन कर रहे थे।

बादशाह शाहजहाँ ने सुव्यवस्था के विचार से दौलताबाद और अहमदनगर को खानदेश से पृथक करके स्वतन्त्र सूबा बना दिया था। सन् ३६ में स्वयं बादशाह ने पचास हजार मुगल सैन्य लेकर बीजापुर और गोलकुण्डा पर आक्रमण किया था। दोनों राज्यों ने पराजित हो मुगल राज की आधीनता स्वीकार कर ली थी। इस प्रकार दक्षिण में मुगल राज्य की सीमा निर्धारित कर तथा बीजापुर, गोलकुण्डा और अहमदनगर राज्यों को आधीन कर शाहजहां ने सन् ३६ में औरंगजेब को दक्षिण का सूबेदार बनाया था। औरंगजेब ने औरंगाबाद नगर बसा, उसे राजधानी बना, वहां का चातुर्यपूर्ण शासन किया।

(५)

२१ जनवरी सन् १६४७ में औरंगजेब को बल्ख और बदख्शां का सूबेदार तथा प्रधान सेनापति नियत किया गया। ये दोनों प्रान्त हिन्दुकुश पर्वत के उस पार काबुल के ठीक उत्तर में बुखारा राज्य के आश्रित थे। वहां का शासक सुलतान नजर मुहम्मद खां एक कमजोर और अयोग्य शासक था। उसके राज्य में निरन्तर विद्रोह होते रहते थे। ये दोनों प्रान्त तैमूर की राजधानी समरकन्द की राह में थे। और कभी इन पर बाबर का अधिकार रहा था। इसी दावे पर शाहजहां ने उन पर अधिकार करके अपनी सेनाएं भेजी थीं। पहले वहां मुराद बख्श को भेजा गया। पर वह मध्य एशिया में रहना नहीं चाहता था और उजबकों का सामना करने से हिचकता भी था। वह दो महीने वहां रह कर बिना बादशाह की आज्ञा

लिए वहां से भाग आया और तब औरंगजेब को वहां भेजा गया।

औरंगजेब को कभी न थकनेवाले चपल उजबकों से कठिन मोर्चा लेना पड़ा। और निरन्तर युद्ध करना पड़ा। कष्ट और कठिनाइयां बहुत थीं। एक-एक रोटी का मूल्य दो रुपया हो गया था और पानी भी ऐसा ही मंहगा मिलता था। पर औरंगजेब ने धीरज, दृढ़ता, और नियन्त्रण से सेना को नियन्त्रण में रखा। अन्त में नज़र मुहम्मद से संधि हो गई। इस युद्ध में धन-जन की बहुत हानि हुई। चार करोड़ रुपया खर्च हुआ और एक इन्च जमीन भी न मिली।

(६)

सन् १६४८ से ५२ तक वह सिन्ध और मुलतान का सूबेदार रहा। मुलतान और सिन्ध के प्रान्तों में बसनेवाली अफ़ग़ान और बलूच जातियां बहुत ही जंगली और पिछड़ी हुई थीं। मुग़ल साम्राज्य के इन सीमान्त प्रदेशवासियों को औरंगजेब नाम मात्र को साम्राज्य के आधीन कर सका। फिर भी उसने इस प्रान्त को बहुत व्यवस्थित किया और सिन्धु नदी के निचले भाग में एक नया बन्दरगाह स्थापित किया।

(७)

इस बीच वह ईरानियों से कन्धार छीनने दो बार वहां भेजा गया। भारतवर्ष में पश्चिमी दिशा से आनेवाले मार्ग के मुख द्वार पर स्थित तथा दक्षिण से काबुल को जानेवाली राह को रोकने वाला, कन्धार का यह किला, इन दो महत्त्वपूर्ण मार्गों की निगहवानी करता था। कन्धार से आगे पूरे ३६० मील तक समतल मैदान चला गया है। और उस मैदान के पच्छिमी छोर पर हिरात का प्रसिद्ध किला था। हिरात के पास

ही हिन्दुकुश की पर्वत श्रेणी की ऊंचाई कम होने लगती है जिस से मध्य एशिया और फारस से भारत पर आक्रमण करनेवालों को यहां हिन्दुकुश पार करने में कोई कठिनाई नहीं होती थी। हिरात से भारत को आनेवाली इसी राह पर स्थित होने के कारण कन्दहार का यह किला सैनिक दृष्टि से बहुत महत्त्व रखता था। उन दिनों काबुल का सूबा दिल्ली साम्राज्य में सम्मिलित था, इसलिए भारत की सुरक्षा के लिए कन्धार का किला सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण और अत्यावश्यक मोर्चे की श्रेणी में गिना जाता था।

इन दिनों हिन्द महासागर पर पुर्तगालियों की जल-सेना का एकाधिपत्य था। जिसके कारण भारत से फारस की खाड़ी तक के जल-मार्ग प्रायः बन्द से ही रहते थे। भारतवर्ष और मसाले उत्पन्न करनेवाले द्वीपों से पच्छिमी देशों में जाने वाला सारा व्यापारी सामान स्थल-मार्ग ही से मुलतान, पिशिन और कन्धार की राह ही फारस और योरोप जाता था। उन दिनों प्रतिवर्ष विभिन्न माल से लदे हुए कोई १४ हजार ऊट इस मार्ग से फारस जाते थे। इसी कारण कन्धार शहर उन दिनों अत्यन्त सम्पन्न और व्यापार का केन्द्र भी बन गया था। और उसका व्यापारिक महत्त्व भी उतना ही था जितना सामरिक। इस प्रकार इस भौगोलिक, आर्थिक और सामरिक स्थिति के कारण कन्धार का किला भारतवर्ष और फारस के महाराज्यों के बीच कशमकश का एक प्रधान कारण बन गया था। सन् १६२३ में जहांगीर के अन्तिम दिनों में ईरान के शाह अब्बास ने ४५ दिन घेरा डाल कर इसे जय किया था। इसके बाद वहां के ईरानी सूबेदार अलीमर्दानखां ने अपने स्वामी से विश्वासघात कर के यह किला चुपचाप शाहजहां को सौंप दिया था। परन्तु

ईरानियों ने ५७ दिन घनघोर युद्ध कर उसे फिर कब्जे में कर लिया था।

परन्तु केवल सामरिक और आर्थिक महत्त्व के ही कारण नहीं, अपनी प्रतिष्ठा और मर्यादा के विचार से भी अब यह आवश्यक हो गया था कि यह किला फिर मुगल छीन लें– शाहजहां के पुत्रों ने कन्धार के तीन घेरे डाले, पर सफलता नहीं मिली। पहिला घेरा जो सन् १६४६ में औरंगजेब और वजीर सादुल्ला खां के सेनापतित्व में डाला गया था उसमें ५० हजार मुगल सेना थी। जिसके साथ तोपखाना भी था। पर शाही सेना के सारे ही प्रयत्न विफल हुए। दूसरी बार किला लेने की तैयारियां और भी बड़े पैमाने पर की गईं—औरंगजेब और सादुल्ला खां ने सन् १६५२ में फिर किले को जा घेरा। दीवारों को ढहाने को तोपें काम में लाई गईं, और खाइयों तक खन्दकें खोदी गईं तथा खाई का पानी सुखाने के प्रयत्न किए गए। 'चेहल जीना' लगा कर बुर्जों पर चढ़ने की चेष्टा की गई। परन्तु ये सभी प्रयत्न व्यर्थ हुए। और दो महीने बाद शाही फौज पीछे फिर आई। निस्संदेह यह औरंगजेब की असफलता थी और बादशाह इस पर असन्तुष्ट भी हुआ। परन्तु इस असफलता का कारण दूषित युद्ध नीति भी थी।

(८)

कन्धार से काबुल लौट आने पर औरंगजेब को दूसरी बार सन् १६५२ में दक्षिण का सूबेदार बनाया गया।

सन् १६४४ में उसने जब दक्षिण की सूबेदारी छोड़ी थी तब से वहां की शासन-व्यवस्था बहुत ही खराब थी। यद्यपि इन सूबों में शान्ति बनी रही। किन्तु बहुत सी ऊपजाऊ जमीन

पड़ती रह कर जंगलों में बदल गई। किसानों की संख्या कम हो गई। उनकी आर्थिक स्थिति बिगड़ गई। इससे सूबो की आय भी कम हो गई। वहां कभी पूरी वसूली नहीं हुई, पर शाही खजाने का बहुत धन दक्षिणी सूबों पर खर्च होता था। सम्पूर्ण दक्षिणी सूबों की वार्षिक आय तीन करोड़ बासठ लाख रुपये थी, पर वसूल होता था एक करोड़ रुपयों से भी कम। इसलिए इन प्रान्तों में सुव्यवस्था बनाए रखने को अन्य समृद्धिशाली प्रान्तों की आय खर्च करनी पड़ती थी।

औरंगजेब को दक्षिण पहुंच कर सब से प्रथम इस कठिन आर्थिक परिस्थिति का सामना करना पड़ा। उसे खेतीबाड़ी सुधारने, उसे बढ़ाने और किसानों की दशा को सुधारना था, पर इस के लिये पर्याप्त धन चाहिए था। निरन्तर युद्धों के कारण प्रान्तों में अराजकता फैली हुई थी, और देश उजाड़ हो गया था। दश वर्षों से भी अधिक काल से शासन-प्रबन्ध अव्यवस्थित था।

परन्तु औरंगजेब का साहस और धैर्य तथा बुद्धिबल सर्वत्र कार्य करता था। उसने नए सिरे से जमीन का बन्दोबस्त किया और मालगुजारी व्यवस्था स्थापित की। इस काम में खुरासान के मुर्शिद कुली खां ने—जो कन्धार से वहाँ के ईरानी सूबेदार अलीमर्दान खां के साथ ही भाग आकर भारत में बस गया था—औरंगजेब की भारी सहायता की। यही विचक्षण प्रबन्धक पुरुष दक्षिण में औरंगजेब का दीवान था।

इससे पहिले दक्षिण में मालगुजारी की कोई स्थायी व्यवस्था न थी। जमीन को अलग अलग विभागों में बांट कर उनकी सीमाएं निश्चित करना, खेतों का क्षेत्रफल मापना, प्रति-बीघा के हिसाब से मालगुजारी निर्धारित करना, अथवा माल-

गुजार और किसानों के बीच कुल उपज के बटवारे आदि के तरीके-कायदे निश्चित करना इन सब बातों को औरंगजेब ने दक्षिण में जारी किया। पहिले वहां का किसान एक हल और एक जोड़ी बैल से मनचाही जमीन जोत-बो लेता था। और प्रति हल के हिसाब से राज्य को थोड़ा सा कर दे देता था। माल-गुजारी की दर भिन्न भिन्न थी, जो शासकों की इच्छानुसार होती थी। किसान बरसों तक लगातार वर्षा के अभाव और निरन्तर मुगलों के साथ होते रहते युद्धों से पूरे बर्बाद हो चुके थे। वे घर-बार छोड़ भाग गए थे, गांव उजाड़ पड़े थे। खेत जंगल हो गए थे। औरंगज़ेब ने इस नए सुधार को योग्य हाकिमों की देखरेख में व्यवस्थित किया। सब जगह चतुर अमीनों तथा ईमानदार पैमाइश करने वालों—जमीन नापनेवालों—खेतों के रक़बे आदि का ठीक लेखा-जोखा रखने तथा खेती की जमीन को पहाड़ी भूमि से तथा नदी-नालों से पृथक निश्चित करने के लिए उपयुक्त कार्यकर्त्ता निश्चित किए। गांव के मुखिया मुकद्दम वहाँ के चरित्रवान जनों को बनाया। शाही खजाने से, खेती के पशु, बीज और तकाबी दी। इससे देखते-ही-देखते दक्षिण के उजाड़ गांव आबाद हो गए और खेत लहलहाने लगे।

उसने दक्षिण में राज्यशासन में भी भारी सुधार किए। अयोग्य—बूढ़े लोगों को हटा कर महत्त्वपूर्ण पदों पर विश्वसनीय और योग्य अधिकारी नियुक्त किए। सैनिक संगठन को कुप्रबन्ध से दूर किया और अनुभवी सेनानायकों की नियुक्ति की। किलों के शस्त्रागारों, अन्न भण्डारों को सुव्यस्थित किया तथा उन्हें सम्पन्न किया। बढ़िया तोपची और गोलंदाज नियुक्त किए। अयोग्यों को अलग किया। इससे जहां फौज व्यवस्थित हो गई वहां खर्च में ५० हजार रुपया सालाना की बचत भी हुई।

(९)

अन्त में वह समय भी आया जब वह अपनी सब से बड़ी मुहिम पर संसार का सब से बड़ा बादशाह होने को दक्षिण से चला। विजय ने उसके चरण चूमे और उसने भाइयों के रक्त से सने हाथों को धो पोंछ कर पचास वर्ष उन्हीं हाथों से मुगल साम्राज्य का महान् चक्र चलाया।

(१०)

इस महान् बादशाह का चरित्र ही सत्रहवीं शताब्दी के पिछले पचास वर्षों का भारतवर्ष का इतिहास है। भारत के इतिहास में उसका शासन-काल बहुत महत्त्वपूर्ण है। उसके आधिपत्य में ही मुगल साम्राज्य की सीमाएं अपनी अंतिम हद को पहुंच गई थीं। गजनी से लेकर चटगांव तक और काश्मीर से लेकर कर्नाटक तक भारत महादेश इसी एक शासक के आधीन था। इस्लाम ने अपना आखिरी जोश इसी शासन काल में पूरा किया। इस अभूतपूर्व विस्तृत साम्राज्य की राजनैतिक एकता अक्षुण्ण थी। इसके साम्राज्य में विभिन्न प्रान्तों का प्रबन्ध छोटे छोटे स्वाधीन राजाओं के हाथ में न रह कर सीधा बादशाह द्वारा नियुक्त कर्मचारियों द्वारा ही होता था। और इसी से इतिहासकार इसके साम्राज्य को अशोक, समुद्रगुप्त या हर्ष के साम्राज्य से कहीं अधिक विशाल और परिपूर्ण कहते हैं। इसी बादशाह के शासन काल में दो महान् घटनाएं हुईं—एक दक्षिण में अल्पकालीन मराठा राजवंश के भग्नावशेषों से मराठा-राष्ट्रीयता का उदय हुआ और दूसरे उत्तर में सिख सम्प्रदाय ने सैनिक रूप धारण कर मुगल साम्राज्य के विरुद्ध तलवार उठाई। इस प्रकार अठारहवीं-उन्नीसवीं शताब्दियों में विकसित प्रमुख भारतीय ऐतिहासिक घटनाओं का प्रारम्भ भी इसी महान् सम्राट के राज्यकाल में हुआ।

इसी सम्राट के जीवन काल में मुगल तख्त डगमग होने लगा। साम्राज्य के खजाने और गौरव का दिवाला निकल गया। शासन-व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गई। और मुगल राज-सत्ता देश में शान्ति और राज्य की एकता बनाए रखने में असमर्थ हो गई। भारत के भावी शासकों के पैर भारत में जम गए। ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने सन् १६५३ ई० में मद्रास प्रान्त, १६८७ में बम्बई और १६९० में कलकत्ता प्रेसेडेन्सी की नींव डाली। जिससे उन योरोपीय आश्रय स्थानों ने साम्राज्य के भीतर दूसरे स्वाधीन राज्य का रूप धारण कर लिया। सत्रहवीं शताब्दी के आखीर में मुगल साम्राज्य की जड़ें खोखली हो चली थीं। खजाना खाली पड़ा था, मुगल सेना दुश्मनों से पराजित व अपमानित हो चुकी थी। देश में खण्ड राज्य स्थापित होने लगे थे। मुगल साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो रहा था। साम्राज्य का नैतिक पतन हो चुका था। लोगों की निगाह में मुगल साम्राज्य के प्रति आदर का भाव नाम मात्र को भी न था। सरकारी कर्मचारी ईमानदारी व कार्यकुशलता खो चुके थे, न मन्त्री शासनपटु थे, न राजा। सेना निस्तेज-निर्बल और अनियन्त्रित थी। आगे चल कर नादिरशाह और अहमदशाह ने मुगलों की महिमावती राजधानी दिल्ली और मुगल सम्राट की इज्जत खराब करके उसकी महत्त्वहीनता सिद्ध कर दी।

औरंगजेब निर्बुद्धि, आलसी और व्यसनी न था। उसकी मानसिक सतर्कता प्रसिद्ध थी। वह गम्भीर मनन और गहरी लगन से राजकाज देखता था। मानवीय ज्ञान उसका सम्पूर्ण था। युद्ध और कूटनीति का भी वह विशारद था फिर भी इस बड़े बादशाह के पचास वर्ष के शासन का परिणाम निकला असफलता-अशान्ति-पतन !!!

(११)

यह राजनैतिक वैषम्य भारतीय राजनीति और इतिहास के विद्यार्थी के लिये मनन करने योग्य है। औरंगजेब की जीवनी एक ऐसे भाग्यहीन मनुष्य की जीवनी है जो जीवन भर निष्ठुर भाग्य के साथ लड़ता और पराजित होता रहा। उसके पचास वर्ष के कठोर शासन का अन्त घोर असफलता में हुआ। उसके जीवन के प्रारम्भिक चालीस वर्ष इस महान् साम्राज्य के योग्यतम सम्राट बनने योग्य आत्मशिक्षण में बीते! एक वर्ष तख्ताऊस के लिऐ कठिन युद्ध में बीता। जिसमें उसकी सारी शक्तियों की परीक्षा हो गई। यद्यपि उसके शासन के प्रारम्भिक २३ वर्ष शान्त और समृद्ध व्यतीत हुए। जब कि वह उत्तर भारत की राजधानियों में ठाठ से रहा। उसके सब शत्रु नष्ट हो चुके थे। उसके सतर्क शासन के संकेत पर भारत का विशाल साम्राज्य-चक्र चल रहा था। धन-धान्य बढ़ रहे थे। और यह दुर्भागी बादशाह कीर्ति और ऐश्वर्य के सर्वोच्च शिखर पर पहुँच गया था।

परन्तु मुगल खून का प्रभाव ही उसका दुर्भाग्य बन गया। और उसी का पुत्र मुहम्मद अकबर उसका विद्रोही बन बैठा। इस विद्रोही शाहजादे ने मराठा राजा की शरण ली और वह औरंगजेब को दक्षिण खींच ले गया। जहां उसके २६ वर्ष व्यतीत हुए। साम्राज्य का खजाना, सेना का संगठन और बादशाह का स्वास्थ्य दक्षिण के असफल युद्ध में बर्बाद हो गया।

अभी भी ऊपरी दृष्टि से सब ठीक सा लग रहा था। बीजापुर और गोलकुण्डा मुगल साम्राज्य में मिल गए थे। मराठा राजा मार डाला गया था, और उसकी राजधानी जय हो चुकी थी। तथा उसका सारा कुटुम्ब बन्दी बना लिया गया था। प्रगट

में औरंगजेब एक विजयी सम्राट ही प्रतीत होता था। परन्तु उसके अन्तिम जीवन के १८ वर्ष अपने विरुद्ध एकत्रित जटिल शक्तियों से संघर्ष करने में और उसमें निरन्तर असफल होने में बीतते चले गए। उसने बहुत चालें बदलीं, अनेक नए साधनों और उपचारों का प्रयोग किया। वह ८२ वर्ष की आयु में स्वयं युद्धस्थल में उतरा, परन्तु बेकार !!!

अन्त में मृत्यु ने उसका दामन पकड़ा। और अहमदनगर में उसकी जिन्दगी का सफर खत्म हुआ !!!

ज्ञानधाम
दिल्ली-शाहादरा
प्रथम नवसक
सं० २००८

चतुरसेन

१

दिल्ली में उत्साह की लहर

सन् १६५६ की सातवीं जुलाई को दिल्ली की सब शाही कचहरियां बन्द थीं। कुल दफ्तरों की छुट्टियां थीं। बादशाह शाहजहाँ की आज्ञा से तमाम हिन्दू मन्दिरों में विशेष आरती हो रही थी। उनके शंख और घड़ियालों के तुमुल नाद से नगरनिवासी उस दिन बहुत जल्द जग गए थे। सारे नगर में एक चहल-पहल मच गई थी, तमाम मस्जिदों में सामूहिक प्रार्थनाएँ हो रही थीं, सारा शहर कई दिन से सजाया जा रहा था। बाजार की सफाई हो गई थी, और तमाम आम रास्ते रंग-बिरंगी झन्डियों से सजाए गए थे। सड़कों पर पिछली रात से ही छिड़काव हो रहा था। सरकारी बर-कन्दाज और प्यादे दौड़-धूप करके बन्दोबस्त कर रहे थे। अमीर उमराव सज-धज कर लवाजमे के साथ भाँति-भाँति की सवारियों पर किले की ओर जा रहे थे। क़िले की सड़क हाथियों, पालकियों, और घोड़ों की सवारियों से भरी हुई थी। रंग-बिरङ्गी पोशाकें पहने झुन्ड के झुन्ड नागरिक क़िले की ओर तेजी से जा रहे थे। क़िले में आज एक बड़ा भारी दरबार होने वाला था, जिसमें शरीक होने के लिये बादशाह सलामत ने हर ख़ासोआम को हुक्म दिया था। इस खुशी के कारण का ठीक ठीक पता किसी को न था। लोग आपस में पूँछ-ताछ कर रहे थे, बहुत लोग बहुत तरह की बातें कर रहे थे। गप्पी लोगों को गप्प उड़ाने का काफी मसाला मिल गया था। जो जिसके मन में आता था बकता था। कोई कहता था, हज़रत शाहज़ादा दारा शिकोह आज बड़ी भारी मुहिम फ़तह करने के लिए कंच करने वाले हैं। कोई कहता था, जी नहीं

पनाहे आलम बादशाह सलामत ने एक बड़े सरकश हिन्दू राजा को फ़तह किया है, और वह आज हाथ बांध कर दरबारे आम में शाही हुजूर में हाजिर किया जायगा। बहुतों का यह ख्याल था कि छोटे शाहजादे औरंगजेब गोलकुण्डा के बादशाह को फ़तह करके आ रहे हैं, उनके इस्तक़बाल में यह खुशी मनाई जा रही है। कुछ कह रहे थे, नहीं जी, आज बादशाह सलामत अपने बड़े फर्जन्द वालिऐ तख्त शाहज़ादा दारा को बादशाहत सौंप कर बाक़ी जिन्दगी खुदा की बन्दगी और अपनी प्यारी बेगम मुमताज महल की याद में बिताने ताजमहल में तशरीफ़ ले जा रहे हैं।

भीड़ बढ़ती ही जाती थी। किले की ओर जानेवाली सड़क जन-समूह से खचाखच भरी थी। उनकी रंग-बिरंगी पोशाकों की अजब छटा थी। चूंकि आज के दरबार में सम्मिलित होने की घोषणा मुनादी द्वारा देहातों तक करा दी गई थी इसलिए हज़ारों मनुष्य बाहर से भी आ गए थे। नगर की गलियों से जन समूह उमड़ता हुआ क़िले की ओर जानेवाली प्रशस्त सड़क पर एकत्र हो रहा था। जैसे नदियों का जल समुद्र में एकत्र होता है। लोगों की चीख-चिल्लाहट, हँसी, पैरों की खटपट, धक्कम-धक्का तथा शोरोगुल के मारे कान नहीं दिया जाता था। बीच-बीच में घुड़-सवार सिपाही बरकंदाज व्यवस्था स्थापित करने और लोगों को भीड़ में कुचले जाने से बचाने के लिए एकाध चपत या चाबुक भीड़ में कभी-कभी चला देते थे। लोग चपत और चाबुक की चोट सहते, धक्के खाते, कुहनियों की चोट सहते, चीखते-चिल्लाते, भाँति-भाँति की गप और अटकल लड़ाते किले की ओर बढ़े चले जा रहे थे।



२

आम खास का दरबार

दिल्ली का यह अति सुदृढ़ लाल किला बादशाह शाहजहां ने जमुना किनारे आगरे के भव्य लाल किले के अनुरूप बनवाया था। उस समय उत्तम से उत्तम इमारती सामान जो कुछ भी उपलब्ध हो सकते थे, वे सब इस किले के बनाने में काम में लाए गए थे। सम्राट शाहजहाँ ने उसे अति भव्य बनाकर अटूट सम्पदा और देश-देश की वैभव-सामग्री से भर दिया था। इस किले की विशाल आकृति तथा सुन्दर और चित्ताकर्षक सौन्दर्य देख कर दर्शक मुग़ल वैभव पर उंगली दांतों दबाते थे। क़िले के नीचे जमुना का श्यामल जल कलकल करके बहता था। उसमें किले का स्वच्छ लाल कम्पित प्रतिबिम्ब एक अलौकिक शोभा का विस्तार करता था। यह क़िला उस काल के शिल्प-कौशल का एक असाधारण विराट नमूना था। जिस काल का वर्णन हम कर रहे हैं, उस समय से कुछ पूर्व ही वह बनकर तैय्यार हुआ था। उसकी विस्तृत खाई, जो तीन तरफ से इसे घेरे हुए थी, सदा जल से भरी रहती थी और उसकी मजबूत चौड़ी दीवार इतनी ऊंची और दुरुह थी कि मुख्य द्वारों को छोड़ कर और किसी तरफ़ से क़िले में प्रविष्ट होना असम्भव ही सा था। मुख्य द्वारों पर प्रवेश पथ थे। सदैव बारी बारी से एक दरबारी सरदार सैन्य सहित पहरे चौकी दिया करता था, और उसे इस प्रकार सावधान रहना पड़ता था कि उसकी दृष्टि से छिपकर किसी का क़िले में घुसना सम्भव न था। दीवार से कुछ ही फासले पर खाई के पास दूर तक बारकें बनी हुई थीं जो पहरे चौकी करने वाले सैनिकों के विश्राम के लिए थीं।

आम खास का दरबार आज खास तौर पर सजाया गया था। उसका प्रत्येक खम्भा ज़री के काम के बहुमुल्य परदों से मढ़ा गया था। छत में रेशमी चँदोवे लगे थे, जिसमें रेशम और जरी के फुंदने टंके हुए थे। फर्श पर बहुत बढ़िया नर्म रेशमी कालीन बिछे थे। बाहर एक बड़ा भारी खीमा खड़ा था जो सहन में आधी दूर तक फैला हुआ था। उसके चारों ओर चांदी की पत्तियों से मंढ़ा हुआ कटहरा लगा था। इस खीमें में लकड़ी के तीन बड़े खम्भे जड़े थे जो दूर से जहाज की मस्तूल की भांति दीख पड़ते थे। इस खीमे के बाहर की ओर लाल रंग का कपड़ा लगा था और भीतर मछलीपट्टम की छींट थी। यह छींट इसी काम के लिऐ तैयार कराई गई थी। उसके बेलबूटे ऐसे प्राकृत थे और उनका रंग ऐसा चटकीला एवं स्वाभाविक था कि देखते ही बनता था।

अमीरों को खास तौर पर इस अवसर पर हुक्म दिया गया था कि आम खास के चारों ओर की महराबें अपने खर्चे से सजावें। उन्होंने शाही कृपा प्राप्त करने के लिऐ एक से एक बढ़कर अपनी अपनी महराब सजाई थी। आम खास की सारी दीवारें कमखाव और जरी के काम के दुशालों से ढक गई थीं और जमीन बहुमूल्य सुन्दर कालीनों से भर गई थी।

३

तख्ते ताऊस

सम्राट अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ ने तीन पीढ़ियों में बहुत से रत्न हीरे-मोती जमा किए थे। बादशाह ने सोचा इन रत्नों को यदि लोगों ने नहीं देखा तो फिर बात ही क्या? उस समय बादशाह के पास ५ करोड़ रुपयों के जवाहरात थे। इनमें दो करोड़ रुपये मूल्य के जवाहरात हरम में दासियों के पास रहते थे

शेष तीन करोड़ रुपये मूल्य के रत्न बाहर क्रीत दासों के पास रहते थे। इनके सिवाय दो करोड़ मूल्य के रत्न शाहजादों, शाहजादियों तथा अन्य लोगों के पास थे।

बादशाह ने क्रीत दासों के पास जो रत्न थे उनमें से कुछ उत्तम रत्न जिनका मूल्य सोलह लाख रुपया था—चुन कर निकाल लिए और सरकारी सुनारों को बुलवाकर वे सब रत्न तथा एक लाख तोला सोना जिसका मूल्य उन दिनों सिर्फ चौदह लाख रुपया था, देकर सुनारों के प्रधान बेबादल खाँ को हुक्म दिया कि ठोस सोने का एक ऐसा रत्न जटित सिंहासन तैयार करो जैसा पृथ्वी पर किसी बादशाह के पास न हो।

बेबादल खाँ ने दो सौ चुने हुए कारीगरों की सहायता से आठ वर्ष में वह तख्ते ताऊस तैयार किया था। यह सिंहासन साढ़े तीन गज लम्बा और सवा दो गज चौड़ा तथा पाँच गज ऊंचा था। सिंहासन की छतरी के नीचे के हिस्से में मीनाकारी की हुई थी। छतरी के भीतर बहुत कम हीरे जड़े थे परन्तु ऊपरी हिस्से में असंख्य बहुमूल्य पत्थर लगाए गए थे। पन्ने के बारह खम्भों पर सिंहासन की छत थी। उसके ऊपर मणि मुक्ता के दो मोर बने हुए थे। इन मोरों के बीच में हीरा जड़ा एक वृक्ष बना था। गद्दी पर चढ़ने को तीन सीढ़ियाँ थीं, सीढ़ियाँ रेलिंग से घिरी थीं। केवल सम्राट की बैठक के सम्मुख रेलिंग नहीं थी। रेलिंग के भीतर सम्राट के बैठने को मसनद था। इस बैठक के बनाने में दस लाख रुपए खर्च हुए थे। इसमें एक ऐसी मणि जड़ी थी जिसका अकेली का ही मूल्य एक लाख रुपया था। इस मणि को फारस के शाह अब्बास ने सम्राट जहाँगीर को उपहार में दिया था। इस में तैमूर, मीर शाहरुख, मिर्ज़ा उल्लुक बेग, शाह अब्बास, जहाँगीर और शाहजहाँ के नाम खुदे हुए थे। सिंहासन के भीतर हाजी मुहम्मद जान कुदशी की बनाई हुई चालीस पंक्तियों की एक कविता मीनाकारी के

अक्षरों में खुदी हुई थी। कविता के शेष तीन शब्द थे—औरंग-इ-शाहंशा-इ-आदिल, अर्थात् न्यायपरायण राजाधिराज का सिंहासन।

सुनारों के वेतन को छोड़कर केवल सिंहासन बनाने के मसालों को खरीदने में एक करोड़ रुपया खर्च हुआ था।

विश्व के महार्घ रत्नों से निर्मित वह अप्रतिम सात करोड़ मूल्य का सिंहासन वास्तव में आत्मीयों के रक्त से निर्मित हुआ था।

आज पहली बार ही बादशाह सलामत इस अलौकिक सिंहासन पर बैठकर दरबार करने वाले थे। इस अलौकिक तख्त को देखने के लिऐ छोटे बड़े सब लोग बहुत उत्सुक थे। तख्त पर तीन मसनद निहायत नर्म मखमल के पड़े थे। एक बड़ा था जो पांच बालिश्त गोल था, यह बादशाह की पीठ के सहारे के लिए था। दो गोल और थे जो दोनों बाजुओं में रखे थे। नीचे एक अति बहुमूल्य चटाई पर कारचोबी काम की गद्दी बिछी थी। तख्त के इर्द गिर्द एक कदम के फ़ासले पर एक ऊंचा सुनहरी जंगला था जिसमें केवल शाहजादे ही जा सकते थे। इसी स्थान पर वे लोग तसलीमात बजाकर तख्त के नीचे खड़े हो सकते थे। तख्त के पीछे बहुत से कहावर गुलाम छाते, छतरियां, पीकदान, हुक्का, पानदान, तलवार, चौरी आदि लिये मुस्तैद खड़े थे। तख्त से नीचे वजीर और बड़े बड़े उमराओं के लिऐ जगह थी जो एक रूपहले कटहरे से घिरी थी। अमीर और वजीर अपनी जगह पर चुपचाप भारी भारी क़बे पहने नीचे सिर झुकाए और दोनों हाथ कुहनियों पर रखे खड़े थे। कटहरे के चारों ओर गुर्जबर्दार लोग मुस्तैद थे। उनके हाथों में सुनहरे गुर्ज थे, वे बड़ी फुर्ती से शाही अहकाम शाहजादों, वजीरों और सिपहसालारों तक पहुँचा रहे थे। इससे एक क़दम पीछे हटकर खुला स्थान था, जहां फौज के अफ़सर और अन्य अमीर खड़े थे। यहां भी वैसे ही गुर्जबर्दार हाजिर थे, जो दरबारी

आज्ञाओं को सूबों के हाकिमों, सिपहसालारों और शाहजादों तक उसी भांति पहुँचा रहे थे। इनके चारों तरफ शिंगरफ़ी रंग का नक्काशी के काम का लकड़ी का जंगला था जो सारे दरबार को चारों ओर से घेरे हुए था।

जिस जगह पर यह तख्त बिछा था, उसमें बीस जड़ाऊ स्तून थे, जिन पर उस आमख़ास की छत थी। यह छत उस तमाम जगह पर फैली हुई थी जिसमें रूपहली जंगला लगा था। इसके आधे भाग में ज़रबफ़्त का एक कीमती शामियाना लगा था। शाही तख्त के ऊपर एक और अत्यन्त कीमती शामियाना था जो सोने के स्तूनों पर खड़ा था। लकड़ी के जंगले के बाहर एक विस्तृत मैदान था, जहाँ सजे सजाये नौ घोड़े एक तरफ और नौ ही दूसरी तरफ खड़े थे। इनके बाद ही चार बड़े बड़े हाथी खड़े थे जो सिर से पैर तक सुनहरी झूलों से सजे थे, ये हाथी बादशाह सलामत को सलाम करने की रस्म अदा करने के लिए लाए गए थे। इनके बाद बहुत से पहरेदार सिपाही सफ बांधकर खड़े थे। सबके अन्त में एक बड़ा भारी दालान था जहाँ ८० प्रकार के बाजे वाले मुस्तैद खड़े थे। बादशाह के आते ही ये बाजे बजाए जानेवाले थे। कुछ अफसर सब व्यवस्था की निगरानी मुस्तैदी से कर रहे थे। दरबार में आश्चर्यजनक सन्नाटा और व्यवस्था थी। प्रबन्ध के लिऐ जो नकीब फिर रहे थे, उनके हाथ में सुनहरी आसे थे, वे रूपहली जंगले के भीतर भी आ-जा सकते थे। ये लोग अत्यन्त सावधानी से देख रहे थे कि कोई ऐसा काम, जिससे बादशाह अप्रसन्न हों, न होने पाए।

तख्त के बिलकुल निकट सुनहरी कटहरे से सटकर, तख्त के नीचे और एक छोटा सा तख्त था जो शाही तख्त के समान ही इस समय सूना था। यह तख्त बादशाह के बड़े पुत्र शाहजादा दारा के लिए था—जिसके वली अहद होने की घोषणा

बादशाह कुछ दिन प्रथम कर चुके थे, और जिसे अकेले को ही केवल बादशाह के दरबार में बैठने का सम्मान प्राप्त था।

४

बादशाह सलामत

दरबार में हजारों आदमी आ चुके थे। फिर भी भीड़ बढ़ती ही जा रही थी। इतना होने पर भी सर्वत्र गजब का सन्नाटा था। सब व्यवस्था एक जादू की भांति हो रही थी। और सब लोग बादशाह सलामत के आने की प्रतीक्षा में चुपचाप खड़े थे।

एकाएक तमाम बाजे बड़े जोर से बज उठे। कटहरे के बाहर खड़े हाथियों ने महावतों का संकेत पाकर सूड़ें उठा उठा कर बादशाह सलामत को सलाम करना प्रारम्भ किया। धीरे धीरे बादशाह हवादान पर सवार होकर रंगमहल से निकलते दीख पड़े। तातारी युवतियाँ हवादान को उठा रही थीं। आगे पीछे खोजे नंगी तलवार लिए चल रहे थे। उनके पीछे गुलाम–छाते, छतरियाँ, पानदान, पीकदान, तलवार और चौरी लिए आ रहे थे। नकीबों ने ललकार कर आवाज लगाई "अदब होशियार—निगाह बराबर" सब लोग जमीन पर दृष्टि दिए झुककर तस्वीर की भांति खड़े रहे। बादशाह तख्त पर आकर बैठ गए। बादशाह की पोशाक एक बहुत सुन्दर फूलदार रेशम की बनी थी और उस पर बहुत अच्छा ज़री का काम किया हुआ था। सिर पर जरी का मन्डील था, जिस पर बड़े २ बहुमूल्य हीरों का तुर्रा लगा था। उसमें एक पुखराज तो ऐसा था जिसकी जोड़ का पत्थर संसार में न था, वह सूर्य की भांति चमक रहा था। उनके गले में बड़े बड़े मोतियों का कण्ठा था जो पेट तक लटकता था।

बादशाह ने इस समय अपने सिर, गले, बाँह और कमर में जो रत्न धारण किए थे उनका मूल्य दो करोड़ रुपए था। पगड़ी के सरपेंच में बहुत दाम के अलभ्य रत्न लगे हुए थे। इसमें ५ बड़ी बड़ी चुन्नियाँ और चौबीस मोती थे। बीच वाली का ही वजन २२८ रत्ती और मूल्य २ लाख रुपए था। सरपेंच का मूल्य सब वस्तुओं के साथ १२ लाख रुपये प्रथम ही था, आज इस दरबार की खुशी में बादशाह ने इसमें चालीस हजार रुपये मूल्य का एक दैदीप्यमान मुक्ता जड़वाया था, यह मुक्ता सरपेंच की सब से बड़ी चुन्नी से कुछ छोटा था। इस दरबार के उपलक्ष में एक अलौकिक चुन्नी जो ४७ रत्ती वजन की थी और मूल्य में ५३ लाख रुपये की थी—युवराज दारा ने बादशाह को नजर की थी। और बादशाह उस सूर्य के समान दैदीप्यमान चुन्नी को सरपेंच में लगाकर सिंहासन पर सुशोभित हुए थे। सम्राट के रत्नागार का सबसे बड़ा हीरा जिसका वजन ४३० रत्ती और मूल्य दो लाख रुपया था वह भी सरपेंच में लगा हुआ था। सम्राट के हाथ में जो तसबीह थी उसमें ५ चुन्नी और तीस मोती पिरोए हुए थे। प्रत्येक दो दानों के बीच में एक एक याकूत था। तसबीह के सुमेरु का वजन ३२ रत्ती और मूल्य ४० हजार रुपये था। समूची माला का मूल्य बीस लाख रुपये था।

बादशाह का चेहरा अत्यन्त गम्भीर और प्रभावशाली था। बादशाह की आयु सढ़सठ वर्ष की थी। उनके सिर और दाढ़ी के सब बाल सफेद हो गए थे किन्तु चेहरा सुर्ख और दृष्टि सतेज थी। सबसे पहिले शाहजादा दारा ने सहमते सहमते सामने आ, जंगले के पास खड़े होकर झुक कर आदाब बजाया। फिर रूपहले कटहरे से कुछ कदम आगे बढ़कर सुनहरे जंगले के पास पहुँचकर तीन बार सलाम किया, और पीछे हटकर अपनी जगह पर बैठ गया।

एकाएक दरबार के बाहर बहुत सा शोर हुआ। कदम बढ़ाते बहुत से गुर्जबर्दारों ने आगे बढ़कर रास्ता किया। नक़ीब ने हाथ ऊंचा करके आवाज लगाई और एक सतेज वृद्ध बहुमूल्य श्वेत वस्त्र पहने धीरे-धीरे दरबार में आगे को बढ़ा। यह आदमी ठिगना-पतला और फुर्तीला था। उसका रंग गोरा, नाक उभरी हुई और माथा चौड़ा था। वह एक बहूमूल्य हीरों का सरपेंच पगड़ी में लगाए था। उसके गले में भी हीरों का एक अमूल्य कण्ठा था। उसका कमरबन्द कीमती रत्नों से जड़ा था। उसके दरबार में आते ही हलचल मच गई। प्रत्येक व्यक्ति उस प्रभावशाली वृद्ध पुरुष को कौतुक और आश्चर्य से देखने लगा। हजारों दृष्टि उसपर केन्द्रित हो गईं।

असल में यही वह व्यक्ति था जिसके स्वागत के लिऐ आज के दरबार की धूमधाम की गई थी। इस आदमी का नाम मीरजुमला था और यह गोलकुण्डा के बादशाह का प्रधान वजीर था। इसी के लिए बाजार, शहर, किला और दरबार ठीक उसी भाँति सजाए गए थे जोकि खास बादशाह के लिए सजाए जाते हैं। मीरजुमला के पीछे कई शाही अमीर थे जो बादशाह के हुक्म से उसके स्वागत के लिऐ भेजे गए थे। मीरजुमला पहले चौखटे के निकट, बादशाह से कोई पचास फुट के अन्तर पर आकर खड़ा हो गया। फिर उसने तीन बार जमीन तक झुककर बादशाह को आदाब अर्ज किया। बादशाह ने नजर उठाकर मीरजुमला की ओर देखा और मुस्कुराया। मीरजुमला आगे बढ़ा और सुनहरी कटहरे के पास जाकर उसने फिर तीन बार झुककर बादशाह को सलाम किया। अन्त में झुककर तख्त को चूम लिया। फिर उसने साढ़े बारह लाख रुपये की अशर्फियां, कुछ अच्छे मोती और १ लाल बादशाह को नजर किया। जिसका मूल्य १ लाख रुपया था। इसके सिवा सोलह चुने हुए असील नस्ल के अरबी घोड़े, ६ जड़ाऊ

तलवारें और एक हीरों का हार बादशाह की सेवा में पेश किया। साथ ही बहुत से थाल जो फलों और मेवों से भरपूर थे, नजर किए। इसके बाद वह दस कदम पीछे हटकर रूपहले कटहरे के भीतर वजीरों की बगल में खड़ा हो गया।

तमाम दरबार में सन्नाटा छाया था। बादशाह ने धीमे स्वर से कहा—"अमीर मीरजुमला, तुम्हारी बहादुरी, वफादारी और लियाकत, जो तुमने बींदर के किले को फतह करने में प्रगट की है, को देखकर हम तुम्हारे निहायत मश्कूर व ममकून हैं, और इस खैरख्वाही और खिदमत के सिले में हम तुम्हें वजीरे आज़म और मुअज्जम खां का खिताब अता फर्माते हैं।"

मीरजुमला कुछ कदम फिर आगे बढ़ा और फिर तीन बार बादशाह को सलाम करके बोला—"जहांपनाह की कद्रदानी और नजरे इनायत का यह खादिम तहेदिल से शुक्रिया अदा करता है। और अपनी दिली आर्जू अर्ज करता है कि हज़रत सलामत ताजीस्त इस गुलाम को जांनिसार ही पाएँगे।"

बादशाह कुछ देर चुपचाप मुस्कुराते रहे। फिर उन्होंने कहा—"बेशक, हमें यही उम्मीद है। और हमारी मन्शा है कि तुम्हारे जेर कमान एक बड़ी फौज शाहे फारस पर भेजें। हमने उस बादशाह से कन्धार छीनने का, मुद्दत हुई कस्द किया था। और अब वह वक्त आया है कि हम तुम्हें इस मुहिम पर भेजें। इसके लिए उम्दा शाही तोपखाना और चुनींदा रिसाला हमने रवाना कर दिया है।"

मीरजुमला क्षण भर चुप-चाप सिर नवाए खड़ा रहा। फिर उसने धीरे से अपने वस्त्रों में से एक तेजस्वी हीरा निकाला—जो नारियल के समान था। वह बिना तराशा हुआ जवाहर था। उसके प्रकाश से दरबार जगमगा उठा। और सब दरबारी उस अद्भुत रत्न को आश्चर्य और कौतुक की नजर से देखने लगे।

मीरजुमला ने अदब से आगे बढ़कर दोनों हाथों में वह रत्न उठा कर बादशाह की सेवा में पेश करके कहा—'जहांपनाह, जिस तरह हुजूर तमाम दुनिया के बादशाहों में सबसे बड़े हैं, उसी तरह यह जवाहर भी तमाम दुनिया के जवाहरात का सरताज है। इसका वजन ३६० केरट है और ऐसे जवाहरात हुजूर ही जैसे शहनशाहों की सेवा में रहने लायक हैं। कन्धार की राजधानी में अगर इस किस्म के जवाहरात पैदा होते हों तो हुजूर जरूर ही वहां तशरीफ ले जाएं या किसी मर मिटने वाले खादिम को भेजने की तकलीफ गवारा करें। लेकिन इस गुलाम की तो आर्जू यह है कि हुजूर उन मुल्कों को फतह करने का इरादा फरमाएं, जहां ऐसे-ऐसे बेशकीमती जवाहर सचमुच पैदा होते हैं; गोलकुण्डा, बीजापुर, जंजीवार, सीलोन इस किस्म के मुल्क हैं।'

यह कहकर उसने एक बार अपना हाथ ऊपर को उठाया—जिसमें वैसे ही बड़े-बड़े हीरों के भुजबंध बंधे थे। फिर उसने भेद-भरी नजर से बादशाह की ओर देखकर जरा धीमे स्वर में कहा—'आलमपनाह, बेअदबी माफ हो, कन्धार के कंकड़ पत्थरों की बनिस्बत, जहां चढ़ाई करने का जहांपनाह कस्द कर चुके हैं, गोलकुण्डा के राज्य पर, जिसकी खानों में ऐसे-ऐसे अनगिनत जवाहर भरे पड़े हैं, कब्जा कर लेना ज्यादा मुफीद है। (धीरे से) जहांपनाह, गुलाम तो यह भी कहने की जुरत करता है कि हुजूर को उस वक्त तक गोलकुण्डा के मुकाबिले फौजकशी करनी चाहिए, जब तक कि कन्याकुमारी तक का मुल्क तख्ते मुगलिया के कब्जे में न आ जाय,' यह कहकर मीरजुमला ने वह अलौकिक हीरा बादशाह को नजर कर दिया।

मीरजुमला की प्रगल्भ बातें सुन कर बादशाह बड़ी देर तक उस हीरे को देखते रहे। कुछ ठहर कर उन्होंने वह हीरा मीरजु-

मला को देते हुए कहा—'अमीर मीरजुमला, यह लामिसाल जवाहर अमानतन अपने पास रखो और किसी उमदा कारीगर से कटवा दो, तुम्हारी बातें काबिले कद्र हैं और उन पर गौर किया जायगा। बिलफैल तुम्हें हुक्म होता है कि शाही महल के सामने जो वजीर सईदुल्ला खां का महल है उसमें मुकीम हो।'

मीरजुमला ने प्रथम बादशाह को और फिर दारा को तीन बार सलाम किया —और पीछे हट कर अपनी जगह पर खड़ा हो गया।

बाजे बजने लगे और बादशाह तख्त से उठे। नकीबों ने आवाज बुलन्द की। तमाम दरबारी जमीन तक झुक गए। धीरे-धीरे बादशाह सलामत और दारा दोनों महल में चले गए।

सब अमीर-उमरा तितर-बितर हो गए। आज का दरबार बरखास्त हुआ।

५

अमीर मीरजुमला

पिछले परिच्छेदों में जिस महत्वपूर्ण घटना का वर्णन किया गया है—उससे २६ वर्ष पहिले सन १६३० के बैसाख महीने में एक ईरानी घोड़ों का सौदागर गोलकुण्डा में कुछ अच्छी नसल के घोड़े बादशाह को बेचने के लिए लाया था, उसी के साथ एक ईरानी नवयुवक नौकर था जो बड़ा चतुर, फुर्तीला और अच्छा शह सवार था। उसका नाम मुहम्मद सैयद था। यह आर्दिस्तान के इलाके का निवासी था और इसका बाप इस्पहान में तेल का कारोबार करता था। वह अपनी जन्मभूमि को छोड़ कर दक्षिण भारत के सुलतानों के दरबार में भाग्यपरीक्षा के लिए चला आया था। वहां की अच्छी जलवायु और धन कमाने

की महत्वाकांक्षा ने उसे गोलकुण्डा ही में रख लिया। कुछ दिन तो वह जूते बेचकर गुजारा करता रहा। परन्तु जल्द ही वह उस नगर का एक प्रतिष्ठित व्यापारी हो गया। अपनी मिलन-सारी और उदारता से उसने अपने अनेक मित्र बना लिए। उच्च राजकर्मचारियों से साँठ-गाँठ करके इसने कई जहाज खरीदे। भाग्य ने उसका साथ दिया, वे जहाज समुद्र में सफलतापूर्वक यात्रा करते रहे और उसके पास बहुत-सा धन इकट्ठा हो गया। वह धार्मिक प्रवृत्ति का भी आदमी था और बुद्धिमान भी। अपनी उद्योगशीलता, व्यापार, चातुर्य और जन्मजात तेजस्व-शक्ति के कारण मीरजुमला को अपने प्रत्येक काम में निश्चित सफलता मिलती गई। शीघ्र ही राजदरबार में उसकी पहुंच हो गई और वह देखते ही देखते शाह गोलकुण्डा अब्दुल्ला कुतुबशाह के नाक का बाल बन गया। उसके मित्रों ने उसे बादशाह के सामने बहुत बढ़ा-चढ़ा कर उपस्थित किया। अवसर पाकर उसने कई बढ़िया हाथी तथा योरोप और चीन के बने नायाब वस्त्रों के बहुमूल्य थान बादशाह को नजर किए। इस प्रकार उसकी प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई, और उसे गोलकुण्डा का प्रधानमन्त्री बना दिया गया, जिससे उसे अधिक आमदनी होने लगी।

उसने अपने कामों को खूब मन लगा कर किया और बादशाह का उस पर बहुत विश्वास बढ़ गया। राज्य-शासन और युद्ध-क्षेत्र दोनों ही में अपूर्व योग्यता के कारण वह गोल-कुण्डा का वास्तविक शासक बन गया। अन्त में बादशाह ने उसे कर्नाटक का गवर्नर बनाकर भेज दिया। यहाँ आकर उसने अपनी खूब प्रतिष्ठा बढ़ाई और वह गोआ के पोर्तुगीज गवर्नर डामफिलिप्स मस्करेनिया का गहरा दोस्त बन गया। दोनों बहुधा एक दूसरे को मूल्यवान तोहफे भेजते रहते थे। गोआ के गवर्नर की भेंट में चीन और योरोप की अद्भुत चीजें हुआ

करती थीं। इनके बदले यह कर्नाटक की खानों से निकले मूल्यवान हीरे और जवाहरात उसकी भेंट करता था। कर्नाटक का हाकिम होने के बाद उसने इस सूबे के बहुत से हिन्दू मन्दिर और खजानों को लूट कर अटूट धन संग्रह कर लिया था फिर भाग्य और उद्योग की खूबी से उसे कई हीरे की नई खानें भी मिल गई थीं।

कर्नाटक के गवर्नर होने के बाद उसने शाह गोलकुण्डा की फौज के अलावा एक अपनी खास फौज भरती कर ली थी, जिसमें उत्तम श्रेणी का तोपखाना पोर्तुगीज तोपचियों और अफसरों के हाथ में था, जिनके बराबर अच्छा निशानेबाज उन दिनों भारत भर में नहीं था। उसने बहुत सी तोपें ढलवाईं और अपनी सेना को सुनियन्त्रित किया। तथा कड़घा जिले पर अधिकार कर लिया। साथ ही गंडीकोटा का दुर्गम दुर्ग भी जीत लिया। उसके सेनापति जय पर जय करते हुए अर्काट के उत्तर में तिरूमति और चंद्रगिरि तक बढ़ते चले गए। उन्होंने जमींदोज खजाने का पता लगाया और लूट लिया—इन विजयों से उसके पास अटूट सम्पत्ति एकत्र हो गई और उसने अपनी कर्नाटक की जागीर को एक स्वतंत्र राज्य में परिणत कर लिया। और अपने स्वामी से पूर्णतया स्वतन्त्र होकर सचमुच कर्नाटक का बादशाह बन बैठा।

इन सब से ऊपर एक बात यह थी कि शाह गोलकुण्डा की एक बेगम से इसकी आशनाई हो गई थी और वह सुन्दरी इस पर जान-माल वार चुकी थी।

धीरे-धीरे शाह गोलकुण्डा को ये सब बातें मालूम होने लगीं। उसकी इस बढ़ती के कारण उसके बहुत से दुश्मन दरबार में उत्पन्न हो गए थे। उन सब ने भी बादशाह के कान भरे।

अपनी बेगम का इससे गुप्त प्रेम भी बादशाह पर प्रकट हो गया, फलतः वह इसका जानी दुश्मन हो गया। परन्तु तब तक इसकी ताकतें बहुत बढ़ गई थीं। शाह उससे भय खाने लगा था। फिर भी वह उसे नष्ट कर देने की चिन्ता में लगा ही रहता था। इसी बीच एक और वाहियात घटना हो गई। मीरजुमला का पुत्र मुहम्मद अमीन कई वर्षों से मीरजुमला का प्रतिनिधि बन कर वर्षों से राज-शासन का काम करता था—वह खुले आम दरबार में भी सुलतान का बहुत कम अदब करता था। एक दिन वह खूब शराब पीकर नशे में लड़खड़ाता हुआ दरबार में आया और खुद सुलतान की गद्दी पर जा लेटा। और कै करके गद्दी को खराब कर दिया। इस बात से शाह गोलकुण्डा बहुत ही गुस्सा हो गया।

अन्ततः उसने मीरजुमला को दरबार में बुला भेजा—और भरे दरबार में उसे बहुत-से अपशब्द कहे, और उसे कड़ा दण्ड देने की धमकी दी। उस समय अवसर न समझ वह चिकनी-चुपड़ी बातें बनाकर वहाँ से चला आया। परन्तु उसे अपनी प्रेमिका बेगम तथा पुत्र मुहम्मद अमीन खाँ और अन्य मित्रों से पता लग गया कि बादशाह उसकी जान का गाहक हो रहा है और उसे तुरन्त वहाँ से भाग जाना चाहिए। इसलिए वह रातों-रात वहाँ से भाग गया। इस पर शाह ने मुहम्मद अमीन और उसके सब बाल-बच्चों को कैद कर लिया। इस पर मीरजुमला ने गोल-कुण्डा राज्य को विध्वंस करने और तख्त को उलट देने की ठान ली।

उन दिनों शाहजादा औरंगजेब औरंगाबाद में रहता था, जो वहाँ से १५ दिन का रास्ता था। औरंगजेब की आयु उस समय केवल १८ वर्ष की थी। वह दक्षिण का हाकिम था।

मीरजुमला ने औरंगजेब को एक खत लिखा—खत का मजमून इस प्रकार था—

साहबे आलम,

मैंने गोलकुण्डा की वह बड़ी-बड़ी खिदमतें की हैं कि जिनको तमाम जमाना जानता है। और जिनके लिए उसे मेरा बहुत ही ममनून होना चाहिए। मगर इतने पर भी वह मेरे खान्दान की बर्बादी की फिक्र में है। इसलिए मैं आपकी पनाह लेना और आप के हुजूर में हाजिर होना चाहता हूँ। और इस दरखास्त की कबूलियत के शुकराने में, जिसकी पिजीराई की आपकी जानिब से कामिल उम्मीद है, एक मनसूबा अर्ज करता हूँ जिसके जरिये से आप बआसानी बादशाह मजकूर को गिरफ्तार करके उसके मुल्क पर कब्जा कर सकते हैं। आप मेरे वादे की सचाई पर एतवार और भरोसा फरमाएं। इन्शा अल्लाह यह मुहिम न तो कुछ मुश्किल ही होगी न कुछ खतरनाक ही। यानी आप ५ हजार चीदा सवारों के साथ बहुत जल्द बिना तबक्कुफ कूच करते हुए गोलकुण्डा को तरफ ले आवें, जिसमें आपको सिर्फ सोलह दिन लगेंगे और यह मशहूर कर दें कि शाहजहाँ का सफीर शाह गोलकुण्डा से बाज जरूरी मुआमिलात में गुफ्तगू करने को भागनगर आ रहा है। और यह फौज उसी की अर्दली में है। चूंकि वह दवीर जिस की मार्फत हमेशा उमूर की इत्तला बादशाह को हुआ करती है, मेरा करीबी रिश्तेदार है और उस पर मुझे कामिल यकीन है, इसलिए मैं वादा करता हूँ कि एक ऐसा हुक्म जारी हो जायगा कि जिससे आप बिला शक-सुबहा भागनगर के दरवाजे तक पहुँच जाएंगे। और जब शाह गोलकुण्डा फर्मान के इस्तकबाल के लिए जो सफीर के पास हुआ करते हैं—आवे, तो आप उसे बआसानी पकड़ कर जैसा मुना-

सिब समझें पेश आ सकते हैं। माइजा इस मुहिम का कुल खर्च मैं दूंगा और इसके एख्ततामं तक ५० हजार रुपये रोज देता रहूँगा।

—न्याजमन्द मीरजुमला"

गोलकुण्डा बहुत ही उपजाऊ और सिंचाई के साधनों से पूरी तरह सुसज्जित देश था। वहां की जनसंख्या बहुत अधिक थी और निवासी परिश्रमी थे। इस राज की राजधानी हैदराबाद उस समय—केवल एशिया भर ही में नहीं--सारे संसार में हीरों के व्यापार की प्रधान मण्डी थी। देश-विदेश के व्यापारी यहां सदैव बने रहते थे। बंगाल की खाड़ी में मछलीपट्टम का बन्दरगाह इस राज्य का प्रधान शहर और महत्वपूर्ण बन्दरगाह था। यहां के जंगलों में हाथियों के बड़े-बड़े झुण्ड मिलते थे। जिससे राज्य की सम्पत्ति में वृद्धि होती थी। तम्बाकू और ताड़ यहां बहुत अधिक मात्रा में होते थे, जिससे तम्बाकू और ताड़ी पर लगाए करों से ही राज्य को एक अच्छी-खासी आमदनी हो जाती थी।

पूर्व की संधियों के आधार पर गोलकुण्डा राज्य प्रतिवर्ष २ लाख हूण मुगल दरबार को वार्षिक कर देता था। परन्तु वर्षों से यह कर उस पर सदैव बकाया ही रहता था। प्रत्येक तकाजे के उजर के जवाब में वह मुगल सुबेदार को कुछ कारण बताकर अधिक समय की मोहलत मांग लेता था।

मुहम्मद अमीन की और मीरजुमला के परिवार की गिरफ्तारी की खबर बादशाह तक पहुँची। मीरजुमला औरंगजेब से सम्बन्ध भी स्थापित कर रहा है। यह खबर भी दारा के भेदियों ने वहां पहुँचा दी। दारा नहीं चाहता था कि मीरजुमला जैसा शक्तिशाली आदमी औरंगजेब से मिल जाय। उधर वजीर सईदुल्ला की आकस्मिक मृत्यु से मुगल साम्राज्य को एक ऐसे ही विलक्षण

पुरुष को वजीरे आजम बनाने के लिए आवश्यकता थी जैसा मीरजुमला था। अतः बादशाह के फर्मान शीघ्र ही शाह गोलकुण्डा के पास पहुँच गए कि अमीर मीरजुमला और मुहम्मद अमीन को शाही दरबार में भेज दे। तथा उसकी सम्पत्ति आदि पर भी कोई प्रतिबन्ध न लगाए। साथ ही औरंगजेब को भी एक शाही खरीता मिल गया कि यदि शाह गोलकुण्डा शाही हुक्म में दरेग करे तो उसपर आक्रमण कर देना।

अब अमीर मीरजुमला के इस खत को पढ़ते ही औरंगजेब की बाछें खिल गईं। वह अत्यन्त महत्वाकांक्षी आदमी था, और ऐसी ही किसी घटना से लाभ उठाना चाहता था। वह चटपट सब तैयारियां करके इस होशियारी से चला कि किसी को तनिक भी शक नहीं हुआ। अपने बड़े शाहजादे को सैन्य सहित नान्देड़ के पास गोलकुण्डा की सीमा में प्रवेश कराकर उसे आदेश दे दिया कि "कुतुबुलमुल्क बहुत ही कायर है। सम्भव है वह सामना न करे, पर तुम लोग सीधा धावा बोल दो और उसके जिस्म को उसके सिर के भार से हल्का कर दो।"

औरंगजेब सही-सलामत भागनगर के फाटक तक पहुँच गया, और बादशाह उसकी अगवानी के लिए वहां तक आ भी गया। यह बिल्कुल निकट था कि जार्जियाना गुलाम—जो इसी कामके लिए मुस्तैद कर लिए गए थे—बादशाह को पकड़ लेते, कि एक उमरा के मन में पश्चात्ताप हुआ और उसने कहा—'जहांपनाह, भागिए यह औरंगजेब है, एलची नहीं।'

बादशाह घबड़ा कर एकाएक वहां से भागा और जो घोड़ा हाथ लगा—सवार हो, तीन मील के फासले पर गोलकुण्डा के किले की ओर तेजी से निकल गया।

शिकार फंसकर निकल जाने पर भी औरंगजेब निराश नहीं हुआ। उसने तत्काल हमला बोलकर भागनगर महलों को लूट

लिया और समस्त बहुमूल्य वस्तुएं अपने अधिकार में कर लीं। फिर बादशाह को कैद करने की नीयत से गोलकुण्डे के किले की ओर उसने रुख किया। इसके पास तोपें नहीं थीं, और वह गोलकुण्डा के किले पर उनके बिना हमला नहीं कर सकता था। पर उसने किले के चारों ओर डेरा डाल कर उसकी रसद-पानी सब बन्द कर दी, किले में आवश्यक सामान काफी न था—वह दो महीने घेरा डाले पड़ा रहा। और निकट था कि किलेवाले आत्मसमर्पण कर देते पर उसी समय बादशाह शाहजहां का आज्ञापत्र मिला कि तुरन्त वह अपने सूबे को लौट जाय।

औरंगजेब बहुत खीझा। वह जान गया था कि यह सब कारस्तानी दारा और जहांआरा बेगम की है, जो हमेशा उसके विरुद्ध बादशाह को भड़काते रहते हैं और बादशाह को अपनी मुट्ठी में रखते हैं। परन्तु उसने बादशाह की आज्ञा का उल्लंघन करना ठीक नहीं समझा, और किले का मुहासरा छोड़ देने को तैयार हो गया, परन्तु उसने शाह से सेना की सब क्षतिपूर्ति के एक करोड़ रुपये वसूल किए तथा रामगिरि का तालुका भी ले लिया। और शाह की लड़की से अपने बेटे सुलतान मुहम्मद का विवाह करके प्रतिज्ञा करा ली कि उसी का लड़का राज्य का उत्तराधिकारी रहेगा। इन सबके साथ उसने अपने दोस्त मीरजुमला के कुटुम्ब और धन दौलत की भी राज्य से बाहर जाने की आज्ञा ली और वह लौटा।

गोलकुण्डा के पड़ाव में जब अमीर मीरजुमला औरंगजेब की सेना में उपस्थित हुआ तो उसका ठाठ-बाट बादशाहों से कम न था। उसके साथ ६ हज़ार घुड़सवार, १५ हजार पैदल, १५० हाथी और कई उम्दा तोपखाने थे। औरंगजेब ने उसकी खूब चापलूसी की और कहा—कि बाबाजी, शाहजहाँ दारा के पिता हैं परन्तु मुझे आपसे बढ़कर मेहरबान पिता मिलना मुश्किल है। मेरी

आशाएँ आप पर ही निर्भर हैं, और मैं आप ही को अपना सरपरस्त समझता हूँ, और निवेदन करता हूँ कि मुझ पर और मेरे बाल-बच्चों पर दया करें। मैं वादा करता हूँ कि तख्तनशीन होने पर मैं आपको दरबार में सबसे बड़ा और आपके लड़के मुहम्मद अमीन खां को आपसे दूसरा दर्जा दूंगा। और जो हुकूक शाहजादों के हैं उसे दे दूँगा। बस, आप दारा से कोई सम्बन्ध न रखें। इस प्रकार कौल-करार करके मीरजुमला शाही दरबार में दिल्ली को रवाना हुआ। बादशाह उसे वजीरे आजम बनाना चाहता था और दारा उसे औरंगजेब से दूर कन्धार की दुर्गम मुहिम पर ढकेल देना चाहता था। ऐसी ही उन दिनों मुगलों की राजनीति थी।

परन्तु अमीर मीरजुमला को औरंगजेब पसन्द था। दोनों शीघ्र ही दिली-दोस्त बन गए। यद्यपि दोनों बहुत कम साथ-साथ रहे–फिर भी दोनों ने बड़े-बड़े साहस के काम किए। दोनों ने दौलताबाद में मिल कर भावी महत्त्वाकांक्षाओं की बंदिशें बांधीं। मुगल इतिहास में इन दोनों आदमियों की मित्रता एक निराली वस्तु है। यह निस्सन्देह कहा जा सकता है कि औरंगजेब को जो कुछ बड़प्पन और प्रसिद्धि मिली, वह मीरजुमला ही की बदौलत मिली।

बादशाह ने उसे बहुत आदरमान से दिल्ली बुलाया और रास्ते में सर्वत्र हुक्म जारी कर दिए कि जहां-जहां होकर वह गुजरे, उसकी पूरी आव-भगत की जाय।

दिल्ली पहुँचने पर भी उसकी पूरी आव-भगत हुई—पर दारा की चाल पूरी न हुई। उसने बादशाह को आते ही प्रभावित कर लिया। और बादशाह का मन कन्धार की चढ़ाई से हटा दिया।

६

वालिए-अहद

बादशाह का सबसे बडा बेटा दाराशिकोह था। इस समय दारा की आयु ४२ वर्ष की थी। उसे शाही खजाने से एक लाख रुपया मासिक वेतन मिलता था। इसके सिवा उसे २ करोड़ रु० वार्षिक आय की निजू जागीर भी थी। उसका महल पृथक् था। और उसमें सैकड़ों दासियां, बांदियां, मुगलानियां, कंचनियां भरी पड़ी थीं। उस महल में वह बादशाह की भांति ठाठ-बाट से रहता था।

देखने में यह युवक रुआबदार, सुन्दर और सजीला जवान था। वह दिल का साफ, स्पष्टवक्ता, मृदुभाषी और उदार था। परन्तु उसमें एक दोष यह था कि वह घमंडी और जिद्दी था। वह सदा यही समझता था कि उसे किसी की सलाह की आवश्यकता नहीं। सलाहकारों और मन्त्रियों को वह तुच्छ दृष्टि से देखता था, बहुधा उनकी हँसी उड़ाया करता था। तिरस्कार भी कर बैठता था। इस कारण उसके निकटस्थ और अति विश्वासी व्यक्ति भी उसे सम्मति देते भय खाते थे।

फिर, यह आदमी इतनी हल्की तबियत का था कि उसके संकल्प से परिचित होना अति साधारण बात थी। कदाचित् ही वह कोई बात गुप्त रख सकता था। उसे अपने भाग्य पर बड़ा भरोसा था, वह सदा यही सोचा करता था कि उसका भाग्य सदा प्रबल रहा है। और संसार की कोई आपत्ति उस पर आ ही नहीं सकती। उसे यह भी विश्वास था कि प्रत्येक

व्यक्ति उसे प्रेम और आदर की दृष्टि से देखता है। और वह उसका यथार्थ पात्र है। वह नाच-रंग और आनन्द में मस्त रहने वाला जीव था।

वास्तव में वह बहुत विनोदी स्वभाव का आदमी था। बहुधा वह विनोद में मर्यादा से आगे बढ़ जाता था। पेशेवर मसखरे सदा उसे घेरे रहते, और एक न एक चुटकुला छिड़ता ही रहता, वे लोग जो मुसाहिब कहाते थे—बहुत भड़कीले और बहुमूल्य वस्त्र पहन कर प्रति दिन दरबार में आते, जो प्रायः कमीने,खुशामदी और बेवकूफ होते थे। और प्रायः दारा के सम्मुख मूर्खतापूर्ण हास्य किया करते थे। जिसे देख कर यह महान् मुगल-साम्राज्य का वालिए-अहद लुच्चों की भांति मुंह बना कर हँस दिया करता था।

बहुधा इनका फूहड़ विनोद यह होता था कि जब कोई सिपाही या दूसरा व्यक्ति नौकरी की आशा से शाहजादा के दरबार में आता तो उसे फुसला कर ये लोग इस बात पर राजी कर लेते कि वह हाथ पैरों के बल पशुओं की भांति शाहजादा के सामने चल कर आए। और जब वह बेचारा आफत का मारा इनके चक्कर में आकर ऐसा करता तो शाहजादा खूब हँसता था।

बहुधा ये मसखरे लोग किसी अपरिचित सिपाही या शहर के किसी आदमी को खूब बनाते, और एक उनमें से कहता कि मैं बड़ा भारी हकीम हूँ। तुम्हें बड़ा भारी मर्ज हो गया है, इलाज न करोगे तो मर जाओगे। वह बेचारा घबरा उठता—तब वे मसखरे उसे सलाह देते—बेहतर है कि तुम्हें भफारा दिया जाय और फिर वह बेवकूफ एक बड़े बर्तन में मय हथियार के बन्द कर दिया जाता। जब वह बर्तन शाहजादा के सामने लाया जाता और ढकना उघाड़ने पर उसमें से एक हथियारबन्द सिपाही

नजर आता तो शाहजादा उसे देख कर बहुत हँसता और वह सिपाही घबरा कर भाग जाता ।

साम्राज्य में कुछ राज्य के सच्चे शुभ-चिन्तक विद्वान् और विज्ञ पुरुष भी थे जो शहनशाहे-हिन्द के वली-अहद के ऐसे छिछोरे चरित्र को देख कर उससे कुढ़े रहते थे ।

परन्तु इतना होने पर भी वह अच्छा विद्वान् था । अरबी, फ़ारसी की तो उसने उत्तम शिक्षा पाई ही थी, हिन्दी, संस्कृत का भी वह अच्छा पण्डित था । उसने संस्कृत के अनेक ग्रन्थों का अनुवाद कराया था । बहुधा वह विद्वानों के साथ धर्म-सम्बन्धी बहस भी किया करता था । परन्तु सब लोग यह जानते थे कि वह न हिन्दू है न मुसलमान । उसका कोई दीन ही न था । वह बहुधा मुल्लाओं और ईसाई पादरियों से शास्त्रार्थ कराया करता और इसमें उसे बड़ा मजा आता था ।

वह फिरंगियों का बहुत शौकीन था । उन्हें उसने बहुत से ओहदे दे रक्खे थे । वह प्रायः उनकी बातें सुना करता, उनके देश के हालात पूंछा करता, और उन्हें दिल खोल कर शराब पिलाता था । दारा के दरबार के तीन पादरी बहुत प्रसिद्ध थे—जिनमें एक फ्रान्सीसी और दूसरा पोर्तुगीज था, इनसे दारा बहुत प्रेम करता था और बहुधा इनके साथ शराब पीता—और जब वे बिदा होते तो इन्हें पचास रुपए और एक-एक दुशाला भेंट देता था ।

दारा में एक दोष यह भी था कि वह बहुत जल्द क्रुद्ध हो जाता था । और कभी-कभी बहुत नीच और अयोग्य कार्य कर बैठता था ।

महावत खां एक बूढ़ा और महान् सेनापति था । वह एक प्रतिष्ठित क्षत्रिय कुल का व्यक्ति था जो मुसलमान हो गया था ।

उसके एक सेवक ने किसी कारणवश दारा के एक नौकर को मार डाला। इस पर दारा ने क्रोध में अंधा हो कर हुक्म दे दिया कि महावत खां को बांध कर घसीटते हुए उसके हुजूर में ले आया जाय। परन्तु यह हँसी खेल न था। महावत खां मुकाबिला करने को तैयार हो गया। बादशाह ने जब यह सुना तो उसने शाहजादे को बुला कर समझा-बुझा कर ठण्ढा किया। परन्तु महावत खां ने यह गिला मन में रखा और समय पर बैर लिया।

औरंगजेब के पक्षपाती होने के संदेह पर दारा ने सल्तनत के प्रधान वजीर सईदुल्ला खां को जहर दे कर मरवा डाला था। यह वजीर एशिया भर में बड़ा भारी विद्वान् और राज्य का भारी शुभचिन्तक था। बादशाह और सारा दरबार उससे प्रेम करता था। आमेर के महाराज जयसिंह जो चालीस हजार सवारों और डेढ़ लाख पैदलों के स्वामी थे, उन्हें उसने मीरासी कह दिया था। जिसका बदला महाराज ने समय पर लिया।

बालिए-अहद के ऐसे ही कामों से दरबार के बहुत से योग्य वजीर-उमरा उससे मन ही मन नाराज रहते थे। इतना होने पर भी अब तक वह बादशाह का बड़ा अदब करता था। वह उनकी प्रत्येक आज्ञा का पालन करता और उनकी प्रतिष्ठा और शान के खिलाफ कोई काम नहीं करता था।

एक साधारण सिपाही को दारा ने तोपखाने का अफसर बना दिया था। इस सिपाही पर खुश होने का कारण यह था कि एक बार एक उल्लू दारा के महल पर बैठ कर बोलने लगा, इस सिपाही ने उसे तीर का निशाना बना दिया। एक बार उसने अपने उमरावों और सेनापति से कहा कि इसकी बराबरी का बहादुर आदमी हमारी सल्तनत में दूसरा नहीं है। इस बात से

सब लोग बड़े असन्तुष्ट हुए तथा उन्होंने इसमें अपना अपमान समझा।

वह ज्योतिषियों का बड़ा विश्वासी था। उसके दरबार में अनेक ज्योतिषी थे, उनमें बहुत से अहमक थे। यह चिकनी-चुपड़ी बातों से तथा पाखण्ड से उसे उल्लू बनाए रहते थे। बहुधा वे उल्टे-सीधे हिसाब लगाया करते और शाहजादे को अपने जाल में फंसाए रहते थे।

बादशाह ने काश्मीर-काबुल और लाहौर का इलाका दारा को जागीर में दे रखा था। जिसकी वार्षिक आय दो करोड़ रुपयों से भी अधिक थी। बादशाह ने इसे कुछ ऐसे भी अधिकार दे रखे थे जिन में कोई तत्व तो न था परन्तु वे बहुत सम्मान-जनक समझे जाते थे। तथा मुगल-साम्राज्य में किसी दूसरे को प्राप्त न थे। जैसे हाथियों को लड़ाना, अपने सामने सोने-चांदी के गुर्ज रखना, जो केवल बादशाह ही रख सकता था। इसके सिवा उसने शाही दरबार में उसे बैठने के लिए अपने तख्त के पास एक दूसरा तख्त रखवा दिया था। बादशाह ने अपने तमाम उमरा को हुक्म दिया हुआ था कि सुबह का सलाम पहिले दारा को देकर तब वे शाही हुजूर में आए।

इन तमाम कारणों से दरबारे-शाही में दारा की इज्जत बहुत बढ़ गई थी। इससे वह बहुधा उमरा के साथ घमंड और सख्ती से पेश आया करता था। और कभी-कभी वह अत्यन्त प्रतिष्ठित उमरा का भी अपमान करने में नहीं हिचकता था, जिसके एक-दो उदाहरण ऊपर दिए जा चुके हैं।

दारा की बड़ी बेगम से उसके दो बेटे थे—एक शाहजादा सुलेमान शिकोह और दूसरा सिपर शिकोह।

निस्सन्देह उसके आदर्श उसके दादा अकबर के समान ही

उदार थे। हिन्दू और मुसलमानों में सांस्कृतिक समन्वय करने का वह पक्षपाती था। हिन्दू योगी लाल दास और मुस्लिम सूफी संत सरमद का वह शिष्य था। मुस्लिम फकीर मियां मीर को भी वह अपना धर्मगुरु मानता था। उसने अपने जीवन में इस्लाम के सिद्धान्तों की कभी अवहेलना नहीं की, हां आदर सभी धर्मों के प्रति रखा। वास्तव में वह कट्टरपन्थी न था।

परन्तु उसकी सब से भारी हानि का कारण उसके प्रति पिता का आवश्यकता से अधिक प्रेम था। उसे सदैव दरबार में रक्खा गया। केवल कन्धार के तीसरे अभियान को छोड़ कर उसने न तो कभी किसी युद्ध का संचालन किया, न कभी किसी प्रान्तीय शासन-व्यवस्था के लिए उसे कहीं भेजा गया। असल में उसे न तो राज्य करने का अनुभव था न युद्ध का। कठिनाई और खतरों से वह सदा दूर रहा। सेना के साथ भी उसका कभी संपर्क न रहा। इसके अतिरिक्त उसके एकछत्र प्रभाव और उसकी अतुल सम्पदा—उसमें शील-संयम—और दूरदर्शिता के बीज न उगा सकी। झूठे चापलूसों से घिरे रह कर मुगल-साम्राज्य के उत्तराधिकारी होने की स्वाभाविक भावना ने उसे घमंडी और प्रमादी बना दिया। वह पण्डित अवश्य था, पर मानव-चरित्र को नहीं परख सकता था। कोई भी स्वाभिमानी और सुयोग्य व्यक्ति उस घमण्डी और अविवेकी स्वामी से प्रसन्न न था। निस्सन्देह वह एक प्रेमी पति, प्यारा पुत्र और नेक पिता था—पर संकटापन्न प्रजा-पालक राजा नहीं। पुश्तों से चली आती हुई शान्ति और सम्पदा ने उसके रक्त की उत्तेजना ठण्ढी कर दी थी। कोई संगठन करने या साहस करने का खतरा वह नहीं उठा सकता था। न वह परिश्रमी और बुद्धिमान ही था। वीरोचित दृढ़ता तो उसमें थी ही नहीं। जो मृत्यु से विजय को छीन लाती है। न वह सेनापति था, न शासक। इस प्रकार युद्ध-

कला, राजनीति, साहस, शौर्य और दूरदर्शिता तथा सावधानता से सर्वथा रहित इस सीधे-सादे नागरिक व्यक्ति का, प्रतापी मुगल-तख्त के लिए खूनी लड़ाई पर आमादा औरंगजेब जैसे सेनानायक और कूट-नीति के पण्डित से पाला पड़ा था।

७

जहाँ-आरा

बादशाह की बड़ी लड़की का नाम जहाँआरा था। परन्तु शाही हलकों में वह बड़ी बेगम के नाम से प्रसिद्ध थी। वह एक विदुषी, बुद्धिमती और रूपसी स्त्री थी। वह बड़े प्रेमी स्वभाव की थी। साथ ही दयालु और उदार भी। बादशाह ने उसके जेबखर्च के लिए तीस लाख रुपए साल नियत किए थे। तथा उसके पानदान के खर्च के लिये सूरत का इलाका दे रखा था, जिसकी आमदनी भी तीस लाख रुपए सालाना थी। इसके सिवा दारा और बादशाह अपनी अपनी गर्ज के लिए उसे प्रेम भेंट या रिश्वत जो कहा जाय बहुधा बहुमूल्य भेंट देते रहते थे। बादशाह का उसके प्रति आकर्षण देख यह प्रसिद्ध हो गया था कि बादशाह का उससे अनुचित प्रेम है। उपर्युक्त कारणों से उसके पास धन-रत्न बहुत एकत्र हो गया था और वह खूब सज-धज कर ठाठ से रहती थी।

मुगलों के शाही खानदान की दो विशेषताएँ थीं। एक यह कि शाही खानदान की स्त्रियां पर्दे में रहती हुई भी राजनीति में पूरा भाग लेती थीं। दूसरे शाहजादियों की शादी नहीं हो सकती थी। यद्यपि उनके गुप्त प्रेम के बहुत से मामले आए दिन प्रकट होते रहते थे परन्तु बादशाह किसी को भी दामाद नहीं

बनाना चाहता था। शाहजादियों की शादी न हो यह नियम बादशाह अकबर ने बना दिया था। इससे शाही शाहजादियों के गुप्त प्रेम के बड़े बड़े झूठे-सच्चे किस्से लोगों की जबान पर चढ़ गए थे।

वह दारा की पक्षपातिनी थी। और दारा ही को राज्य दिलाना चाहती थी। क्योंकि दारा ने इससे वादा किया था कि वह बादशाह होने पर उसकी शादी मनचाहे दूल्हे से कर देगा। वह बादशाह को दारा पर कृपालु बनाए रखने में भी कुछ उठा न रखती थी। तथा सब अमीर उमरा को भी संतुष्ट रखती थी। उसने अपनी सारी चतुराई बादशाह को प्रसन्न रखने और उसकी सेवा करने में लगा दी थी। वह आंख मीच कर बादशाह की सब उचित अनुचित इच्छाओं की पूर्ति करती थी। बादशाह उस पर ऐसा मिहरवान था कि लोग कहने लगे थे कि शाहजहां के शासन काल में वही तमाम साम्राज्य पर शासन करती थी। इसीसे उसका नाम 'बड़ी बेगम' प्रसिद्ध हो गया था।

दारा चाहता था कि उसकी शादी सिपहसालार नजावत खां से हो जाय जो वलख के शाही खानदान से सम्बन्ध रखता था। वह पुरुष वीर और सुन्दर भी था। परन्तु बादशाह के साले शाइस्त खां ने बादशाह के कान भर दिये थे कि यदि ऐसा किया जायगा तो उसे अवश्य ही शाहजादों की बराबरी का रुतबा देना पड़ेगा। इसके सिवा यह भी बात थी कि बादशाह शाहे वलख पर चढ़ाई करने के मंसूबे भी बांध रहा था।

फिर भी शाहजादी जी जान से बादशाह की सेवा करती रही और अपने चाहने वालों ही पर संतुष्ट रहती रही।

वह राज्य के बड़े बड़े जिम्मेदारी के काम करती, पर शाम को नाच रंग में मस्त हो जाती। वह अंगूरी शराब की बहुत ही शौकीन थी। जो काबुल, फारिस और काश्मीर से मंगाई जाती

थी। वह बहुधा अपने इन्तजाम में बढ़ियां शराब बनवाती, जो अंगूरों में गुलाब और मेवाजात डाल कर एवं बहुत सी चीजें डाल कर बनाई जाती थी। रात को वह कभी कभी नशे में इतनी गड़ गप्प हो जाती थी कि उसका खड़ी हो सकना भी सम्भव न होता और उसे प्रायः उठा कर बिस्तर पर डाला जाता था।

इस शाहजादी की ज्यादा इज्जत इसीलिए की जाती थी कि बादशाह से वह सब कुछ करा सकती थी। और अमीर उमरा अपने अपने स्वार्थों के लिए उसे प्रसन्न रखना प्रत्येक मूल्य पर बहुत आवश्यक समझते थे। शाही मुहर इसी के तावे रहती थी, और उसे महान् मुगल साम्राज्य में सब कुछ स्याह सफेद करने की शक्ति थी। यह एक बड़ी ही अनोखी बात थी कि पर्दे में रहने वाली एक महिला किस तरह उस काल में उस बड़े साम्राज्य का शासन सूत्र चलाती थी जब कि यातायात की सुविधाएँ भी नहीं थीं।

८

शाही परिवार

बादशाह का दूसरा बेटा सुलतान शुजा दारा से अधिक विनयी और दृढ़ विचार वाला था। वह कूटनीति में भी कुशल था। इसने धन और विनय से अनेक प्रसिद्ध अमीरों और राजाओं को अपना मित्र बना लिया था। वह बड़ा बुद्धिमान था। परन्तु उसका सबसे बड़ा दुर्गुण यह था कि वह भारी विलासी, आरामतलब और पियक्कड़ था। जब वह नाच रंग में मस्त होता, तब उसका कोई भी दरबारी कितना ही जरूरी काम होने पर भी कुछ कहने का साहस नहीं कर सकता था। इस ढील के कारण उसकी प्रबन्ध व्यवस्था खराब रहती थी। वह शिया धर्मी था। पर इस धर्म को भी उसने एक गूढ़ उद्देश्य से ग्रहण

किया था। वह जानता था कि दरबार के बड़े बड़े ईरानी पदाधिकारी शिया हैं और उन से बहुत काम निकल सकता है। वह इस समय बंगाल और उड़ीसा का सूबेदार था।

तीसरा शाहजादा औरंगजेब था। वह गौरवर्ण का एक अत्यन्त आग्रही और दृढ़ विचार का युवक था। वह एक घुन्ना आदमी था और उसके मन की बात का पता लगाना टेढ़ी खीर थी। आदमी को चुनना उसे आता था, वह उन्हीं लोगों को पास फटकने देता जो उसके काम के होते। वह उन्हें भरपूर इनाम देकर खुश रखता था। वह अपने भेद छिपाकर रखने में एक था। वह ईमानदारी और फकीरी का ढोंग रखता था।

बादशाह और दारा इससे बहुत भय खाते थे। और इस बला को दूर ही रखना चाहते थे, इसी से बादशाह ने इसे दक्षिण भेज दिया था। उसका चित्त कुछ रोगी सा था और वह हमेशा कुछ न कुछ करता ही रहता था। वह सिर्फ वहीं खर्च करता जहां अत्यन्त आवश्यकता होती। वह सदा इस बात में प्रयत्नशील रहता था कि दुनिया की नज़र में वह न्यायी और धर्मात्मा एवं चतुर प्रतीत हो। बादशाह की दूसरी बेटी रोशन आरा इसी के पक्ष की थी। वह आगरे के रंग महल में बैठी हुई शाही दरबार में उसी का हित साधन करने में संलग्न रहती थी। उसके द्वारा औरंगजेब को अपने विपक्षियों का राई रत्ती हाल निरन्तर मिलता रहता था। यह स्त्री अत्यन्त सुन्दरी, चंचल और दावघात में एक ही थी। दारा और बड़ी बहिन को वह घृणा की नजर से देखती थी। पर न तो इसका शाही दरबार में उतना रुतवा ही था न इतने अधिकार जितने कि जहाँआरा बेगम को थे। इसके सिवा बादशाह और बेगम दोनों ही इस पर संदेह करते थे। परन्तु वह अपने भेद गुप्त रखने में खूब चौकस थी और निष्कंटक सब गुप्त हालात औरंगजेब को भेजती रहती थी।

शाहजहां का सबसे छोटा बेटा मुराद एक बांका लड़वैया था परन्तु वह मूर्ख, विलासी और क्रोधी आदमी था। केवल अच्छे खाने-पीने,नाच-रंग,शिकार, हथियार चलाने में ही वह मस्त रहता था। तीर का निशाना लगाने में वह एक था। भाला और बर्छा फेंकने में अद्वितीय था। वह चारों भाइयों में सबसे बढ़कर शूरवीर था। अपनी ताकत का उसे बहुत ही घमण्ड था। लड़ाई की चर्चा उठाने पर वह बड़ा खुश होता था। अपनी तलवार और जवांमर्दी का उसे बड़ा घमण्ड था। वह सब को तुच्छ समझता था। किसी की अपने सामने हस्ती नहीं समझता था। परन्तु सैन्यसंचालन की उसमें कुछ भी योग्यता न थी। चरित्र उसका बहुत ओछा था।

बादशाह शाहजहां ने उसकी अयोग्यता को समझ कर अली-नबी नामक एक योग्य और ईमानदार अफसर को उसका माल हाकिम तथा प्रधान सलाहकार बना कर भेजा था। परन्तु उसके खुशामदी दरबारी कृपापात्र शीघ्र ही अलीनबी के शत्रु बन गए। उन्होंने ऐसा एक जाल रचा कि जिससे इस निर्बुद्ध शाह-ज़ादे ने नशे की झोंक में क्रुद्ध होकर उसे भालों से मार डाला।

६

दिल्ली का लाल किला

किले के भीतर एक से बढ़कर एक शोभनीय खास महल थे। उनकी पंक्तियों का धवल प्रतिविम्ब चन्द्रमा की स्निग्ध ज्योत्स्ना में यमुना के स्वच्छ जल में असाधारण शोभा विस्तार करता था। इन महलों में जो मुख्य वस्तु थी वह दीवाने आम की इमारत थी। जिस पर देखने वाले की सबसे पहिले दृष्टि पड़ती

थी। इसके बाद ही दीवाने खास था, जिसमें बादशाह खास-खास दरबारियों से महत्त्वपूर्ण विषयों पर गुप्त मन्त्रणा करता था। इसके बाद एक-से-एक बढ़ कर गुम्बजों वाले महलों का तांता चला जाता था, ये सब बेगम महल कहाते थे। इनके भीतर सौन्दर्य की जो सुधा वर्षा होती थी, आनन्द का जो स्रोत बहता था, सम्पदा का जो अटूट भण्डार यहां एकत्र था—उसकी मानवीय मस्तिष्क कल्पना भी नहीं कर सकता।

इन सब संगीन इमारतों के बीच खालिस संगमर्मर की बनी मोती मस्जिद चन्द्रमा की चान्दनी की मूर्ति की भांति दैदीप्यमान थी। उसके पार्श्व में ही उसका धूप छाँह का साथी खास शाही महल था। जिसमें वह प्रतापी जगद्विख्यात सम्राट् निवास करता था। इस सम्राट् और इसके इस वैभव को एक बार देख लेने पर फिर किसी को इस संसार में और कुछ देखने की इच्छा ही नहीं रह जाती थी। अथवा जगत में उसे और कुछ दर्शनीय ही न रह जाता था।

बेगम महल की बनावट ऊपर से संगमर्मर की थी। पर भीतर उसकी छत पर सोने का निहायत मूल्यवान् कारीगरी का काम किया गया था। खम्भों और दीवारों पर सच्चे जवाहरात की पच्चीकारी इतनी भव्य और कलापूर्ण थी कि हम उसे उस युग की स्थापत्यकला का एक आदर्श नमूना कह सकते हैं। खास बेगम महल के बीचों-बीच एक छोटी सी चित्रशाला थी और उससे सटा हुआ शाही नजरबाग था जिसमें देश-देश के फूल, फल, फुलवारी यत्न से संचित की गई थी। यहां पर जो क्रीड़ा निकेतन बने थे, उन में जलता हुआ गुप्त प्रकाश रंगीन आभा प्रकट करता था; और जब बेगम महल के अनगिनत हजारा फानूसों में काफूरी मोमबत्तियां जल उठती थीं, उस समय वह इन्द्रभवन सहस्रों तारागणों से सुशोभित सा जान पड़ता था।

प्राङ्गण में सुनहरी फव्वारों से गुलाब, केवड़ा और वेदमुश्क के जल की सहस्र धाराओं का अजस्र वेग सदा बहता ही रहता था। बेगम महल के प्रधान कक्ष की सजावट और भी निराली थी। वह पूर्वीय सौन्दर्य और वासना की सदेह मूर्ति थी। आराम और सजावट के एक से बढ़ कर एक सामान वहां एकत्रित थे। जिनके मूल्य का वर्णन करना असम्भव है।

फर्श पर ईरान और काश्मीर के बड़े-बड़े और अति कोमल महा मूल्यवान् कालीन बिछे थे। सोने के चौखटों में लगे कदे-आदम आईने महल के प्रतिबिम्ब को—शत सहस्र गुण कर देते थे। जगह-जगह भिन्न-भिन्न कौशल और कारीगरी से लगाई गई पुष्पमालाओं से निकली हुई सुगन्ध सौरभ से दिशाएं परिपूर्ण हो रही थीं।

इस रहस्यपूर्ण महल में बादशाह और शाहजादों को छोड़ और किसी मर्द का गुजरान न था। दरवाजों पर भीमकाय खोजे और भीतरी ड्योढ़ियों पर असंख्य तातारी बांदियां भारी-भारी तलवारें लिए रात-दिन पहरा लगाती थीं। इसलिए किसी भी मनुष्य का उस रंग-महल में भीतर पहुँच जाना और पहुँच कर बाहर जीवित निकल आना एक प्रकार से असम्भव ही था।

१०

हरम

बादशाह के हरम में दो हजार से ऊपर स्त्रियां थीं। इस हरम के वैभव, विलास और ऐश-आराम की कहानियां अनेक रूप धारण करके देश-देशान्तर में विख्यात हो गई थीं। योरोप और एशिया के सभी देशों में मुगल ऐश्वर्य की धूम थी। कोई

भी तत्कालीन विश्वसम्राट् शान-शौकत में मुगल-सम्राट् शाहजहां से स्पृद्धा नहीं कर सकता था। उन्होंने दिल्ली, आगरे आदि नगरों को सुदृढ़, विशाल और भव्य-भवनों से सुशोभित किया था। महल, मस्जिदें और मक़बरे ऐसे बनवाए थे कि जिन्हें देख कर बड़े-बड़े स्थपत्य तथा कला-विज्ञान के विशारद भी चकित हो जाते थे। सब प्रकार के सम्भव और कल्पनातीत राजभोग मुगल-बादशाह के अन्तःपुर में नित्य व्यवहार में आते थे। संसार भर की सुन्दरियां, मदिराएं और इन्द्रिय भोग की वस्तुएं वहां एकत्र थीं। वह शाही राज-प्रासाद उन सब भोगों का केन्द्र बना हुआ था। और अपनी सीमा को उल्लंघन कर रहा था।

सम्राट् के हरम में बेगमात के अतिरिक्त पासवानियां, कंचनियां, मुगलानियां और उस्तानियां रहती थीं। हरम का प्रबन्ध अत्यन्त सुव्यवस्थित था। जैसे राज्य के भिन्न-भिन्न शासन-विभागों का अनुशासन होता था वैसे ही हरम का भी होता था। मुगल महिलाओं का समय आनन्द में शराब,संगीत और फूलों की महक में व्यतीत होता था। रसरंग, क्रीड़ा-लिप्त हरम के निवासी रात-दिन देश के करोड़ों दीन-हीन कृषकों की कमाई से निष्ठुरतापूर्वक उगाहे हुए धन को पानी की तरह बहाते रहते थे। यह कोई आश्चर्य की बात न थी—सोलहवीं-सत्रहवीं शताब्दी की राजनीति ही ऐसी थी। उस समय साम्यवाद और समाजवाद की क्रान्ति का जन्म नहीं हुआ था। मुगल साम्राज्य में ही नहीं, सारे भूमण्डल में स्वेच्छाचारिता की तूती बोल रही थी। फिर भी मुगल हरम विविध षड़यन्त्रों के केन्द्र बने हुए थे। शाहजादे और शाहजादियां नाक तक विलास और ऐश्वर्य में डूबे रहने पर भी सुखी न थे। प्रेम-पिपासु बेगमात को बहुधा गुलामों और खवासों के प्रपञ्च और कपट के कारण बड़े-बड़े खतरे और कष्ट

उठाने पड़ते थे। कभी-कभी उन्हें जान से भी हाथ धोना पड़ता था।

शाही हरम में सब मिला कर भिन्न-भिन्न जाति और नस्लों की लगभग दो हजार स्त्रियां थीं। जिन में से प्रत्येक के कर्त्तव्य पृथक्-पृथक् थे। किन्हीं का काम तो बादशाह की भिन्न-भिन्न सेवाएं करना था, और किन्हीं का बेगमों, शाहजादियों, और बादशाह की आशनाओं की खिदमत बजा लाना होता था। इन में से प्रत्येक को पृथक्-पृथक् कमरे बेगम महल में मिले थे। जिनकी निगरानी जनाने पहरेदार करते थे। इनके सिवा इन में से प्रत्येक को बहुधा दस या बारह बांदियां भी मिली थीं। इन स्त्रियों को अपने-अपने पदों के अनुसार सौ से लेकर पांच सौ रुपये तक मासिक वेतन मिलता था। तथा इनकी दासियों को पचास से लेकर दो सौ रुपये तक। इनके सिवा पांच सौ गाने वालियां, कंचनियां भी महल में थीं। उन्हें ऊंची तनखा तो मिलती ही थी, पर शाहजादों, शाहजादियों, बेगमों और बादशाह के भांति-भांति के मनोरंजनों के अवसर पर सदा बहुमूल्य भेंटें भी मिला करती थीं। ये नाचने वालियां यौवन की मदमाती, इठलाती बिजली की भांति महल में इधर से उधर अपनी जनाना सफरदाइयों के साथ घूमा करतीं और इच्छा करते ही तुरन्त चाहे जिस बेगम या शाहजादी की सेवा में उपस्थित होकर अपनी कला का विस्तार करती थीं। इन की सुरीली तानों से सदैव ही बेगम महल तरंगित होता रहता था। ये सब बहुमूल्य कमखाव और जरी के वस्त्र पहनती थीं, जिन पर सच्चे जवाहरात जड़े रहते थे। इन के नाच के समय इनकी पोशाक से बहुधा जवाहरात टूट-टूट कर फर्श पर गिर जाते थे, जिन्हें झुक कर उठाना ये अपमान-जनक समझती थीं। प्रातःकाल जब फर्राश फर्श पर झाड़ू देने आतीं तो उन्हें मुट्ठियाँ भरे हीरे, मोती, मानिक, पुखराज फर्श पर बिखरे मिलते थे,

जो अब उनके बाप दादों के थे। ऐसी ही एक कंचनी को बादशाह ने ऊंचा रुतबा दे कर अपने हरम में रख लिया था, और जब एक वज़ीर ने बादशाह से कहा कि इस दर्जे की औरतों को महल में दाखिल करना अच्छा नहीं—तो उसने जवाब दिया था कि माल अच्छा हो दूकान चाहे जैसी हो।

बहुत सी स्त्रियां उस्तानी मुगलानी थीं, जो बेगमों और शाहजादियों को पढ़ाया करती थीं। महल की खातूनें बहुधा गुलिस्तां और बोस्तां पढ़ा करती थीं। इसके सिवा प्रेम की बहुत सी कविताएं तथा अश्लील किस्से-कहानियों की पुस्तकें पढ़ा करती थीं।

हरम में जो स्त्रियां राज-काज में बादशाह की सेवा करतीं थीं उनके दर्जे पृथक् पृथक् थे। उनका मासिक वेतन उनकी पद-मर्यादा के अनुसार १६ सौ रुपये तक नियत था।

बादशाह की सेवा में जो औरतें नियत थीं उनके रुतबे अलग अलग थे। बाहर जिस तरह दरबारी मनसबदार अमीर उमरा होते थे, उसी भांति महल के भीतर ये औरतें भी होतीं थी। और जब बादशाह सलामत बाहर न तशरीफ़ लाना चाहते तो इन्हीं जनाने ओहदेदारान के द्वारा बाहर के अफ़सरों पर आज्ञाएं प्रचारित करते थे। इन महत्त्वपूर्ण ओहदों पर जो स्त्रियां नियत की जातीं थीं, उन्हें बहुत सोच-समझ कर सावधानी से रक्खा जाता था। वे बहुत बुद्धिमती होती थीं। और साम्राज्य में कहां क्या हो रहा है इसकी राई-रत्ती खबर रखती थीं।

बादशाह जब किसी महत्त्वपूर्ण विषय पर बेगम महल से स्त्री अफसरों के द्वारा आज्ञा प्रदान करते तो बाहर के अफसर लोग उसका यथावत पालन करके उस पर अपनी रिपोर्ट लिख कर उक्त स्त्री अफसर को लौटा देते थे। उस पर वह स्त्री अपनी रिपोर्ट लिख कर बादशाह की सेवा में पेश करती थी, फिर बादशाह

का हुक्म उस पर लिखा जाता था, तब वह बक़ायदा सील मुहर करके ख्वाजासराओं के सुपुर्द किया जाता था, जो इधर-से-उधर-जवाब लाते और ले जाते रहते थे।

मुगलिया तख्त का एक यह भी नियम था कि सप्ताह में राज्य की जो कुछ बड़ी-बड़ी घटनाएं होतीं थीं, उन्हें बकाएनवीस और खुफियानबीस बकाए में दर्ज करते, जो एक प्रकार का हस्तलिखित गजट या अखबार होता था। इन खबरों को लगभग सन्ध्या के समय नौ बजे बादशाह महल में जनाने अफसर बादशाह को सुनाती थीं। इस प्रकार उस बेगम महल और हरम की दुर्भेद्य दीवारों के भीतर भी साम्राज्य की राई-रत्ती खबर फैल जाती थी। इन सब के सिवा बहुत से जासूस होते थे जिन्हें अन्य सरकारी कामों के अलावा खास काम शाहजादों की निगरानी का भी होता था। उन्हें यह खास तौर पर आदेश दिया होता था कि वे प्रत्येक शाहजादे का राई-रत्ती हाल और उसके प्रत्येक कार्यों तथा हल-चलों की रिपोर्ट जनाने अफसर की सेवा में लिखित-रूप में भेज दें।

बादशाह आधी रात तक बेगम महल में बैठे रह कर यह सब काम देखते रहते थे। वे केवल तीन घण्टे सोते और सूर्योदय से प्रथम ही उठ कर पहिली नमाज पढ़ते थे। जिसमें उन्हें डेढ़ घण्टा लगता था। यद्यपि इस समय बादशाह बहुत बूढ़े हो गये थे और चारों तरफ से शत्रुओं से घिरे थे, परन्तु वे अभी तक अपने दैनिक कार्यों को उसी भांति मुस्तैदी से किए जाते थे।

बादशाह यद्यपि दिन रात में केवल एकबार भोजन करते थे, परन्तु फिर भी शाही बावर्चीखाने का प्रतिदिन का खर्चा एक हजार रुपए होता था। भोजन के दारोगा को इस नियुक्त रकम में से सब आवश्यक सामान जुटाना पड़ता था। और नियत संख्या में भिन्न भिन्न प्रकार के मांस और खाद्य पदार्थ तैयार कराने पड़ते थे।

बादशाह के सोने के समय उनकी रक्षा बलिष्ठ तातारी बाँदियां करतीं थीं, जो हजारों की संख्या में सब प्रकार के हथियारों से लैस तथा उनके चलाने में खूब होशियार होती थीं।

इन सब वर्णनों को पढ़कर पाठक समझ गये होंगे कि मुगल बादशाहों के समय में बेगमात और शाहजादियों का राज्य कार्य में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हाथ रहता था। जो वास्तव में आश्चर्य-जनक था। क्योंकि इतने कड़े पर्दे से देश भर पर हुक्म चलाना आश्चर्य की बात तो थी ही। इन सब स्त्री–अधिकारियों का बाहर के अमीर उमरा पर बड़ा भारी रुआब भी ग़ालिब रहता था।

बादशाह सलामत और उनके शाहजादों का एक यह भी दस्तूर था कि वे अनेक गुप्त जासूस स्त्री-पुरुष अपने खानगी भी रखते थे। जो राज्य भर की सुन्दरियों की खोज-खबर रखते थे। इन में प्रायः बुड्ढी कुटनिएं होती थीं जो सुर्मा-मिस्सी, तस्वीर आदि बेचतीं, रमल बतातीं, देश–विदेश में बुकचा लिऐ घूमा करती थीं। वे साम्राज्य भर में जहाँ चाहे वहां किसी भी हिन्दु-मुसलमान रईस अमीर के घर जा सकतीं थीं और बेगम महल में भी इनकी पूरी पैठ थी। बादशाह या शाहजादे जिस स्त्री को चाहते उसे ये दगा या लोभ लालच दे कर जैसे बने रंगमहल में ले आती थीं। जहां इन्हें आशनाओं की पंक्ति में रक्खा जाता था और यदि इन्हें महल में रखना नामंजूर होता था तो कोई भारी नजराना देकर वापस भेज दिया जाता था।

बेगम महल का शाही खर्चा सालाना एक करोड़ रुपए था। इसमें वे खर्च सम्मिलित न थे जो समय समय पर बादशाह या शाहजादियां प्रसन्न होकर दान, खिलअत, या भेंट के रूप में अपने कृपापात्रों को देते थे। बेगम महल के बड़े बड़े खर्च तो भांति भांति के इत्र और सुगंध द्रव्य में होते थे जिनकी सदैव ही महल में नदी बहती थी। पानों की मद भी बड़ी खर्चीली थी। जिसमें

मोतियों का चूना काम में लाया जाता था। एक एक बेगम हजारों रुपए रोज पान का ही खर्च रखती थीं।

दीवाने खास से सटा हुआ एक चतुर और फुर्तीली स्त्री का दफ्तर था, इस स्त्री का नाम फीरोजबानू था। यह स्त्री हरम के खर्च की देखभाल करती थी। तथा नकद रुपए और माल अस्बाब का हिसाब रखती थी। यदि कोई स्त्री ऐसी चीज मांगती थी जिसका मूल्य उसके वेतन से अधिक होता था तो उसे तहवीलदार से प्रार्थना करनी पड़ती थी। तहवीलदार मुन्शी के पास एक नोट भेजता था, मुन्शी इसकी जांच करता था जिससे शाही खजाने से रुपया मिल जाता था। मुन्शी ही वार्षिक आय-व्यय का लेखा जोखा रखता था। जिन्हें रकम देनी होती उसके नाम का एक प्रकार का चिक काट देता था। जिस पर वजीरों के दस्तखत होते थे, इसपर एक मुहर लगती थी जो हरम संबंधी फर्मानों पर लगाई जाती थी। जब यह चिक सरकारी कोषाध्यक्ष के पास जाता था तब वह तहवीलदार को रुपया दे देता था। और तहवीलदार अपने नायबों को रुपया बांटने के लिए दे देता था।

हरम के भीतर रक्षा करने के लिए जो स्त्रियां सशस्त्र रहती थीं, वे बड़ी फुर्तीली और बहादुर होती थीं, तथा शराब नहीं पी सकती थीं। इनमें जो अति विश्वसनीय होती थीं वे बादशाह के शयनागार के निकट रहती थीं।

हरम चारों ओर सफीलों से घिरा था। सफील के बाहर हिजड़े और राजपूत सामन्त राजा लोग बारी बारी से पहरा देते थे। दरवाजों पर दर्वान रहते थे। बेगम महल के चारों ओर अमीर, अहदी और शाही फौज का पहरा रहता था।

यदि किसी अमीर या राजा की कोई प्रतिष्ठित महिला हरम में जाना चाहती थी, तो उसे पहिले हरम के दारोगा को इस बात की इत्तला देनी पड़ती थी। उस पर जाब्ते की कार्रवाई होने के

बाद जब प्रार्थना स्वीकृत हो जाती थी तब वह स्त्री हरम में आने पाती थी।

यह सब प्रबन्ध रहते हुए भी बादशाह स्वयं हरम पर कड़ी निगरानी रखता तथा हरम से सम्बन्ध रखनेवाली जरा सी बात की खूब मुस्तैदी से जांच पड़ताल करता था।

बहुमूल्य और दुष्प्राप्य जवाहरात तो मुगल हरम में घर कर गये थे। जिन्हें बेगमात सदैव पहने रहती थीं। इन बेगमात को अपने अपने जवाहरात का बड़ा घमण्ड था। वे बहुधा उन्हें बड़ी-बड़ी किश्तियों में सजाकर आने-जानेवालियों को दिखाया करती थीं। और उनकी प्रशंसा सुनकर प्रसन्न हुआ करती थीं। वे हीरे और लालों को निर्दयता से बीच से विंधवा कर उनकी मालाएं गले में पहनती थीं। बहुधा ये लाल नारियल के बराबर होते थे। इन मालाओं को वे अपने कन्धे के दोनों ओर ओढ़नी की भांति पहनती थीं। जिनके साथ दोनों तरफ मोतियों की तीन तीन लड़ें लटकती थीं। ये मोतियों की लड़ें पेट तक लटकती थीं।

इन जवाहरात को बेगमात और शाहजादियों को छोड़ कोई दूसरा नहीं पहन सकता था। न ये बेचे जा सकते थे। साधारणतया बेगमात मोतियों का झूमर पहनती थीं, जिनका एक बड़े बड़े मोतियों का गुच्छा माथे तक लटकता रहता था। प्रत्येक बेगम और शाहजादी के पास इन बहुमूल्य गहनों के छै छै या सात-सात जोड़े रहते थे। जिन्हें वे इच्छानुसार पहनती थीं।

बेगमात और शाहजादियों की पोशाक इत्र में शराबोर रहती थीं। वे प्रतिदिन कई कई पोशाकें बदलती थीं। ये पोशाक इतनी बारीक होती थीं कि कई कई पोशाक पहने पर भी उनका भीतर का बदन दीखता रहता था। इनमें से प्रत्येक पोशाक का वजन आधी छटांक से अधिक नहीं होता था। परन्तु इनका मूल्य

पचास रुपए से पांच हजार रुपए तक होता था। इन पोशाकों में वे सुनहरा लचका, गोटा, ठप्पा, और बहुमूल्य मोती हीरे टांकती थीं जिन्हें वे एक ही बार बदल कर दुबारा नहीं पहनती थी। फिर वे जिसके भाग्य में बदा होता उसी किसी बांदी के शरीर की शोभा बढ़ाती थीं।

रात को सारा रंग महल रंग बिरंगी मशालों की रोशनी से जगमगा जाता था। सैकड़ों हजारों फानूसों की मद्धम रोशनी से जो जगह जगह लगे रहते थे, महल की शोभा शतगुणी दीख पड़ती थी। इन फानूसों में सुगन्धित मोमबत्तियां जलाई जाती थीं। मोम की बनी मशालों की भीनी सुगन्ध निकल कर रंगमहल के वातावरण को मस्त कर देती थी। कभी कभी बेगमात रोशनी में लाख डेढ़ लाख रुपया खर्च कर देती थीं। कुछ शाहजादियां बादशाह की खास आज्ञा से सिर पर पगड़ी भी बांधतीं थीं जिन पर मोतियों और बहुमूल्य जवाहरों से जड़ा तुर्रा खास तौर पर लगाया होता था।

यद्यपि शाही हरम में हजारों बेगमात बांदियां और कंचनियां थीं, फिर भी उसे इन पर संतोष न था। हर साल खिराज के तौर पर साम्राज्य भर के सूबेदारों को एक नियत तादाद में रंगमहल के लिऐ खूबसूरत लड़कियां भेजनी पड़ती थीं। इतने पर भी बादशाह के अनुचित सम्बन्ध अनेक रईस और उमरा की औरतों से थे, जो छिपे नहीं थे। प्रकट में ये रईस और उमरा बादशाह के खिलाफ कुछ नहीं कर पाते थे। पर भीतर ही भीतर वे उससे जलते थे। अन्त में यही बादशाह के पतन और सर्वनाश का कारण हुआ।

इस प्रकार की आशना औरतों में सबसे प्रमुख स्त्री जाफर खां की पत्नी थी। उसके प्रेम में अन्धा होकर बादशाह जाफर खां की जान लेने पर तुला हुआ था। पर उस स्त्री ने बादशाह की

अनुनय विनय करके उसे पटने का हाकिम बनवा कर भिजवा दिया था। यहाँ पाठकों को यह बता देना आवश्यक है कि इस प्रकार जो उमराव अधिकार देकर दूर देश में भेजे जाते थे तो उनके कबीले बादशाह जमानत के तौर पर दिल्ली या आगरे में ही रखते थे। बिना बादशाह की विशेष अनुमति लिए कोई उमरा दिल्ली या आगरे से बाहर अपने स्त्री बच्चों को नहीं ले जा सकता था। जिन स्त्रियों से बादशाह इतमीनान से रसरंग किया चाहता था उनके पतियों को वह इसी प्रकार हाकिम बना कर दूर प्रान्तों में फेंक देता था।

अमीर खलीलुल्ला खां एक और प्रभावशाली सिपहसालार था, जिसकी स्त्री से बादशाह का गुप्त संबन्ध था। यह स्त्री जो जूते पहनती थी उसमें बीस लाख रुपये कीमत के जवाहर जड़े रहते थे। जफर खां और खलील खां की स्त्रियों के साथ शाहजहां का सम्बन्ध इस कदर प्रसिद्ध हो गया था कि जब वे दरबार में जातीं तो रास्ते में बैठे हुए मुंहफट फ़कीर पुकारने लगते कि ऐ नाश्त-ऐ शहनशाह, हमें भी याद रखना। ए लुकमऐ शाहेजहाँ, हमें भी कुछ दे।

अपनी बढ़ी चढ़ी कामलिप्सा की पूर्ति के लिए बादशाह ने अपने रंग महल में मीना बाजार की बुनियाद डाली थी। यह मेला आठ दिन तक रहता था। इसमें स्त्रियों को छोड़ और किसी का दाखला निषिद्ध था। नीच ऊंच सभी जाति की स्त्रियां वहां अपना अपना माल बेचने के बहाने जातीं और माल की आड़ में अपने आप को ऊंचे से ऊंचे मूल्य पर बादशाह तथा शाहजादों के हाथ बेचती थीं। बादशाह नित्य इस मेले में जाता। उसका छोटा सा सुन्दर तख्त कुछ तातारी बांदियां उठाए रहती थीं। आस पास अनेक स्त्रियां हाथों में आसा लिए होतीं। बहुत से ख्वाजासरा भी होते थे। बादशाह बड़े गौर से सुन्दरियों को ताकता जाता

तथा उसे जो स्त्री पसन्द होती उसी की ओर रुख करता और उसी की दूकान पर जाकर खूब झगड़ झगड़ कर सौदा करता, फिर भूल से रुपयों के साथ अशर्फियां भी गिन दी जातीं जो वास्तव में दूकानदारिन या उसकी बेटी के रूप का मोल होती थीं। इसके बाद वह एक मुक़र्रिर इशारा करके आगे चल देता, अब साथ वाली स्त्री का यह काम होता कि वह उस स्त्री को किसी तरह फांस फूंस कर बादशाह के शयनागार में पहुंचा दे। इन स्त्रियों में बहुत सी तो ऐसे अवसरों की ताक में ही रहतीं थीं। और बादशाह की इच्छा पूर्ति कर मालामाल हो कर बाहर निकलतीं थीं। बहुत सी हरम में सदा के लिए किसी न किसी पद पर बहाल कर के रख ली जातीं थीं।

इन आठ दिनों में रंग महल में खूब नाच रंग होते। किला बन्द रहता और बादशाह के सिवा कोई दूसरा व्यक्ति भीतर नहीं रहने पाता था। इस प्रकार इस मेले में तीस हजार तक स्त्रियां आतीं थीं। बादशाह यद्यपि हर तरह बड़ी शानशौकत से रहता था, परन्तु इन मामलों में वह बहुत गिर गया था। दुनियां के इस सबसे बड़े बादशाह की नफ्सपरस्ती इतनी बढ़ गई थी कि वह इस प्रकार के गन्दे और बदनामी के काम कर बैठता था, जो न केवल उसकी प्रतिष्ठा के प्रतिकूल थे, प्रत्युत् अन्त में उसके सर्वनाश का कारण बने। क्योंकि उसकी नफ्सपरस्ती और अमीरों की स्त्रियों से अनुचित सम्बन्ध की बातें इतनी प्रसिद्ध हो गई थीं कि बहुत से भारी भारी अमीर जो साम्राज्य के स्तम्भ थे बादशाह के दिल से कट्टर शत्रु हो गए थे।

११

महान् साम्राज्य

यहाँ हम तत्कालीन राज्य की परिस्थिति का भी थोड़ा वर्णन करना आवश्यक समझते हैं।

यह वह समय था जब मुगलों के तेज और वैभव का सूर्य मध्यान्ह को पहुँच चुका था। तथा उस प्रतापी साम्राज्य की अलौकिक कीर्ति-कथा देश देशान्तरों में फैल चुकी थी। और वह वैभव और प्रतिष्ठा की पराकाष्ठा को पहुंच चुका था। उस मध्यवर्ती युग में दिल्ली और आगरा पृथ्वी की सभी विभूतियों के केन्द्र हो रहे थे। बादशाह के बेगम महल से लेकर वहाँ के चौक बाजार की पान बेचने वाली तम्बोलिन की दूकान तक प्रत्येक गृह असाधारण सुखोपयोगी कौतूहलों और रहस्यों का क्रीड़ा-स्थल बना हुआ था। आमोद प्रमोद और आनन्द विलास की धाराएं बे रोक टोक वहाँ बहा करतीं थी। सारांश यह कि उस समय मुगल बादशाह का दरबार ऐश्वर्य और शान शौकत में पृथ्वी भर में अद्वितीय था।

इस बादशाह के राज्य काल में गोलकुण्डा से गजनी और कन्धार तक जो ढाई हजार मील से भी अधिक लम्बाई का प्रदेश है और उस समय तीन महीने का मार्ग था--मुगल बादशाह का साम्राज्य फैला हुआ था। उस जमाने में जो चावल और गेहुँ इस देश में पैदा होते थे-मिश्र की जिन्सों से बढ़ कर थे। तथा रेशम, रुई और नील आदि जो यहां बे हिसाब पैदा होते थे वे दूसरे देशों में पैदा होते ही न थे। कारीगरी की चीजों में कालीन, चिकन, कमख़ाब, कारचोबी, ज़रदोजी आदि के काम और हर प्रकार के सूती और रेशमी वस्त्र जो देश भर में बरते

जाते थे तथा विदेशों को करोड़ों रुपयों के भेजे जाते थे–बहुतायत से तैयार होते थे। मुगल साम्राज्य की सब से बड़ी विशेषता यह थी कि सोना चाँदी संसार भर में घूमघाम कर जब भारतवर्ष में पहुँचता था तो यहीं खप जाता था।

अमेरिका से जो सोना आकर सारे योरोप में फैलता था उसमें से कुछ तो तुर्किस्तान से खरीद की हुई चीजों के बदले में यहां पहुँच जाता था, और बहुत सा स्मर्ना के बन्दरगाह से ईरान पहुंचता था, जहां से योरोप को रेशम बहुत बड़ी संख्या में जाता था। परन्तु तुर्क, यमन और ईरान का काम उन दिनों भारतवर्ष की चीजों के बिना चलता ही न था। सो मुखा बन्दर से-जो लाल समुद्र के किनारे बाबुल माकन के पास था, तथा बसरे से–जो फ़ारस की खाड़ी के सिर पर था, और अब्बास बन्दर से-जो हुरमुज टापू के पास था—सोना चांदी भारत की ओर खिंचा चला आता था। इसके सिवा डच हिन्दुस्तानी पोर्तुगीज जहाज जो हर साल भारत का माल पेगु, तेनासरीम, सीलोन, अचीन, मगासिर, मलाया आदि टापुओं में ले जाते थे उनके बदले में चांदी सोना ही लाते थे। और वह सब यहीं पर रह जाता था। जो सोना चांदी जापान की खानों से निकलता था, उसका बहुत सा भाग डच लोगों के द्वारा तथा फ्रान्स और पोर्तुगीजों के द्वारा लाया हुआ भी सोना चांदी लौटकर भारत से बाहर नहीं जाने पाता था।

अलबत्त, उन दिनों ताम्बा, लौंग, जायफल, दारचीनी, और हाथी आदि वस्तुएं डच लोग सीलोन, जापान, मलाका, इंग्लैण्ड आदि से लाते थे। सीसा इंग्लैण्ड से, और बानात फ्रान्स से आती थी। प्रतिवर्ष २५ हजार घोड़े उजवक देशों से या कन्धार होकर ईरान से आते थे। उसी भांति सूखे और ताजा मेवे, समरकन्द, बलख, बुखारा और ईरान से आते थे। कौड़ियाँ

मलय द्वीप से आती थीं, जो पैसे और धेले के स्थान पर चलती थीं। अम्बर ईरान, मलाया, मौजाम्बिक से आता था। गैंडे के सींग तथा हाथी दांत, गुलाम हब्स देश से आते थे। मुश्क और चीनी के बर्तन चीन से, मोती तूती कोरन और लंकासे आते थे। अवश्य ही इन सबको भारत को एक भारी रकम के रूप में कीमत चुकानी पड़ती थी। परन्तु वह कीमत चांदी सोने के रूप में नहीं दी जाती थी जो विदेशी व्यापारी इन वस्तुओं को देश-देशान्तरों से लाते थे, वे उनके बदले में यहां की तैयार चीजें ले जा के दूना नफा उठाते थे। इस प्रकार जो चांदी सोना यहां आता था वह मुश्किल ही से यहां से बाहर जाता था। यद्यपि समूचा भारतवर्ष मुगल सम्राट् के आधीन न था, तथापि उसका साम्राज्य-विस्तार, आय, और सैनिक सत्ता उस समय पृथ्वी भर में सब से चढ़ बढ़ कर थी। प्राच्य राजसिक ऐश्वर्य की गरिमा में उस समय भारतवर्ष का स्थान सर्वश्रेष्ठ था। समूचे मुगल साम्राज्य में बीस करोड़ रुपये कर में वसूल होते थे। भेंट, नजरानों और मुतफार्रिक मदों की आय पृथक् थी। बादशाह के खास महल की आय १॥ करोड़ रुपया थी। इसी से बादशाह का निजू खर्च चलता था।

बादशाह बहुत सोच समझ कर खर्च करता था। और उसने अपने राज्य काल के चालीस साल बिना लड़ाई भिड़ाई किए बिताए थे। इससे बेअन्दाज दौलत उसके खजाने में इकट्ठी हो गई थी। उसके खजाने में बड़े बड़े कीमती जवाहरात कंकड़ पत्थर की तरह ढेर के ढेर पड़े रहते थे, जिनकी कीमत ५ करोड़ रुपये थी। इसके सिवा दो करोड़ रुपये मूल्य के जवाहरात शाहजादे, शाहजादियों के पास थे। बादशाह ने सूरत के हाकिम को, जो साम्राज्य में सब से बड़ा बन्दरगाह था—यह

हुक्म दिया था कि कोई कीमती और असाधारण रत्न जो विदेशी लावें—शाही ख़जाने के लिये अवश्य खरीद लिये जायं। यद्यपि तब तक सोने चांदी की खानों का पता नहीं लगा था, फिर भी बादशाह के ख़जाने में सोने चांदी के अम्बार लगे थे। शाहजहां के काल तक मुगल बादशाहों का यह नियम रहा था कि जब कोई अमीर उमरा मर जाता था तो उसकी सब सम्पति शाही ख़जाने में दाखिल कर ली जाती थी। इस मद से अटूट धन-दौलत शाही ख़जाने में आती रहती थी।

बादशाह को जो रकम अमीर-उमरा से मिलती थी, उसे वह अपने ख़जाने में नहीं भेजता था बल्कि इसके लिए उसके पृथक ख़जाने थे। एक सोने के लिए एक चांदी के लिए। सोने वाले ख़जाने का नाम जखीरा था और चांदी वाले का भौंरा। वास्तव में ये दोनों बड़े बड़े हौज़ थे जिन की लम्बाई सत्तर फुट और चौड़ाई तीस फुट थी। इनके बीच में संगमर्मर के खूबसूरत खम्भे थे। ये ख़जाने चोरदर्वाजे से बन्द किए जाते थे। इनके ऊपर बड़े बड़े कमरे थे जिनमें वह ख़जाना रहता था जिसमें से प्रतिदिन खर्च किया जाता था। सोने वाले ख़जाने में राईजूल वक्त के सिक्के थे, जो सात सात पताका के बराबर थे। और भी पुराने जमाने के सिक्के जिनका चलन उन दिनों बन्द था और जिनकी कीमत सात सौ से सात हजार पताका तक थी, ख़जाने में जमा थे। ये सिक्के बहुत सुन्दर होते थे, और बादशाह जब अपनी किसी चहेती पर अज़हद खुश होता था तो कभी कभी उसे इनमें से एकाध नजराने के तौर पर दे देता था।

बादशाह की अथाह आय का पता केवल एक इसी बात से लगता है कि वजीरे आजम असदुल्लाखां रोजाना तीस हजार रुपये रिश्वत के जेब में डाल लेता था।

इस बड़े बादशाह ने अपने राज्य काल में बड़े-बड़े खर्चीले काम भी किए थे। अपने राजत्व के प्रारम्भिक बीस वर्षों में शाहजहां ने दान तथा पुरस्कार में साढ़े नौ करोड़ रुपए खर्च किए थे, जिनमें साढ़े चार करोड़ नकद रुपए और पांच करोड़ की चीजें थीं। आगरा, दिल्ली, लाहौर, काबुल, काश्मीर और कन्धार तथा अजमेर की शाही इमारतों और किलों की तैयारी में लगभग तीन करोड़ रुपया खर्च किया था। यह स्मरण रहे कि उस समय का रुपया आज के रुपए से सौगुनी वस्तु खरीद सकता था, अर्थात एक रुपया आज के सौ रुपए के बराबर था।

इस महान् साम्राज्य की रक्षा तथा भारी राजकोष की हिफाजत के लिये बादशाह ने बहुत भारी सेना रखी हुई थी। वह अपने को ६ लाख सवारों का स्वामी कहता था। २ लाख सवार, आठ हजार मनसबदार, सात हजार तीरंदाज सवार, और चालीस हजार तीरंदाज तथा गोलंदाज प्रतिक्षण बादशाह की आज्ञा की प्रतीक्षा करते रहते थे। १० हजार तीरंदाज और गोलंदाज, तो हर समय बादशाह की सेवा में ही रहते थे। बाकी ३० हजार भिन्न भिन्न सूबों में थे। शाहज़ादों, राजाओं और उमराओं के आधीन एक लाख पच्चासी हजार सवार और साढ़े चार लाख पलटन थी। भिन्न भिन्न परगनों के फौजदारों, अमलदारों, आदि के आधीन जो पल्टने थीं, वे अलग थीं।

शाही सवारी के जो खास घोड़े होते थे, उनके रंग, कद या चाल को देख कर उन्हें भिन्न-भिन्न नाम दिए जाते थे। वे सब अरबी, फारसी या तुर्क नस्ल के होते थे। उन्हें लोहे से दाग दिया जाता था। होशियार साईस इन की मलाई और खिदमत करते थे। सहर के तौर पर इन्हें मक्खन और खांड मिला कर रोटी दी जाती थी। शाम को चावल पका कर इन्हें मक्खन, मिर्च, जीरा, सोंफ और पान मिलाकर खिलाया जाता था, जिससे

उनमें से रीह खारिज़ होती रहे। जब बादशाह किसी घोड़े पर सवारी करना चाहता था तो साईसों का दारोगा बगैर जीन के २ घन्टा उस पर सवारी करता था, जिससे उसकी चाल ठीक हो जाय। और पैर हल्का हो जाय। बादशाह प्रथम एक घंटा तख्ते रवाँ पर सवारी करता था, फिर हाथी पर, फिर घोड़े पर। ये घोड़े तोप बन्दूक आदि की आवाजों पर बिदकते न थे। इसकी उन्हें शिक्षा दी जाती थी। ज़ब बादशाह दरबार करते थे तो यह नियम था कि चार खासे घोड़े कसे कसाये गुसलखाने के निकट तैयार रहते थे। यह नियम तैमूर के समय से था। और बादशाह जब किसी शाहजादे या बड़े आदमी पर प्रसन्न होता था, तो अपने खासे घोड़ों में से एक घोड़ा उसे देता था, जिसके साथ २० या ५० घोड़े और होते थे।

बादशाह की खास सवारी में १०० बड़े बड़े ऊंचे हाथी थे, इनके नाम भी पृथक पृथक थे। जो बादशाह ने उनके रूप गुणों को देखकर रखे थे। इन हाथियों को भी तोप बन्दूक-पटाखा आदि की आवाज से न डरना सिखाया जाता था। बहुतों को शेर चीतों का शिकार करना सिखाया जाता था। जंग में उन्हें मस्त करने के लिए शराब पिलाई जाती थी। शाही महल के ठीक नीचे वाले छोटे फाटक पर एक हाथी पहरे पर सदैव रहता था। इन हाथियों में एक खलीफा होता था जो सब से बड़ा होता था। जब वह बादशाह के सामने आता था तो उस पर सुनहरी झूल पड़ी होती थी तथा उसके साथ कई अन्य हाथी होते थे और उसके साथ ढोल नफीरी आदि बाजे बजते तथा झण्डे उड़ते चलते थे। बड़े-बड़े हाथियों को प्रतिदिन दो मन रातव मिलता था। जिसमें आटा, चावल, मांस, मक्खन और मसाले होते थे। १५ सेर गन्ना मिलता था। इसके अतिरिक्त घास आदि होती थी जिसके लिऐ २५ रुपये रोज मिलते थे। प्रत्येक हाथी

के साथ १० सेवक होते थे। दो महावत, दो जंजीर पहनाने वाले, दो भाले बर्दार, दो बन्दूकची, एक लीद हटाने वाला, एक पानी पिलाने और नहलाने वाला। इन सब को २५ रुपए ही में से ४, ४ रुपये माहवार वेतन मिलता था। फिर ये लोग हाथी की खुराक में से भी चुरा लेते थे। उपर्युक्त शाही सवारी के हाथियों के अतिरिक्त शाही पीलखाने में १४ हाथी और थे। जो बेगमात, शाहज़ादे और बादशाह की आशनाओं की सवारी के लिए नियुक्त रहते थे, या खीमें असबाब सामान ढोते—इनमें जो सबसे सशक्त होते वे भारी-भारी तोपें खींचते थे। साधारण हाथी को ३ रुपया रोज मिलता था।

हाथियों के गले में घंटा बंधा रहता था, जिससे जब हाथी आरहा हो तो लोग हट जाएं। क्योंकि हाथी घोड़े की भांति ठहरता नहीं है।

हाथियों की लड़ाई बादशाह का बड़ा भारी मनोरंजन था। पर जब हाथियों की लड़ाई होती थी तो महावत की औरत अपने गहने उतार देती—रोती पीटती और अपने को विधवा ही समझती थी। उनके पति जिन्दा लौट आते तो वे बड़ा उत्सव मनाती थीं। वास्तव में इन हाथियों की लड़ाई में महावत की जान बड़े खतरे में रहती थी। मुगल बादशाह हाथी को मादा के निकट नहीं जाने देते थे। यह उनकी पुरानी आन थी।

बादशाह की सेवा में भिन्न-भिन्न नस्ल के ७ हजार गुलाम थे। जिनमें अनेक दूसरों पर हुक्म चलाते थे। इन गुलामों में भी अफसर होते थे और उनके दर्जे के अनुसार ही उनके नाम होते थे। ये सब हरम में सिपाहियाना ठाठ से रहते थे और इनका वेतन बड़े-बड़े सेनापतियों के बराबर होता था।

इतना होने पर भी भारत की सार्वजनिक साम्पत्तिक अवस्था अच्छी न थी। देश का विस्तार बहुत था। और उस पर

एक छत्र शासन के साधन उपलब्ध न थे। बड़े बड़े भूखण्ड पर्वतों और रेतीले मैदानों के रूप में पड़े थे। आबादी कम थी। खेती के तरीके रद्दी थे। फिर भी खेती के योग्य भूमि का बड़ा भाग हाकिमों के अत्याचारों तथा किसानों की दुर्दशा के कारण उजड़ा पड़ा था। लाखों करोड़ों किसान असहाय थे, जब वे निर्दयी और निरंकुश हाकिमों की जरूरत को पूरा नहीं कर सकते थे, तब उन्हें एक प्रकार से लूट लिया जाता था। उनकी दाद फर्याद सुनने वाला कोई न था। अंधेरगर्दी यहां तक बढ़ी थी कि इनकी निजू जरूरत की चीजें भी छीन ली जाती थीं। तथा इनके बाल बच्चों को लौंडी, गुलाम बना लिया जाता था। ये बेचारे घर बार छोड़ शहर में भाग आते, वहां सिपाही, भिश्ती साईस, ऊँट वाले, चाकर और खिदमतदार बनकर पेट पालते थे।

और एक बात थी। बादशाह इतना वैभवशाली होने पर भी देश में गैर था। वह एक ऐसे देश का बादशाह था, जिसे उसके पूर्वजों ने लूटा और बर्बाद किया था। सिर्फ करोड़ों हिन्दू ही नहीं, शिया मुसलमान भी—जो उसके दरबार में ऊँचे ऊँचे पदों पर थे, उससे धार्मिक द्वेष रखते थे। इसके सिवा उसके राज्य की सरहद पर और भीतर भी अनेक राजा महाराजा सरदार ऐसे थे जो सदा उसके विद्रोही बने रहते थे। कुछ नाम मात्र का कर बहुत दबाने से देते, कुछ बिलकुल ही नहीं देते थे। कुछ ऐसे भी थे जो उल्टा कर लेते थे। ऐसी ही राजनीतिक परिस्थिति थी, इसीलिए ऐसे देश में अपनी शक्ति कायम रखने, तथा उजबकों और ईरानियों को दबाए रखने के लिए उसे शान्तिकाल में भी बहुत भारी सेना रखनी पड़ती थी। और सच बात तो यह है कि मुगल बादशाह हमेशा ही युद्ध करते रहते थे, शान्ति कभी उनके राज्य में होती ही न थी।

परन्तु, बादशाह की इस भारी भरकम सेना पर यद्यपि शाही

खजाने से अपार धन व्यय होता था, पर उसकी व्यवस्था बहुत ही खराब थी।

बादशाह के पास जल सेना बिल्कुल थी ही नहीं, और समुद्र तटों की ओर से यह सोने और हीरों से भरा हुआ साम्राज्य सर्वथा अरक्षित था। कोई भी योरोप का बादशाह थोड़ी भी जल सेना लेकर बंगाल को बिल्कुल आसानी से फतह कर सकता था, और उस अटूट धन का स्वामी बन सकता था, जो ब्रेजिल और पेरू की सोने की खानों के मुकाबिले कहीं बढ़चढ़ कर था।

मुगल राजनीति दोष पूर्ण और खोखली थी। सेना अव्यवस्थित और असंगठित थी। जल सेना थी ही नहीं। सम्पूर्ण साम्राज्य में निरन्तर कहीं न कहीं विद्रोह होते ही रहते थे। नदियां और बन्दरगाह सब विदेशियों के लिए खुले थे। ऐसी हालत में यह समृद्ध साम्राज्य की छत्रछाया में प्रसिद्ध देश उसी प्रकार किसी भी योरोपियन शक्ति के द्वारा विजित किया जा सकता था जिस प्रकार अमेरिका के नंगे जंगलियों को उन्होंने विजित किया था।

इसके सिवा मुगल साम्राज्य की दो भारी त्रुटियां थीं। एक यह कि मुगल शासन, सैनिक शासन था। प्रबन्ध, दीवानी, फौजदारी एवं सेना व्यवस्था सब एक जगह थी। राजधानी से सुदूर प्रान्तों के सम्बन्ध शिथिल थे। समाचार देर से आते जाते थे। मार्ग की असुविधाएं थीं। एक केन्द्र में बैठकर शासन नहीं किया जा सकता था। इस कारण सुदूर प्रान्तों में ये उच्चाकांक्षी शाहजादे स्वतंत्र बादशाह ही बन बैठे थे। लूटमार, अत्याचार से उन्होंने अधिक से अधिक धन संग्रह कर लिया था, और अपनी प्रबल स्वतन्त्र सेना बना ली थी। वे अपने प्रान्तों की आमदनी को स्वेच्छा से खर्च करते थे। कोई भी इस विषय में उनसे पूछने वाला न था। इससे उनकी शक्तियाँ बहुत बढ़ गई थीं।

दूसरी त्रुटि यह थी कि साम्राज्य की सारी व्यवस्था और

राजनीति में मुगल हरम का बराबर हाथ था । शाही हरम एक ऐसा गोरखधन्धा था कि जहां बेशुमार उल्टी सीधी बातें अंधेरे में होती रहती थीं। हम बता चुके हैं कि इस समय शाही हरम में बादशाह की बड़ी बेटी जहांआरा की तूती बोल रही थी। स्वयं बादशाह और दारा उसकी मुट्ठी में थे। चारों भाइयों के जासूस दरबार और हरम में घुसे बैठे थे । अमीर-उमरा बेदिल, ईर्षा और द्वेष से भरे अवसर की ताक में थे। भीतर बाहर सर्वत्र अनगिनत षड़यन्त्र होते रहते थे। इस प्रकार बूढ़े और कामुक शाहजहां का दरबार और महल विद्रोह, अविश्वास और षड़यन्त्रों का एक केन्द्र बन रहा था। बादशाह को बहुत सी बातें मालूम थीं, पर वह कुछ भी कर नहीं पाता था। इससे उसकी चिन्ताएँ और बेचैनी दिन दिन बढ़ती ही जाती थी। उसे सबसे भारी डर औरंगजेब का था। उसे सबसे खराब सूबा दिया गया था, और उसके पास सबसे कम सेना थी, पर दारा सदैव उससे चौकन्ना रहता था। यही कारण था कि उसे ज्योंही औरंगजेब से मीरजुमला के मिल जाने तथा गोलकुण्डा पर आक्रमण की सूचना मिली, उसने तुरन्त बादशाह के नाम से उसे वहां से हट आने का हुक्म भेज दिया, तथा मीरजुमला को दरबार शाही में बुला भेजा । इसमें दारा का यह षड़यन्त्र था कि उसे कन्धार और ईरान की चढ़ाइयों में अटका दिया जाय। इस षड़यन्त्र में बड़ी बेगम जहाँआरा का भी हाथ था । उसे आशा थी कि इस तरह यदि कन्धार पर अधिकार हो गया तो उसका आश्ना सिपहसालार नजावत खां— जो शाहे बुखारे का सम्बन्धी था—बुखारे का शाह बना दिया जाय और फिर उससे शादी करके जीवन के हौसले पूरे किए जायं। परन्तु अमीर मीरजुमला ऐसा विलक्षण कुटिलनीतिज्ञ और वाक्पटु था, कि उसने एक ही वाक्य में बादशाह का मन कहां का कहीं फेर दिया और यहीं से दारा की बदबख्ती का प्रारम्भ हुआ।

१२

लुक़मए शाहजहाँ

दिल्ली में उन दिनों फ़क़ीरों का बड़ा जोर था। ये फक़ीर मुगल सल्तनत की देन थे। मुसलमानों के राज्य की जड़ भारत में जमाने में इन्होंने बड़ा काम किया था। उनमें बहुतों की मज़ार पूजी जाती थी, बहुतों को औलिया समझा जाता था। सब लोग इनकी बहुत आवभगत करते थे और इनकी ज्यादतियां बर्दाश्त करते थे। इनकी कहीं दाद-फर्याद नहीं थी।

दिल्ली में इनके दो गिरोह थे, एक को 'बेक़ैद' कहते थे, दूसरे को 'बेतरस', बेकैद फ़क़ीर बहुत अक्खड़ होते थे, और बड़ी बेतमोज़ी से बात करते थे। छोटे-बड़े का वे कुछ खयाल नहीं करते थे, जिसे चाहते गालियां सुना बैठते। गन्दी फौश बातें बकते, चाहे जिसके घर में निधड़क घुस जाते,जो रोकता उसे बहुत गन्दी गन्दी गालियां सुनाते। फिर भी किसकी मजाल थी कि इनसे नाराजी प्रकट करे। लोग खुशामद और चापलूसी से इनके गुस्से को कम करते, उल्टे उनसे क्षमा मांगते और मुहमांगी भीख देकर पिण्ड छुड़ाते थे। यदि उन्हें दरवाजे पर ही न रोका जाय तो वे सीधे मालिक के पास जाकर बिना सलाम-बन्दगी किए—उन्हीं फटे-पुराने,गन्दे और धूल-मिट्टी से भरे हुऐ हाथ-पांव के साथ उसके बराबर जा बैठते और उसके मुंह से हुक्का छीन कर खुद पीने लगते थे। घर का स्वामी इसपर उनसे नाराज़ न होता था—उल्टे खुश होता था और उसे अपने लिए भारी प्रतिष्ठा की बात समझता था। उन्हें बहुत बहुत धन्यवाद देता, रुपए देता और उन्हें खुश करता था। भीख मांगने में ये ऐसी ज़िद करते थे. कि जो

चाहते लेकर ही टलते थे। मजा यह कि ये लोग कभी परमेश्वर के नाम पर भीख नहीं मांगते थे—वे कहते थे कि उसके नाम पर कुछ मांगना उसका अपमान करना है। हर एक आदमी उन्हें अपनी शक्ति के अनुसार कुछ अवश्य देता था।

दूसरे किस्म के फ़कीर 'बेतरस' कहलाते थे। ये हाथों में तेज़ छुरी लिए हुए भीख मांगते थे। उनकी भीख मांगने का क़ायदा यह होता था कि ये दूकान के आगे जाकर खड़े हो जाते थे और जिस वस्तु की आवश्यकता होती थी, उसकी तरफ इशारा करके मांगते थे। यदि दूकानदार दे देता तब तो खैर—वरना वे अपनी छुरी से हाथ-पांव-सिर आदि में ज़ख्म करके खून दूकान के भीतर फेंक देते थे। बेचारे हिन्दू बनिये उनसे बहुत डरते थे। और खून देखते ही उनकी मुंहमांगी भीख देकर जान छुड़ाते थे।

ऐसा ही एक बेकैद फ़कीर 'सरमद' दिल्ली के बाजारों में घूमता रहता था। यह फ़कीर बिलकुल नंग-धड़ंग फिरता था। न नमाज पढ़ता था न रोज़ा रखता था। एक हिन्दू जौहरी का लड़का अमीचन्द था—उससे यह प्रेम करता था और जब उससे पूछा जाता—तेरा खुदा कौन है? तो वह झट फारसी भाषा में जवाब देता—'अमीचन्दस्त'। जब उससे लोग पूछते—तू कपड़ा क्यों नहीं पहनता—तो वह कहता—जो ऐबदार हैं वे अपने को छिपाते हैं। हम बेऐब हैं।

लोग उसे बहुत मानते थे। इसका एक कारण यह भी था कि शाहज़ादा दारा उसे बहुत मानता था। वह खड़ा होकर उसका स्वागत करता। और जब कभी वह सवारी पर बाहर निकलता—और सरमद दीख जाता तो सवारी खड़ी करके सलाम करता। कभी अपने पास उसे हाथी पर बैठा लेता। बहुधा उसके चेले-चाटें उसके पीछे फिरा करते थे। ये सब आवारा फ़कीर होते थे, जो उसकी आड़ में हराम के माल-मलीदे खाते रहते थे। अमीर,

उमरा, शाहज़ादा जिसकी भी सवारी बाज़ार में निकलती, उसके पीछे ये बुरी तरह दौड़ते और वे लोग भी इन्हें रुपया-अशर्फी खाना-कपड़ा देते रहते थे।

जिस दिन शाही दरबार हुआ उसी दिन की बात है कि बेगम जफर खां की सवारी पालकी में किले की ओर जा रही थी। सरमद ने उसे देखा और अपने साथियों के साथ उसके पीछे लपका। सब जानते थे कि बादशाह शाहजहाँ के साथ उनका गुप्त सम्बन्ध है। इसलिए वे चिल्ला चिल्ला कर पुकारने लगे—ऐ लुक़मए शाहजहाँ, कुछ हमको भी देती जा, और बेगम ने एक मुट्ठी भर अशर्फियां उनकी ओर फेंक कर सवारी आगे बढ़ाई।

१३

ख़ासगाह

दरबार से लौट कर बादशाह सीधा अपनी ख़ासगाह में जा पहुँचा। यह शाही महलों के बीच एक विशाल कमरा था जो २४ हाथ लम्बा और ८ हाथ चौड़ा था। इसके चारों ओर बड़े-बड़े क़देआदम शीशे लगे थे, जो बड़े ख़र्च से विलायत से मंगाये गए थे। इस कमरे की सजावट में जो सोना ख़र्च हुआ था उसकी लागत डेढ़ करोड़ रुपए थी। इसके सिवा जो हीरे-मोती इसमें लगे थे उनकी कीमत का अन्दाजा लगाना बिल्कुल असम्भव था। कमरे की छत में दो विशाल शीशों के बीच सोने की धारियां जड़ी थीं जिनमें जवाहरात जड़े थे। शीशों के किनारों पर बहुमूल्य मोतियों के गुच्छे लटकाए गए थे। इसकी दीवारें संगेयशब की थीं। हर सूरत में यह कमरा एक ऐसा अनोखा स्थान था—कि जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। तमाम शीशे जो इस कमरे में लगाए गए थे वे इस ढंग पर लगाए गए थे कि जब

बादशाह अपनी प्रेमिकाओं के साथ विहार करे तो उस दृश्य को अपनी आँखों से देख ले।

इस कमरे में हर किसी का आना निषिद्ध था। ख़ास-ख़ास ख्वाजासरा ही इसमें आ पाते थे, और यह कमरा बादशाह की ख़ास-ख़ास चहेतियों की मुलाकात के लिए बनाया गया था।

कमरे के बाहर दो सौ तातारी-बाँदियां नंगी तलवार हाथ में लिए, तीर-कमान पीठ पर कसे, रात-दिन पहरा देती थीं। इन सब का सर्दार एक कद्दावर ख्वाजासरा था, जिसका नाम अब्बास था। वही इस कमरे के भीतरी भेदों का जानकार था। इस कमरे के चारों कोनों पर चार कोठरियां थीं जिनमें चार प्रधान बांदियां रहती थीं। ये नाम की बांदी थीं—इनकी तनख्वाह और इनाम-इकराम में इन्हें बेअन्दाज़ धन मिलता था। इनके नाम चारों दिशाओं के नाम पर नियत थे और इनके जिम्मे बादशाह के शयनागार का भीतरी प्रबन्ध था। ये बड़ी सुन्दरी थीं और बड़े ठाठ-बाट से रहतीं थीं। इनमें जो सरदार थीं उसका नाम खुर्शेद बानू था। यह बांदी बड़ी चपल, नौजवान, और बादशाह के मुँहलगी थी।

दरबार से लौट कर बादशाह सीधे अपने उसी कमरे में आकर एक निहायत मुलायम गद्देदार कोंचपर मसनद के सहारे लुढ़क गए। इस समय उनका चित्त प्रसन्न था, और आँखें चमक रही थीं, चेहरे पर निरन्तर छाई रहनेवाली उदासी इस समय न थी।

अब्बास ने बादशाह के कपड़े बदले और आदाब झुका कर दस्तबस्ता अर्ज की, 'खुदाबंद, बेगम जफ़र अली बड़ी देर से हुजूर की कदमबोसी के लिए बैठी हैं।' बादशाह ने मुस्कुरा कर कहा—

'खुर्शेद को भेज दे और एक गिलास शीराजी भी।' अब्बास अदब से पीछे हटा, और कुछ देर में खुर्शेद धीरेसे कमरे में आई। उसके पीछे दो बांदियां और थीं। एक के हाथ में शीराजी

का गिलास और दूसरे के हाथ में जड़ाऊ पानदान था। उसने गिलास बादशाह के सामने पेश किया।

शराब पीते-पीते बादशाह ने कहा—'माजरा क्या है, बानू, आज बेवक्त बेगम ज़फर अली क्यों आई हैं।'

'हुजूर, वे बहुत ही बदहवास हैं मैंने इतना समझाया है मगर वे रोती ही जा रहीं हैं।'

बादशाह की भृकुटी में बल पड़ गए, उन्होंने कहा—'उन्हें भेज दे, और ख्याल रख कि भीतर कोई आने न पाए।'

आदाब बजाकर खुर्शेद चली गई। कुछ ही देर में बेगम ज़फर अली ने आँधी की भांति कमरे में प्रवेश किया। अदब क़ायदे का बिना विचार किए ही उसने बादशाह के सामने जाकर कहा—"हुजूर, मैं बर्बाद हो गई,मुझे बचाइए-मेरी इज्जत बचाइए,वरना मेरी जान चली जाएगी।"

बादशाह खड़े हो गए। उन्होंने बेगम का हाथ अपने हाथों में लेकर तसल्ली के स्वर में कहा— "प्यारी बेगम, हुआ क्या है, जो इस क़दर परीशान हो? खुलासा हाल तो कहो।"

"हुजूर, मेरे खाबिंद को सब कुछ मालूम हो गया है और वे या तो मुझे मार डालेंगे या तलाक दे देंगे।"

'उसकी इतनी मजाल नहीं हो सकती,' गुस्से से बाहर हो बादशाह ने जवाब दिया, 'मैं अभी उसे साँप से डसवाने का हुक्म देता हूँ।' उन्होंने दस्तक देने को हाथ उठाया।

बेगम ने लपक कर बादशाह के हाथ चूमते हुए कहा—'नहीं नहीं, जहांपनाह, रहम कीजिए—मुझे बेवा न बनाइए। वह एक ऐसा खाविन्द है जो किसी भी औरत के फख्र का बाइस हो सकता है, वह बहुत नेक, दिलेर और मर्द है, वह मुझे जान से ज्यादा प्यार करता है हुजूर, मैं बदवख्त···'बेगम बादशाह के ऊपर गिर कर फफक फफक कर रोने लगी।

बादशाह को अभी भी गुस्सा आ रहा था, उन्होंने कहा—'मगर वह बदवख्त मेरे रास्ते का रोड़ा नहीं हो सकता, वह, जिसे मैंने ज़मीन से उठाकर आस्मान तक पहुँचा दिया। वजीरे सल्तनत बना दिया।'

बेगम चुपचाप पड़ी रोती रही। वह बारीक धानी पोशाक पहने थी। उसमें से उसका स्वर्ण शरीर छन छन कर दीख रहा था। जिस प्रकार स्वच्छ बोतल में से मदिरा दीख पड़ती है। वह एक २२ वर्ष की छरहरे बदन की अप्रतिम सुन्दरी स्त्री थी, उसकी रूप माधुरी में कुछ ऐसी मिठास थी कि उसे देखकर मन उन्मत्त हो जाता था। उसका प्रत्येक अंग साँचे में ढला था—साथ ही कोमलता और नजाकत उसके शरीर से छलक रही थी। उसका चेहरा विलास से परिपूर्ण था। उसकी आँखें और बाल गहरे काले थे। आँखें-कटीली-मदभरी और बड़ी बड़ी थीं।

रंग उसका खूब गोरा, मुख हलकी ललाई लिए, होठ खूब सुर्ख और गर्दन लम्बी और पतली थी, उसकी दंतपंक्ति जब हास्य बिखेरती थी तो मुक्ता के समान उन दांतों पर मन मूर्छित हो जाता था। पतली कमर, उन्नत वक्ष और नितम्ब उसकी चाल में एक मद उत्पन्न करते थे।

इस अत्यन्त दुःखित अवस्था में भी उसकी सुषमा और लावण्य के प्रभाव से बादशाह के मन में राग जाग उठा। उन्होंने क्रोध त्याग कर धीरे से कहा—'हुआ क्या बेगम, मुख्तसर कहो तो। वल्लाह, रोना धोना बन्द करो, इससे क्या होगा।'

बेगम ने आँसू पोंछे। वह हट कर एक तरफ कुर्सी पर बैठ गई। उसने करुण नेत्रों से बादशाह को देख कर कहा—

"उन्हें सब कुछ मालूम हो गया।"

"तो यह तो उसके लिये बाइसे फ़ख्र होना चाहिए।"

"वे ऐसे नहीं हैं हुजूर—"

बादशाह की भौंहों में फिर बल पड़ गए। उन्होंने कहा—"तो बेगम, तुम्हें भी पछतावा हो रहा है।"

"जहांपनाह, इस लौंडी ने तो अपना सब कुछ हुजूर को लुटा दिया, अब आप ऐसी बात क्यों फर्माते हैं ?"

"तो प्यारी बेगम, मैंने भी तो तुम्हारे खाविन्द को ऊँचा रुतबा दे दिया है।"

"मेरे हुजूर, ग़ैरतमन्द अस्मत को सबसे बड़ी चीज समझते हैं।"

"तो बेगम, शायद तुम्हें अस्मत का बहुत ख़याल है।"

"हुजूर शाकी न हों, मेरी बातें पूरी सुन लें—"

"कहो—"

"शाइस्त खां की बीबी पागल हो गई हैं।"

यह सुनकर बादशाह एकदम घबड़ा गए, वे कहने लगे—"खुदा के वास्ते ऐसा न कहो ?"

"वे हुजूर का नाम ले लेकर बुरी बुरी बातें कह रहीं हैं और शाइस्त खां ने मेरे खाविन्द को बुला कर कुछ सलाह की है।"

"सलाह की है ?" बादशाह ने तल्वार की मूंठ पर हाथ रखा।

"हुजूर, अजब नहीं कि शाइस्त खां, हुजूर के दुश्मनों की कुछ बुराई करे, हुजूर खबर्दार रहें।"

बादशाह का चेहरा भय से पीला पड़ गया। उसने कहा—"क्या उसका इरादा कुछ बद है ? मैंने उस हरामी को तीन हजारी जात का रुतबा दिया है।"

"मगर उसकी बीबी का क्या होगा ? उसके साथ तो हुजूर ने बहुत ज्यादती की।"

'यह ज्यादती तो उसके बेमिसाल हुस्न की है, फिर भी मुझे अफसोस है बानू। पर मैं क्या करूं ? वह राजी ही न होती थीं।

मुझे मजबूरन जोरो जुल्म करना पड़ा, मैं यह बर्दाश्त नहीं कर सकता कि कोई औरत मेरे हुक्म में दरेग़ करे।"

"आह हुजूर! आप बड़े बेदर्द हैं"—बेगम ने आंसू भरकर करुण स्वर में कहा। बादशाह का दिल पसीज गया, उन्होंने बेगम के दोनों हाथ अपने हाथ में लेकर कहा—

"नहीं जानेमन, क्या तुमने कभी कोई शिकायत की बात देखी?"

"हुजूर, मैं कुबूल करती हूं कि लौंड़ी पर हुजूर की ख़ास मेहरबानी है।"

'खैर तो यह कहो, किसी तरह उसका मुंह बन्द हो सकता है, तुम उसे समझाओ।"

"उसने आब दाना छोड़ दिया है, जमीन में मुर्दे की तरह पड़ी है, उसका दिमाग फिर गया है, वह न रोती है न चिल्लाती है, वह पागल हो गई है हुजूर, उसके सामने जाते डर लगता है।"

"यह क्या कहती हो प्यारी बेगम?"

"जहांपनाह, किसी औरत पर जितना जुल्म किया जा सकता था हो चुका, वह बर्बाद हो गई। अधखिली कली बीच ही में मसल डाली गई। अफसोस!"

बेगम चुपचाप नीची गर्दन करके बैठ गई। बादशाह भी कुछ देर चुपचाप आंखें नीची किए बैठे रहे। फिर उन्होंने व्याकुल स्वर में पूछा—

"तुम कोई रास्ता बता सकती हो प्यारी बेगम?"

"जहांपनाह, मुझे तो अपनी ही फिक्र है, उसने मेरे विषय में ऐसी ऐसी बातें मुंह से निकाली हैं कि मेरा लोगों को मुंह दिखाना भी मुमकिन नहीं रहा। आह, मैंने क्यों इस बुरे काम में हुजूर की मदद की।" वह फिर मुंह ढांपकर रोने लगी।

"बीती बात को बिसार दो बेगम, अब सलाह दो मैं क्या

करूं। तुम कहो तो…"

"नहीं जहांपनाह, मेरी एक अर्ज है।"

"जल्द कहो, ताकि इसके बाद हमलोग फिर प्यार की बातें करें।"

बेगम ने उपेक्षा के भाव को छिपाकर विनय से कहा—"आप मेरे खाविन्द को पटने का हाकिम बना कर भेज दें।"

बादशाह मुस्करा दिए। उन्होंने कहा—

"अच्छा बेगम, मैं आज ही उसे रवाना होने का हुक्म दे दूंगा।"

"और हुजूर, शाइस्त खां से खूब चौकन्ने रहिए।"

"शाइस्त खां क्या करना चाहता है?"

बेगम के चेहरे पर भय के चिन्ह आए। उसने बादशाह के पास खसक कर कहा—

"हुजूर, वह छिपे छिपे औरंगजेब से मिल गया है, वह उसे तख्त के लिए हुजूर के खिलाफ भड़का रहा है।"

बादशाह क्रोध से कांपने लगे। उन्होंने कहा—"तो मैं उसे कत्ल करा डालूंगा।"

"नहीं हुजूर, इससे तो दूसरे अमीर बदजन हो जाएंगे। उसकी औरत की बात बहुत फैल गई है। फिर वह हुजूर का रिश्तेदार भी तो है।"

"तब तुम क्या चाहती हो कि उसे भी तुम्हारे खाविन्द के पास बंगाल या उड़ीसा भेज दूं जिसमें वे दोनों मिलकर मेरी तबाही के मनसूबों को अमल में ला सकें।"

"जी नहीं, उसे आंखों से दूर भेजना तो खतरनाक है।"

"तब क्या करूं?"

"हुजूर, उसे वजीरों में रखिए, ताकि उसकी हरएक बात पर नजर रहे और हमेशा उसी तरह चौकन्ने रहिए जैसे सांप से रहा

जाता है।"

बादशाह ने बेगम को खींच कर अपती छाती से लगा लिया। और उसे चूमकर कहा—"वल्लाह बेगम, तुम बड़ी अक्लमन्द औरत हो। इत्मीनान रक्खो—मै ऐसा ही करूंगा। मगर तुम उस बदनसीब बानू से मिलती रहो। उसे तसल्ली दो—उसे चुप करो।"

बेगम ने बादशाह के बाहुपाश से छूटते हुए कहा—"जो हुक्म। मैं अपने बस भर कोशिश करूंगी?"

"तो अब……"

"नहीं हुजूर, इस वक्त मेरी तबियत बहुत नासाज है, जाती हूँ आदाब।"

वह उसी तरह बिजली की भांति कमरे से निकल गई। बादशाह मसनद पर लुढ़ककर आंखें बन्द किए कुछ सोचने लगे। इसी समय अब्बास ने आकर जमीन चूमकर कहा—"खुदाबन्द हुजूर, बड़ी बेगम ने दर्याफ्त किया है कि क्या हुजूर आराम फर्मा रहे हैं? एक निहायत जरूरी मसले पर हुजूर की राय लेनी है।" बादशाह ने उसी तरह आंखें बन्द किए हुए कहा—

"उन्हें यहीं भेज दे।"

ख्वाजा आदाब अर्ज करके चला गया।

१४

पिता, पुत्री और पुत्र

बड़ी बेगम बहुत उदास थीं। वह धीरे से आकर थकी हुई सी बादशाह के सामने एक चौकी पर बैठ गईं, बादशाह ने घबराई हुई आवाज में कहा—"इस कदर परेशान होने का क्या कारण है प्यारी बेटी?"

बेगम ने गुस्से भरी आवाज में कहा—'हुजूर, बेगम शाइस्त खां का मामला बहुत गहरा हो गया है और उस हराम-

जादी ने मेरी खुल्लम खुल्ला बदनामी की है। वह कहती है कि बड़ी बेगम अपने बाप की कुटनी है। (आखों में आंसू भरकर) हुजूर, बेटी होकर मुझे आपके लिए यह काम करने पड़ते हैं, और रियाया की नजरों में जलील होना पड़ता है। सोचिए तो, अगर रियाया और अमीर इसी तरह हमसे बदजन होते रहे तो यह तख्त खोखला हो जायगा। मुझे बहुत डर लग रहा है अब्बा।"

"किस बात का बेगम?" बादशाह ने झुककर कुछ घबराई वाणी से कहा।

"कि जल्द ही सल्तनत में एक तूफान खड़ा होने वाला है।"

"इस डर का बाइस क्या है प्यारी बेगम?"

"हुजूर को शायद इन मामलों पर गौर करने की फुर्सत नहीं मिलती। मगर शाइस्त खां को आप अच्छी तरह नहीं जानते, वह सांप का बच्चा है, चोट खाकर बिना डँसे न रहेगा।"

"बेगम, उसकी औरत को किसी तरह समझा बुझाकर खुश करलो, मैं शाइस्त खां को ठीक कर लूंगा।"

"नहीं हुजूर, उसने जान दे देने का मुकम्मिल इरादा कर लिया है और शाइस्त खां ने चुपचाप हुजूर के खिलाफ बगावत का झंडा खड़ा कर दिया है।"

"बगावत का झंण्डा खड़ा किया है?"

"जी हां, और वह आफत का परकाला मीरजुमला—जिसे हुजूर ने इतनी इज्जत बख्शी है,उन सबकोउकसा रहा है। मैं कहती हूँ अब्बा, कि यह औरंगजेब का गोइन्दा है। इसे फौज देकर दखिन न भेजिए, कन्धार जाने दीजिए। तोपखाने की वापसी का परवाना मंसूख कर दीजिए।"

"नहीं बेगम, इस अम्र पर हमने बखूबी गौर कर लिया है। ऐसा दानिशमन्द बूढ़ा और दूरन्देश आदमी इतनी बेवकूफी कभी न करेगा कि वह हमसे बग़ावत करके औरंगजेब से मिल जाय,

इससे उसे कुछ भी फायदा न होगा।"

"हुजूर तो दरबार में दिन दिन बढ़ते हुए बगावत के तूफान की कुछ भी परवा नहीं करते ?"

"कौन कौन इसमें शरीक हैं।"

"एक हो तो नाम लूं ?"

"मस्लन—"

"खलील खां, जफर खां, शाइस्त खां, मीर मुस्तफा। और भी बहुत जिनकी औरतों की हुजूर ने अस्मत लूटी है।"

बादशाह क्रोध से थर थर काँपने लगे। उन्होंने कहा—

"खबरदार बेगम, मेरे ही मुंह पर मेरी बदनामी न करो। मैंने तुम्हें और दारा को तमाम सल्तनत का मालिक बनाया है सो इसलिए नहीं, कि तुम मेरी इस तरह तौहीन करो।"

"हुजूर मैं तौहीन नहीं करती, सच्ची बात कहती हूँ। हुजूर का तख्त डगमगा रहा है। एक आंधी आने वाली है और हुजूर बे खबर हैं, आपको खबरदार करना मेरा फर्ज है ?"

"तुम्हारा इरादा क्या है बेगम ?"

"आजके दरबार खास में जो कुछ आप करने वाले हैं उस पर एक बार फिर गौर कर लिया जाय।"

"अच्छी बात है। तुम क्या चाहती हो, यह साफ साफ कह सुनाओ।"

बेगम कुछ कहने की तैयारी कर रही थी कि नकीब ने आवाज़ लगाई कि वालिए तख्त आलम पनाह दारा शिकोह तशरीफ ला रहे हैं। यह सुन कर बेगम रुक गई। बादशाह ने कहा—

"अच्छा हुआ, दारा भी आ गया। अब सब बातों पर ठीक तौर पर सोच विचार कर लिया जायगा।"

दारा ने आकर पहिले ४० कदम के फासले से बादशाह को झुककर तीन बार सलाम किया, फिर एक कदम आगे बढ़ दुबारा

सलाम किया। इसके बाद वह आगे बढ़कर बादशाह के पास जा खड़ा हुआ।

जाहिरा तौर पर देखने में तो दारा ने पिता के प्रति इतनी श्रद्धा और सम्मान का भाव प्रगट किया था, परन्तु गुस्से से उसका चेहरा लाल हो रहा था और उसकी भौंहों में बल पड़े हुए थे। उसने एक बार बादशाह की नजर बचाकर बहिन की ओर मतलब भरी नजर से देखा। बेगम ने एक इशारे से उसे समझा दिया कि वह शान्त-संयत बना रहे। इसपर दारा चुपचाप नीची गर्दन किए खड़ा हो गया।

बादशाह ने स्नेह, चिन्ता की दृष्टि से उसे देखकर कहा--"तुम भी बहुत मुतफिक्र मालूम देते हो, आखिर ऐसी क्या बात है ?"

"हुजूर, मैं कुछ भी अर्ज नहीं कर सकता।" दारा का कण्ठ-स्वर कांप रहा था और उसका क्रोध स्पष्ट हो रहा था।

बादशाह ने प्रश्नसूचक दृष्टि से उसकी ओर देखकर कहा—"ऐसी कौनसी बात है जिसने तुम्हें इस कदर परेशान कर रक्खा है ?"

"सब कुछ नया है हुजूर, कयामत वर्पा होने वाली है।"

"तुमलोग हमेशा कयामत-मुसीबत और झंझट के सपने देखा करते हो। मेरे बेटे, ठन्डे दिमाग से सल्तनत का काम-काज देखो, ये झंझट तो होते ही रहते हैं। इतनी बड़ी सल्तनत योंही नहीं चलती। अभी तुम्हें मुद्दत तक इसका बोझा सिर पर उठाना है। इस कदर परेशान होने से तो नहीं चलेगा।"

दारा ने क्रोध दबा सकने में असमर्थ हो, जरा तेज स्वर में कहा-"हुजूर इस फर्माबर्दार पर हमेशा शाकी बने रहते हैं, दुश्मनों को सिर पर चढ़ाते हैं। नए नए दुश्मन पैदा करते रहते हैं। मैं अकेला ही सब ठीक-ठाक कर सकता हूँ, मगर हुजूर की धांधले-बाजी कुछ करने नहीं देती।"

बादशाह पुत्र की धर्षणा खाकर कुछ देर चुप बैठे रहे। फिर उन्होंने धीमे स्वर में कहा—

"सल्तनत की बेहतरी के लिए जो मैं ठीक समझता हूँ वह करता हूं। मेरे प्यारे बेटे, तुम खूब जानते हो कि मैं तुम्हें कितना चाहता हूँ और तुम्हारे लिए क्या क्या कर रहा हूँ। ताजोतख्त तुम्हें मिले—यही मेरी आरजू है, और इसलिए मैंने अपने सब बेटों को दूर कर दिया है। सिर्फ तुम्हीं को छाती से लगाए बैठा हूं। तुम कितने लायक, फर्मांबर्दार, जवान, हिम्मतवर, आकिल हो यह देखकर मेरी छाती फूल उठती है, फिर भी तुम मुझ पर ऐसी तोहमत लगाते हो कि जो बेटे को बाप पर नहीं लगानी चाहिए। फिर इसके सिवा मेरे बेटे! अभी तक मैं ही बादशाह हूँ।"

यह कहकर बादशाह कुछ देर चुप बैठे रहे। उनके होठ फड़क रहे थे, और दिल में ज्वार उठ रहा था। बेगम और दारा चुप-चाप सिर नीचा किए बैठे सुन रहे थे।

बादशाह ने फिर कहना शुरू किया—

"जब तुम छोटे से नन्हें बच्चे थे—तब तुम्हारी जन्नतनशीन नेकमां ने, जिसकी मुहब्बत और खिदमत मैं जिन्दगी भर नहीं भूल सकता—तुम्हें आखिरी लहमों में मेरी गोद में बैठा कर मरते मरते हंसकर मुझसे कहा था—'दीनों दुनिया के बादशाह! मेरे मालिक! मेरे जाने का ग़म न करना। यह बेटा मैंने तुम्हें दिया है, तुम्हारी आंखों से इसकी मैंने आंखें बनाई हैं, तुम्हारे होठों से इसके होठ रंगे हैं। इसे मैंने अपना कलेजा दिया है। यह तुम्हारी असली तस्वीर है, इसे तुम अपने बाद बादशाह बनाना। यह मुल्क की हुकूमत दयानतदारी से करके मेरा और तुम्हारा नाम रोशन करेगा।'

"वह तुम्हें मेरे कदमों में डालकर मर गई। और मैंने तुम्हें उठाकर छाती से लगा लिया। खुदा और कुरान की कसम खाकर उस फ़रिश्ता जात नेक बीबी की बेरूह पेशानी को छूकर मैंने वादा

किया था कि यही मेरा बेटा ताजोतख्त का वारिस होगा। और बेटे, उस बात को आज बाईस साल हो गए, मैं बराबर उस बात को पूरी करने की कोशिश में हूं और ताजीश्त रहूँगा।"

बादशाह की जबान कांपने लगी और उनकी आँखों में आंसू भर आए। वे आगे न बोल सके।

दारा ने झुककर बादशाह के कदम चूमें, फिर उनका पल्ला आंखों से लगा लिया। बादशाह ने छोटे बच्चे की तरह दारा के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा—"मेरे प्यारे बच्चे, अब तुम अपने बादशाह और बूढ़े बाप की कमजोरियों पर ऐसी कड़ी नजर रखते हो? वह सामने देखो, जमुना के किनारे ताज खड़ा चांदनी में किसी की इन्तजारी कर रहा है। जानते हो किसकी इन्तजारी कर रहा है? इसी बदनसीब तुम्हारे बूढ़े बाप की। उन पत्थरों के नीचे मेरी सबसे प्यारी चीज महफूज रखी है। जबतक मैं वहां पहुंच कर आराम न करूं—मेरे बच्चों, तुमलोग मेरी कमजोरियों को दर गुजर करते चलो। और मुस्तैदी से सल्तनत को सम्हालो। खुदा तुम्हें सुर्खरू करे।"

इतना कहकर बादशाह थक से गए। वे मसनद पर लुढ़क गए। दारा और जहांआरा का गुस्सा हवा हो गया था। वे चुपचाप नीचा सिर किए अभी तक बैठे थे। कमरे में सन्नाटा था। दारा ने सिर उठाकर धीमे स्वर में कहा—

"जहांपनाह का खादिम को क्या हुक्म है? मुझे जो हुक्म होगा बसरो चश्म बजा लाऊंगा।"

बादशाह ने कहना प्रारम्भ किया—"मीरजुमला ने जो दकन-फतह की बात कही है वह मेरे जंच गई। बेटे, तुम भी गौर करोगे तो समझ जाओगे। बुखारा और काबुल की बंजर और पथरीली जगह, खूँखार और गरीब रियाया, ऊबड़ खाबड़ और तकलीफदह रास्ता, हमारी मुश्किलों को बढ़ाता है। कन्धार की

फतह से हम फायदा भी नहीं उठा सकते, फौज पर जो खर्चा होगा वह भी न वसूल कर सकेंगे—जैसा अब तक हुआ है। इसके बनिस्बत दकन मुल्क हिन्दुस्तान का ही एक हिस्सा है। जब तक वहां हमारा अमलदरामद नहीं हो जाता—हम सही मानों में शाहे हिन्द नहीं कहला सकते। इसके अलावा वहां के समन्दर के किनारे चीन, जापान, योरोप और अरब के व्यापार के मुहाने हैं। उन्हें कब्जे में करना न सिर्फ इसीलिए ज़रूरी है कि बेशुमार दौलत उनके जरिये व्यापारी नुक्ते से हम पैदा कर सकते हैं, वरन उस पर मुल्क की हिफाजत के खयाल से भी नजर रखना ज़रूरी है। जब इन मुल्कों के बाशिन्दे आज व्यापार के लिए आते हैं तो कल वे जहाजों में सिपाहियों और तोपों को भी भर कर ला सकते हैं, और ऐसी हालत में अगर वहां हमारा बन्दोवस्त सही नहीं है—तो उन्हें रोकना मुमकिन ही नहीं। यह बड़ी भारी दूरन्देशी की बात है। तुमने फरंगियों को देखा है किस कदर फसादी तबियत के और लड़ाके आदमी हैं। अदब करना और डरना तो उन्होंने सीखा ही नहीं। इन तमाम बातों के अलावा वहां गोलकुण्डा, बीजापुर की सर जमीन में बेशुमार कीमती पत्थरों की खानें, वहां के शहरों में बेशुमार दौलत, और आदमियों में जबर्दस्त काम करने की ताक़त है। बस, एक बार अगर दकन पूरे तौर पर शाही अमल में आ जाय—तो मुग़ल तख्त की जड़ें पाताल तक पहुँच जायंगी। तुम और तुम्हारी औलाद पुश्त दर पुश्त मुल्क पर हुकूमत कर सकेंगी।"

इतना कहकर बादशाह कुछ देर चुप हो गए। वे गौर से दारा के चेहरे का उतार-चढ़ाव देखते रहे। दारा ने कहा—

"मैं हुजूर की बात को तो नहीं काट सकता। हुजूर बहुत दूर की बातें सोच रहे हैं। मगर फिलहाल तख्त पर जो खतरा छा रहा है उसका क्या होगा?"

"कौन सा खतरा मेरे बेटे ?"

"दरबार के सब अमीर भीतर ही भीतर हम से खिलाफ हो रहे हैं, लोग छिप कर जगह जगह पोशीदा मश्वरे करते हैं। शुजा, औरंगजेब और मुराद अपने अपने जासूसों से अमीरों को मुट्ठी में करने और नमकहरामी कराने पर आमादा हैं। फिर हुजूर के कारनामों से सब अमीर···खैर मैं हुजूर से उन बातों की कोई चर्चा नहीं करना चाहता, जिन्हें हुजूर बखूबी जानते हैं।"

"जाने दो उन बातों को। ये अमीर लोग टुकड़े के लोभी कुत्ते हैं। उन्हें वश में रखो। दारा, मैं तुम्हें चेताए देता हूँ कि इन अमीरों से तुम अपने बर्त्ताव को भी ठीक करो। मैं बराबर शिकायत सुनता हूँ कि तुम उनकी हिजो करते रहते हो।"

दारा ने बात काट कर कहा—"हुजूर, मैं किसी की परवा नहीं करता। मुझे हुजूर मौका दें तो मैं बता दूँ कि इन बागी अमीरों को किस तरह ठीक किया जा सकता है।"

बादशाह ने नर्मी से कहा—"नहीं मेरे बेटे, यह ठीक खयाल नहीं—"

बेगम ने बीच ही में बात काट कर कहा—"खैर, तो हुजूर ने क्या मीरजुमला को दकन भेजने का मुकम्मिल इरादा कर ही लिया है ?"

"यह तो तुमलोग सोच लो। मैंने जो दलीलें दी हैं वह तो तुमने सुन ही लीं।"

दारा ने अब उतावली से कहा—

"तो हुजूर, मेरी एक दर्ख़ास्त है—"

"वह क्या ?"

"मीरजुमला को कुछ शर्तों की पाबन्दी से दकन भेजा जाय।"

"वह शर्तें क्या होंगी ?"

"एक तो यह—कि औरंगजेब किसी मामले में दस्तन्दराजी

न करे—"

"अच्छा दूसरी ?"

"वह दौलताबाद से बाहर न जाय—"

'और तीसरी ?—"

"वह अपने सूबे का इन्तजाम करे—किसी लड़ाई में शरीक न हो—"

"बस ?"

"यह भी कि मीरजुमला अपने बाल-बच्चों, मालमता तथा रिश्तेदारों को आगरे में छोड़ जाय—"

"यह शर्त तो बहुत कड़ी है। मीरजुमला मामूली आदमी नहीं—मगर खैर, मैं उससे तुम्हारी तसल्ली के लिऐ ये शर्तें मंजूर करा लूंगा।"

दारा ने कहा—"तो मुझे उसे दकन फौज देकर भेजने में कोई उज्र नहीं है।"

बादशाह ने सांस ली और कहा—

"तो तुम बहुत जल्द दरबारे खिलवत का इन्तजाम करो। और तब तक अमीर मीरजुमला को खुश रखो।"

"बहुत खूब—"

"और तुम प्यारी बेगम"—बादशाह ने जहाँआरा की ओर देख कर कहा—"दरबार के मुनासिब इन्तजाम में दारा की मदद करो।"

"जो इर्शाद"—दोनों बादशाह को झुककर सलाम करके चले गए। बादशाह गहरे सोच में डूब गए।

१५
बेगम की सवारी

दिन ढल गया था। और ढलते हुए सूरज की सुनहरी किरणें दिल्ली के बाज़ार में एक नई रौनक़ पैदा कर रही थीं। अभी नई दिल्ली बस रही थी। आगरे की गर्मी से घबरा कर बादशाह शाहजहां ने जमुना के किनारे अर्धचन्द्राकार यह नया नगर बसाया था। लाल क़िला और जामा मस्जिद बन चुकी थी और उनकी भव्य छवि दर्शकों के मन पर स्थायी प्रभाव डालती थी। फैज़ बाजार में सभी अमीर उमरावों की हवेलियां खड़ी हो गई थीं। इस नए शहर का नाम शाहजहानाबाद रखा गया था, परन्तु पठानों की पुरानी दिल्ली की बस्ती अभी तक बिल्कुल नहीं उजड़ चुकी थी, बल्कि कहना चाहिए कि इस शाहजहानाबाद के लिए बहुत सा मलवा सामान पुरानी दिल्ली के महलात के खण्डहरों से लिया गया था, जो पुराने क़िले से हौज ख़ास और कुतुबमीनार तक फैले हुए थे।

नदी की दिशा को छोड़कर बाकी तीनों ओर सुरक्षा के लिए पक्की पत्थर की शहरपनाह बन चुकी थी, जिसमें बारह द्वार और सौ सौ क़दमों पर बुर्ज बने हुए थे। शहरपनाह के बाहर ५।६ फुट ऊँचा कच्चा पुरवा था। परन्तु खाई नहीं थी। सिर्फ सलीमगढ़ का किला बीच जमुना में था जो एक विशाल टापू प्रतीत होता था। और जिसे बारह खम्भों वाला पुख्ता पुल लाल किले से जोड़ता था। अभी इस नगर को बने तीस ही बरस हुए थे, फिर भी यह मुगल साम्राज्य की राजधानी के अनुरूप शोभायमान नगरी की सुषमा धारण करता था।

शहरपनाह नगर और क़िला दोनों को घेरे थी। यदि शहर की उन बाहरी बस्तियों को—जो दूर तक लाहौरी दर्वाजे तक चली गयी थी और उस पुरानी दिल्ली की बस्तियों को, जो चारों ओर दक्षिण पच्छिम भाग में फैली थीं, मिला लिया जाय तो जो रेखा शहर के बीचों बीच खींची जाती, वह साढ़े चार या पांच मील लम्बी होती। बाग़ात का विवरण पृथक है, जो सब शाहजादों, अमीरों और शाहजादियों ने पृथक पृथक लगाए थे।

शाही महलसरा और मकान क़िले में थे। किला भी लगभग अर्धचन्द्राकार था, इसकी तली में जमुना नदी बह रही थी। परन्तु किले की दीवार और जमुना नदी के बीच बड़ा रेतीला मैदान था जिसमें हाथियों की लड़ाई दिखाई जाती थी। यहीं खड़े होकर सरदार, अमीर, और हिन्दू राजा की फौजें झरोखे में खड़े बादशाह के दर्शन किया करती थीं। किले की चहारदिवारी भी पुराने ढंग के गोल बुर्जों की वैसी ही थी जैसी शहरपनाह की दीवार थी। यह ईंटों और लाल पत्थर की बनी हुई थी। इस कारण शहरपनाह की अपेक्षा इसकी शोभा अधिक थी। शहरपनाह की अपेक्षा यह ऊँची और मजबूत भी थी, उस पर छोटी छोटी तोपें चढ़ी हुई थीं, जिनका मुंह शहर की ओर था। नदी की ओर छोड़ कर किले की सब ओर गहरी खाई थी जो जमुना के पानी से भरी हुई थी। इसके बांध खूब मजबूत थे। और पत्थर के बने थे। खाई के जल में मछलियां बहुत थीं।

खाई के पास ही एक भारी बाग था, जिसमें भांति भांति के फूल लगे थे। किले की लाल रंग की सुन्दर इमारत के आगे सुशोभित यह बाग अपूर्व शोभा विस्तार करता था। इसके सामने एक शाही चौक था जिसके एक ओर किले का दर्वाजा था। दूसरी ओर शहर के दो बड़े बड़े बाजार आकर समाप्त होते थे।

किले पर जो राजा, रजवाड़े और अमीर पहरा चौकी देते थे, उनके

डेरे तम्बू खेमे इसी मैदान में लगे हुए थे । इनका पहरा केवल किले के बाहर ही था। किले के भीतर उमरा और मनसबदारों का पहरा होता था। इसके सामने ही शाही अस्तबल था, जिसके अनेक कोतल घोड़े मैदान में फिराए जा रहे थे, इसी मैदान के सामने ही तनिक हटकर 'गूजरी' लगती थी, जिसमें अनेक हिन्दू और मुसलमान ज्योतिषी, नजूमी अपनी अपनी किताबें खोले और धूप में अपनी मैली शतरंजी बिछाए बैठे थे। ग्रहों के चित्र और रमल फेंकने के पासे उनके सामने पड़े रहते थे। बहुत सी मूर्खा स्त्रियां सिर से पैर तक बुर्क़ा ओढ़े या चादर में शरीर को लपेटे, उनके निकट खड़ी थीं और वे उनके हाथ मुंह को भली भांति देख पाटी पर लकीरें खींचते तथा उंगलियों की पोर पर गिनते। उनका भविष्य बताकर पैसे ठग रहे थे। इन्हीं ठगों में एक दोगला पोर्चुगीज बड़ी ही शांत मुद्रा में कालीन बिछाए बैठा था, इसके पास स्त्री पुरुषों की भारी भीड़ लगी थी पर वास्तव में यह गोरा धूर्त बिल्कुल अपढ़ था। और उसके पास एक पुराना जहाजी दिग्दर्शक यन्त्र था और एक रोमन कैथोलिक सचित्र प्रार्थना पुस्तक थी। वह बड़े ही इतमीनान से कह रहा था–"योरोप में ऐसे ही ग्रहों के चित्र होते हैं।"

पीछे जिन दो बाजारों की यहां चर्चा हुई है, जो किले के सामने मैदान में आकर मिले थे, एक सीधा और प्रशस्त बाजार चांदनी चौक था, जो किले से लगभग पच्चीस तीस कदम के अंतर से आरंभ होकर सीधा पच्छिम दिशा में लाहौरी दर्वाजे तक चला जाता था। बाजार के दोनों ओर महरावदार दूकानें थीं जो ईंटों की बनी थीं तथा एक मंजिला ही थीं। इन दूकानों के बरामदे अलग अलग थे और इनके बीच में दीवारें थीं। यहीं बैठकर व्यापारी अपने अपने ग्राहकों को पटाते थे, और माल असबाब दिखाते थे। बरामदों के पीछे दूकान के भीतरी भाग में माल

असवाब रखा था। तथा रात को बरामदे का सामान भी उठाकर वहीं रख दिया जाता था। इनके ऊपर व्यापारियों के रहने के घर थे जो सुन्दर प्रतीत होते थे।

नगर के गली-कूचे में मनसबदारों, हाकिमों और धनी व्यापारियों की हवेलियां थीं। जो बड़े बड़े मुहल्लों में बंटी हुई थीं। बहुत सी हवेलियों में चौक और बागीचे थे। बड़े बड़े मकानों के आसपास बहुत मकान घास फूस के थे, जिनमें खिदमतगार, नफर, नानबाई आदि रहते थे।

बड़े बड़े अमीरों के मकान नदी के किनारे शहर के बाहर थे। जो खूब कुशादा, ठण्डे, हवादार और आरामदेह थे। उनमें बाग, पेड़, हौज और दालान थे। तथा छोटे छोटे फव्वारे और तहखाने भी थे। जिनमें बड़े बड़े पंखे लगे हुए थे, जिनमें खस की टट्टियां लगी थीं। उनपर गुलाम नौकर पानी छिड़क रहे थे।

बाजार की दुकानों में जिन्सें भरी थीं, पश्मीना, कमख़ाब, ज़रीदार मन्डीले और रेशमी कपड़े भरे थे। एक बाजार तो सिर्फ मेवों ही का था, जिसमें ईरान, समरकन्द, बलख, बुखारा के मेवे-बादाम, पिस्ता, किशमिश, बैर, शफतालू, और भांति भांति के सूखे फल और रूई की तहों में लिपटे बढ़िया अंगूर, नाशपाती, सेव और सर्दे भरे पड़े थे। नानबाई, हल्वाई, कसाइयों की दुकानें गली गली थीं। चिड़ियाँ बाजार में भांति भांति की चिड़ियाँ मुर्गी, कबूतर, तीतर मुर्गाबियां बहुतायत से बिक रही थीं। मछली बाजार में मछलियों की भरमार थी। अमीरों के गुलाम ख्वाजासरा व्यस्त भाव से अपने अपने मालिकों के लिए सौदे खरीद रहे थे। बाजार में ऊंट घोड़े, वहली, रथ, तामजाम, पालकी और मियानों पर अमीर लोग आ जा रहे थे। चित्रकार, नक्काश, जड़िए, मीनाकार, रंगरेज और मनिहार अपने अपने कामों में लगे थे।

इस वक्त चांदनी चौक में एक खास चहल पहल नजर आ

रही थी। इस समय बहुत से बरकन्दाज,प्यादे, भिश्ती, और झाड़ू-बर्दार फुर्ती से अपने अपने काम में लगे हुए थे। बरकंदाज और सवार लोगों की भीड़ को हटाकर रास्ता साफ कर रहे थे। झाड़ूबर्दार सड़कों का कूड़ा कर्कट हटा रहे थे। दूकानदार चौकन्ने होकर चौकस अपनी अपनी दूकानों को आकर्षक रीति पर सजाए उत्सुक बैठे थे। इसका कारण यह था कि आज बेगम की सवारी किले से इसी राह आ रही थी।

बेगम एक पालकी पर सवार थी। जिस पर एक कीमती जरबफ़्त का परदा पड़ा था, जिसमें जगह जगह जवाहरात टंके थे। पालकी के चारों ओर ख्वाजासरा मोरछल और चंवर डुलाते पालकी का घेरा डाले चल रहे थे। वे जिसे सामने पाते उसी को धकेल कर एक ओर कर देते थे। बहुत से जार्जियाना गुलाम सुनहरी, रुपहली डंडे हाथों में लिए जोर जोर से हटो बचो, हटो बचो, चिल्लाते जा रहे थे। उनके आगे आगे भिश्ती तेजी से दौड़ते हुए सड़क पर पानी का छिड़काव करते जाते थे। मोरछलों और चंवरों की मूठ सोने चांदी की जड़ाऊ थी। पालकी के साथ सैकड़ों बांदियां सुनहरी पात्रों में जलती हुई सुगन्ध लिए चल रही थीं। सबसे आगे दो सौ तातारी बांदियां नंगी तलवारें हाथ में लिए, तीर कमान कन्धे पर कसे, सीना उभारे, सफ बांधे चल रही थीं। और सब के पीछे एक मनसबदार अपने घुड़सवार रिसाले के साथ बढ़ रहा था। यह मनसबदार एक अल्पवयस्क अति सुन्दर युवक था। उसका रंग अत्यन्त गोरा, आंखें काली और चमकदार तथा बाल घुंघरवाले थे। वह बहुमूल्य रत्नजटित पोशाक पहिने था—और इतराता हुआ सा अपने रिसाले के आगे आगे चल रहा था। उसका घोड़ा भी अत्यन्त चंचल और बहुमूल्य था। वास्तव में यह तेजस्वी सुन्दर मनसबदार नजावत खां था, जो शाहे बलख का भतीजा और बुखारे का शाहजादा

मशहूर था और बादशाह शाहजहां का कृपापात्र मनसबदार था।

इस समय बहुत से अमीर उमरा चांदनी चौक की सैर को निकले थे। इन अमीरों के ठाठ भी निराले थे। किन्हीं के साथ दस बीस, किन्हीं के साथ इस से भी अधिक नौकर चाकर गुलाम पैदल दौड़ रहे थे। अमीर घोड़े पर सवार ठुमकते, धीरे धीरे पान कचरते हुए अकड़ कर चल रहे थे। कुछ चलते चलते ही पेचवान पर अम्बरी तम्बाकू का कश खींच रहे थे। साथ साथ खवास गंगा जमनी काम की फर्शी हाथों हाथ लिए दौड़ रहे थे। गुलामों में किसी के पास पानदान किसी के पास उगालदान किसी के पास इत्रदान था। कोई सरदार की जड़ाऊ तलवार लिए चल रहा था और इस प्रकार अमीर का बोझ हल्का कर रहा था। परन्तु ये अमीर चाहे जिस शान से जा रहे हों, ज्योंही बेगम की पालकी उनकी नजर में पड़ती उनकी सब शान हवा हो जाती। जो जहां होता तुरन्त घोड़े से उतर कर सड़क के एक कोने में अपने आदमियों सहित हाथ जोड़कर अदब से खड़ा हो जाता और पालकी की ओर मुंह करके तीन बार कोर्निश करता। जिसकी सूचना तुरंत बेगम को पालकी के भीतर दे दी जाती।

इस प्रकार सूचना देने के लिए जो तरुण सरदार पालकी के साथ चल रहा था वह एक प्रकार से किशोर वय का था। अभी पूरा तारुण्य उसके मुख पर प्रकट नहीं हुआ था। वह एक सुकुमार सुन्दर और सजीला किशोर था। वास्तव में यह शाहजादी की उस्तानी का बेटा था जिसका बचपन शाहज़ादी के साथ ही महलसरा में बीता था और जिसे प्यार से शाही हरम में दूल्हाभाई कहते थे। यद्यपि इसकी हैसियत एक सेवक ही की थी, पर शाहजादी की कृपा दृष्टि से यह ढीठ हो गया था और अपने को किसी शाहजादे से कम न समझता था। उसके सब ठाठबाट भी शाहजादों ही के समान थे।

धीरे धीरे सवारी आगे बढ़ती जा रही थी। इसी समय सामने से एक हिन्दू सरदार की सवारी आ गई। यह हिन्दू सरदार बूंदी का हाड़ा राजा राव छत्रसाल था। इसकी अवस्था छब्बीस से अधिक न होगी। उसका उज्ज्वल श्यामल मुख, मूछों की पतली ऐंठी हुई रेखा, बड़ी बड़ी काली आंखें, गठीला शरीर, बांकी छटा देखते ही बनती थी। वह कमर में दो तलवारें बांधे था। और उसके साथ पचासों सवार, पैदल सिपाही और नौकर-चाकर सेवक और मुसाहिब चल रहे थे। दिल्ली में रहने वाले दरबारी उमरावों से इसकी छटा ही निराली थी। ज्यों ही बेगम की सवारी उसकी दृष्टि में पड़ी, वह रास्ते से एक ओर हटकर घोड़े से उतर कर सड़क के एक कोने में दो सौ कदम के अंतर से खड़ा हो गया– और ज्योंही बेगम की सवारी उसके निकट आई, उसने जमीन तक झुककर तीन बार कोर्निश की। नकीब ने पुकार लगाई और दूल्हा बाबा ने बेगम को इसकी सूचना दी। शाहजादी ने तुरन्त अपनी सवारी आगे बढ़ना रोक दिया। और एक रत्नजटित कमख़ाब की थैली में रख कर पान का बीड़ा उसके पास भेज कर कहलाया–कि वह भी सवारी के साथ रह कर उसे रौनक बख्शे। राव छत्रसाल ने फिर पालकी की ओर रुख करके सलाम किया, पान का बीड़ा आदर पूर्वक लिया और दो कदम पीछे हटकर खड़ा हो गया।

सवारी आगे बढ़ी और यह हिन्दू सरदार भी पालकी के पीछे पीछे अपने सवारों के साथ चला। दूल्हा बाबा ने बेगम को इस बात की इत्तला दे दी।

परन्तु जो मनसबदार पालकी के साथ साथ चल रहा था उसकी आंखों में इस हिन्दू सरदार को देखते ही खून उतर आया। परन्तु इस तरुण राजा ने उसकी तनिक भी परवाह नहीं की। अपने घोड़े को एड़ दे कर और चार कदम आगे बढ़ वह पालकी के पीछे पीछे चलने लगा।

किला और शहर के बीच—आज जहां दिल्ली का रेलवे स्टेशन और कंपनी बाग़ है, वहां इस बेगम ने एक सराय बनवाई थी। यह सराय उस समय भारतवर्ष भर में श्रेष्ठ इमारत थी। इसकी सारी इमारतें दुमंजिली थीं। और ऊपर बड़े बड़े आलीशान सुसज्जित कमरे बने थे। जिस में देश देश के लोग ठहरते और तफरीह करते थे। सराय में नहाने के लिए पक्के हौज, नल और बड़े बड़े बावर्चीखाने बने थे। इस सराय के इन्तजाम के लिए बेगम ने योग्य कर्मचारी नियुक्त किए थे। इस समय तक भी सराय समूची बनकर तैयार नहीं हो पाई थी और हजारों कारीगर मिस्त्री उसमें चित्र-विचित्र काम कर रहे थे।

इस वक्त बेगम की सवारी इसी सराय की ओर जा रही थी। इसकी सूचना सराय के दारोगा को भी मिल चुकी थी। और वहां भी बेगम की अवाई की धूमधाम मची थी। सब राह-वाट साफ करके छिड़काव किए गए थे। बहुत से खोजे, दास-दासी अपने अपने काम में लगे थे। इस समय सराय का वह भाग जहां बेगम तशरीफ रखने वाली थीं और जहां एक खूबसूरत छोटा सा बागीचा था भली भांति सजाया गया था। पहरे पर्दे का वहां मुकम्मिल इन्तजाम कर दिया गया था। बागीचे के बीच संगेमरमर की बारहदरी थी। वहां बेगम की सवारी उतरी।

शाम की भीनी सुगन्ध हवा में भर रही थी। बाग़ के माली ने सारी बारहदरी को फूलों से सजाया था। हुजूर शाहजादी आज रात इसी बारहदरी में आराम और तफरीह करना चाहती थीं। ख्वाजासरा और बांदियों ने मसनद, चांदनी और गाव तकिए लगा दिए। बेगम मसनद पर लुढ़क गईं। कुछ देर आराम करने पर बेगम ने दूल्हा बाबा को हुक्म दिया—'वह हिन्दू राजा जो सवारी के साथ है उसे हुक्म दो कि हमारे यहां मुकीम रहने तक अपने पहरे चौकी रखे और अमीर नजावत खां सराय

के बाहरी हिस्से में अपने सिपाहियों सहित चला जाय।'

शाहजादी का हुक्म दोनों उमरावों को पहुँचा दिया गया। दोनों ने भेदभरी निगाहों से एक दूसरे को देखा। तलवार की मूठ पर दोनों का हाथ गया। और क्षण भर दोनों एक दूसरे को खूनी नजरों से देखने लगे। नजावत खां ने बालिश्त भर तलवार म्यान से खींच ली और गुस्से भरी आवाज में शेर की तरह गुर्रा कर-कहा—"खुदा की कसम, मैं यह हरगिज नहीं बर्दाश्त कर सकता कि एक काफिर को मुसलमान के बराबर रुतबा दिया जाय। मैं चाहता हूँ कि इसी वक्त तेरे दो टुकड़े करके तेरा गोश्त कुत्तों को खिला दूँ।"

"चाहता तो मैं भी यही हूं कि इसी वक्त तुम्हारा सर भुट्टे सा उड़ा दूँ। मगर बेहतर यही है कि अभी आप जनाब शाहजादा नजावत अलीखान बहादुर, चुपचाप अपनी नौकरी ठण्डे ठण्डे बजा लाएं जैसा कि हुजूर शाहजादी का हुक्म हुआ है, और सुबह तक भी आप के यही इरादे और दमखम रहे तो फिर हम दोनों को अपने अपने इरादे पूरा करने की बहुत गुंजाइश है।" नजावत खां ने इसका कोई जवाब नहीं दिया। वह गुस्से से होठ चबाता हुआ चला गया। राव छत्रसाल तनिक हटकर अपने घोड़े पर बैठ गया।

१६

बेगम की बारहदरी

चांदनी रात थी। और बारहदरी के बाहरी चमन में शाहजादी अपनी खास लौंडियों के बीच मसनद पर पड़ी अपनी प्रिय अंगूरी शराब पी रही थी। यों तो उसके लिऐ फारस, काश्मीर और काबुल से कीमती शीराजी और इस्तंबोल मंगाई जाती थी, परन्तु उसकी अपनी शौक की प्रिय वस्तु वह थी—जो खास उसी की

नजरों के सामने अंगूर में गुलाब और बहुत सी मेवाएँ डाल कर बनाई जाती थी। यह अति सुगन्धित और स्वादिष्ट होती थी और बेगम जब खुश होती-इस शराब के दौर पर दौर चढ़ाती थी।

आज वह खुश तो न थी। बहुत सी चिन्ताएँ उसके मस्तिष्क को परेशान कर रही थीं। यों तो इतनी बड़ी मुगल संतनत की राजनीति में वह सक्रिय भाग लेती थी, उसी का सर दर्द थोड़ा न था। परन्तु इस समय तो उसे अपनी ही चिन्ता ने आ घेरा था। इसी से घबरा कर वह क़िले के भारी वातावरण को छोड़ यहां चली आई थी।

अकबर बादशाह के समय ही से यह दस्तूर चला आ रहा था कि मुगल बादशाहों के खानदान की शाहजादियां शादी नहीं कर पाती थीं, इससे अनेक बुराइयां पैदा होती रहतीं और मुगल हरम का वातावरण हमेशा दूषित रहता था।

परन्तु दारा शाहजादी का विवाह नजावत खां से करने की इच्छा प्रकट कर चुका था। नजावत खां वल्ख़ का शाहजादा था, सुन्दर और जवान था। वह शाहजादी को प्रेम भी करता था। बहुत दिन से वल्ख-बुखारा और मुगल खानदान में चख चख चली आती थी। वह चाहता था कि यदि दोनों खानदानों में रिश्ता हो जाय तो यह पुरानी शत्रुता भी जाती रहे। परन्तु इस शादी में बहुत बाधाएं थीं। प्रथम तो बादशाह ही वह शादी करने को राजी नहीं होते थे। उन्हें उनके साले शाइश्त खां ने समझा दिया था कि यदि यह शादी कर दी गई तो अवश्य ही नज़ावत खां को शाहजादों का रुतवा देना पड़ेगा। जब कि इस समय वे चाकर से अधिक दर्जा नहीं रखते हैं। फिर शाहे बलख से लड़ने के मंसूबे भी अभी थे और इसके राजनैतिक कारण बने ही हुए थे। परन्तु इसकी सब से बड़ी बाधा यह थी कि शाहजादी उस हिन्दू राजा बूंदी के छत्र साल को चाहती थी। उन दिनों राजपूतों से

मुगल खानदान में रिश्ते होते थे। अभी तक अनेक राजाओं की बेटियां मुगल हरम में आई थीं, परन्तु कोई मुगल शाहजादी किसी राजपूत के घर नहीं गई थी। अब तक जिम्मेदार राजपूत सरदार का खुल्लम खुल्ला शादी कर के रनवास में एक शाहजादी को ले जाना बहुत ही कठिन और अव्यवहार्य था, फिर मुगल अदब-कायदे तो ऐसे थे कि बड़े से बड़े हिन्दू राजा को मुगल शाहज़ादियों के सामने भी उसी तरह झुकना पड़ता था जैसे बादशाह के सामने। ऐसी हालत में इन शादियों से मुगल रुआब में भी कमी आ जायगी, ऐसा भी सोचा जाता था। परन्तु प्रीत की कटारी का घाव जब खा लिया जाता है तो इन सब बातों पर फिर विचार नहीं किया जाता। शाहजादी इस राजपूत के प्रेम में दीवानी थी। और यह बात नजावत खां और छत्रसाल दोनों ही जानते थे, इसी से वे एक दूसरे को खूनी आंखों से देखते थे।

इसी मामले में एक तीसरा शिगूफा भी था। वह था दुलारा, बेगम की उस्तानी का लड़का, वह बेगम के साथ बचपन में खेला था और शायद अभी बेगम से उम्र में कुछ ही कम था। परन्तु बेगम की मुहब्बत का दम भरता था और अपने को शाहजादे से कम न समझता था। वह इतना मूर्ख था कि शाहजादी के विनोद और कृपाओं को वह प्यार की नजर से देखता था। वह सोचा करता था कि बेगम से शादी कर लेने पर संभव है वही बादशाह बन जाय। कभी कभी वह डींगें भी हांकता था और उसकी हिजो भी बहुत होती थी। यहां उसका एक उदाहरण दिया जाता है।

शाहजादी ने उसे खानजादा का खिताब दिया था और उसकी जिद से उसे इलम और शाही मरातिब रखने का अधिकार दे दिया था, तथा उसे शाही सिपहसालारों की भांति पदवी देकर सवारों का सरदार बना दिया था। एक दिन वह बेगम के महल

को जा रहा था कि सामने से महावत खां सिपहसालार आते मिल गए। जब वे दोनों पास पास से गुजरे, तो जुलूस के सैनिकों में झगड़ा हो गया। उधर महावत खां ने उसके झण्डे को देखा तो अपना इलम तह कर लिया और बिना ही झण्डे के शाही हुजूर में जा पहुंचा। जब बादशाह को इसकी सूचना मिली, तो उसने इसका कारण पूछा। महावत खां ने कहा---"हुजूर जहां-पनाह, हमारा समय तो बीत चुका। अब तो मतरब इलम उड़ाते हैं।" जब बादशाह को सब बातें मालूम हुईं तो क्रोध में आकर उन्होंने ख़ानजादा साहेब का इलम तुड़वा दिया। ख़ानजादा ने शाहजादी के सामने बहुत रोना रोया पर उसका कोई फल न निकला। फिर भी वह शाहजादी का प्रिय पार्श्वद बना था। और अब शाहजादी उस सुन्दर मूर्ख को अपनी इच्छाओं की पूर्ति का माध्यम बनाए हुई थी। और वह शाहज़ादी के ख़ानग़ी मामलों का दारोगा अफसर था।

दैवयोग ही कहिए कि इस समय शाहज़ादी के ये तीनों चाहने वाले एक ही स्थान पर हाजिर थे। तीनों ही इस समय शाहज़ादी की विशेष कृपा के इच्छुक थे।

बारहदरी समूची संगमरमर की बनी थी। उसका फ़र्श काले और सफेद पत्थर का बना था। दीवारों पर रंग-बिरंगे पत्थरों की सुन्दर पच्चीकारी की गई थी। थोड़ी ऊंचाई पर कदेआदम आईने लगे थे। फर्श पर नर्म ईरानी कालीन बिछे थे। उनपर हाथी दांत के काम का छपर खट था, जिसके ऊपर जरवफ्त का चंदोवा तना था, जिसमें मोतियों की झालर टंकी थी। पलंग पर मखमली गद्दा तोशक और मसनदें लगी थीं, जिनपर निहायत नफीस जर-दोजी का काम हो रहा था। सामने करीने से चौकियों पर ढेर के ढेर फूल, इत्र और अनेक प्रकार की सुगन्ध तथा शृंगार की वस्तुएं रखी हुई थीं।

मसनद पर अलसाई देह लिए शाहज़ादी अकेली बैठी थी। बाहर नंगी तलवार लिए तातारी बाँदियों का पहरा था। इसी समय हंसते हुए दूल्हा बाबा ने आकर सोने के प्याले में शीराज़ी पेश की।

बेगम ने आंखें तरेर कर कहा—"यह क्या ? वह हमारी पसंद की चीज अंगूरी शराब कहां है ?"

"हज़रत, एक प्याला इस शीराज़ी का भी तो पहिले नौश फ़र्मा कर ईरान के बादशाह को ममनून कीजिए—जिसने यह कीमती शराब बड़े शौक से क़ाबुल के अमलदार के मार्फत हुजूर की खिदमत में भेजी है।"

"यह क्या हमारी उस नियामत से बढ़कर है जिसे ख़ास हमारे हकीम अंगूर में गुलाब डाल कर और मुक़व्वी अदवियात मिला कर तैयार करते हैं। तुम तो उस नियामत को चख चुके हो दूल्हा मियां।"

"हुजूर के तुफैल से, वह नायाब शराब मैंने पी है, बेशक उस का मुकाबिला तो आबेहयात भी नहीं कर सकती। मगर हुजूर शाहजादी, जरा उस कम्बख्त शाहे ईरान का भी तो दिल रखिए। बड़ी-बड़ी उम्मीदें बांध कर उस मर्दूद ने यह कीमती तोहफा भेजा है।"

शाहज़ादी ने हंसकर कहा–"शाहे अब्बास ऐसा बादशाह नहीं है जिसे मर्दूद कहा जाय। बस, हमें उसकी खातिर बसरोचश्म मंजूर है। इसके अलावा हम तुम्हें भी ममनून किया चाहती हैं। इसीसे बखुशी यह प्याला मंजूर करती हैं"—

"शुक्र है खुदा का कि शाहज़ादी को इस गुलाम का भी इस कदर ख्याल है, मैं तो एकदम नाउम्मीद हो गया था।"

"किस अम्र में ?"

"जां बख्शी पाऊँ तो अर्ज करूं कि हुजूर शाहज़ादी की नजरें इनायत इस कमनसीब पर अब पहिले जैसी नहीं है।"

"तो दूल्हा मियां, अब तुम बड़े भी तो हो गए, बच्चे नहीं हो, फिर हम तो तुम से खुश हैं।"

शाहज़ादी ने प्याला खाली किया और दूल्हा मियां ने उसे दुबारा भर कर शाहज़ादी के आगे बढ़ाते हुए कहा—"बेअदबी माफ हो बेगम, गुलाम बड़ा हो गया तो यह खुदा की कारस्तानी है, कुछ गुलाम की तकसीर नहीं। और अब तो गुलाम को यह समझ भी आ गई है कि हुजूर जो इस नाचीज पर खुश होने की इनायत करती हैं वह बहुत नाकाफ़ी है। जांनिसार कुछ ज्यादा की उम्मीद रखता है।"

शाहज़ादी खिलखिला कर हंस पड़ी। उसने कहा—"तो बेहतर है—तुम अपने दिल का इज़हार खुल कर करो—हम उस पर गौर करेंगी—"

"तो अर्ज करता हूं हुजूर शाहज़ादी, कि उस तुर्क मर्दूद नजावत खां की आंखें मुझे कतई पसंद नहीं हैं, और न वह काफिर हिन्दू राजा—जिसे आज सवारी के वक्त बीड़ाशाही इनायत करके और सवारी के साथ रहने का हक देकर सरफराज किया है—मुझे पसन्द है।" उसने तीसरा प्याला शाहज़ादी की ओर बढ़ाया।

शाहजादी ने हंसती हुई आंखों से उसकी ओर देख कर कहा—"वल्लाह, तो तुम इन दोनों नापसन्द आदमियों के साथ किस तरह पेश आना चाहते हो?"

"मैं दोनों से दो दो हाथ करना चाहता हूँ। इश्क के मैदान में एक दो तीन नहीं रह सकते शाहजादी।"

"बेहतर, तुम्हारी तजवीज हम पसन्द करती हैं। और इस अम्र में उन दोनों बदबख्तों को जरूरी हुक्म देना चाहती हैं। बस, तुम अमीर नजावत खां को इसी वक्त हमारे हुजूर में भेज दो और खुद बइत्मीनान आराम करो"—

शाहजादी ने मुस्कुराकर दूल्हा मियां की ओर देखा। दूल्हा मियां जो शाहज़ादी की विनोद वस्तु था और अपने को शाहजादी के प्रेमियों में समझता था, इस बात से खुश नहीं हुआ। उसने धीरे से कहा—"क्या हुजूर को एक प्याला अंगूरी शराब का भी पेश करूँ? जिसकी कि हुजूर शाहजादी हद दर्जे शौकीन हैं।"

"यकीनन, वह प्याला दूल्हा मियां, तुम्हारे हाथ से हम नोश फर्माएंगे"—

दूल्हा खुश हो गया। उसने प्याला शाहजादी को पेश किया। और शाहजादी ने प्याला हाथ में लेकर इशारे ही से उसे कह दिया कि हुक्म की तामील हो।

विवश दूल्हा मियां उस आनन्ददायक सोहबत को छोड़कर उठे। और जाकर अमीर नजावत खाँ को बेगम का हुक्म सुना दिया। बेगम ने धीरे-धीरे प्याला खाली किया और मसनद पर लुढ़क गई। इस वक्त वह मौज में थी और अच्छे-अच्छे विचार उसके हृदय को आनन्दित कर रहे थे। वह सोच रही थी, आशिक न० एक रुखसत हुए और आशिक न० दो की आमद है।

इसी समय नज़ावत खां ने आकर शाहजादी को कोर्निश किया, और दुजानु होकर शाहजादी के सामने बैठ गया। यद्यपि यह मुगल दस्तूर और अदब के विपरीत था, लेकिन प्यार मुहब्बत के मामलों में अदब का लिहाज चलता नहीं है।

शाहजादी ने अमीर को पान देकर कहा—"अमीर खुशवक्त इत्मीनान से बैठिए।"

नजावत खां उसी तरह दुजानु बैठा रहा। उसने पान लेकर शाहजादी को सलाम किया और कहा—"शाहजादी अब कब तक मैं जलता रहूं?"

"तुम्हें तकलीफ क्या है दिलवर?"

"अब वादा पूरा होना चाहिए और शरअकीरू से इस नाचीज

को शाहजादी को प्यार करने का हक मिलना चाहिए।"

"ओह, तुम्हारा मक़सद निकाह से है"—शाहजादी ने एक फूल के गुच्छे से खेलते हुए कहा।

"बेशक, और मुझ से हुजूर शाहजादी और वालिए अहद ने वादे किए हैं।"

"लेकिन ये सब तो पुरानी बातें हैं जानेमन, मुगल शाहजादियों की शादी नहीं होती है।"

"क्यों नहीं होती है ?"

"क्या आपने नहीं सुना कि मामू शाइस्त खां ने जहांपनाह को इसकी सही वजह बताते हुए कहा था कि अगर ऐसा हुआ तो जिस अमीर से शादी की जायगी उसे शाहजादों की बराबरी का रुतवा देना पड़ेगा।"

"लेकिन खुदा के फज्ल से मैं भी बल्ख का शाहजादा हूँ।"

"तो शाहजादा साहेब, हमें इससे कब इनकार है, हमारी नज़रे इनायत पर आप शाकी न हों---"

"शाकी नहीं।"

"मगर जो बात हो ही नहीं सकती उसके लिए हम बादशाह सलामत से अर्ज भी कैसे कर सकती हैं ?"

"लेकिन, शाहजादी, आप तो सल्तनत की मालिक हैं। जहांपनाह क्या आपकी बात टाल सकते हैं।"

"फिर भी एक मनसबदार से हिन्दुस्तान के बादशाह की लड़की की शादी गैर मुमकिन है।"

"तो फिर गुनाह से फायदा।"

"क्या तमाम हिन्दुस्तान के बादशाह की शाहजादी भी गुनाह कर सकती है।"

"शाहजादी, हिन्दुस्तान के बादशाह के ऊपर एक दीनों दुनियां का बादशाह है।"

"वह आम लोगों के लिए है—क्या यह भी कभी मुमकिन है कि मुगल शाहजादी एक अदना मनसबदार की ताउम्र लौंडी बन कर रहे।"

"लेकिन शाहजादी ....."

"बस खामोश, हम ऐसी बातें सुनने की आदी नहीं। बस, हम अपनी खुशी से जिस क़दर इनायत तुम पर करें उतने ही में आसूदा रहो।"

"मगर मेरी भी तो कुछ ख्वाहिशात हैं।"

"होंगी, हम फ़िलहाल इस अम्र पर गौर नहीं कर सकतीं। तुम्हारी इल्तजा से हमने आज यहाँ बारहदरी में मुकाम किया और तुमसे मुलाकात की। हम चाहती हैं कि आइन्दा अपने इरादों को क़ाबू में रखो।"

"तो हुजूर, मेरी एक अर्जी है।"

"अर्ज करो।"

"मुझे भी अमीर मीरजुमला के साथ दकन भेज दीजिए। ताकि अपनी आंखों से मैं वह सब न देख सकूं जिसे देखने का मैं आदी नहीं हूँ।"

"तुम्हारा मकसद क्या है?"

"शाहजादी, वह काफिर हिन्दू राजा, जिसमें हुजूर खास दिलचस्पी ले रही हैं, मैं उसे कल क़तल करूंगा और फिर दकन चला जाऊंगा और फिर कभी आप को मुँह न दिखाऊंगा"—नजावत खां तेजी से उठकर चल दिया।

बाहर आकर उसने देखा—खानज़ादा साहेब सामने हाजिर हैं। खानजादा ने आगे बढ़ कर कहा—"आदाब अर्ज है मनसबदार साहेब, कहिए, शाहज़ादी से शादी तय हो गई?"

नजाबत खां ने घृणा और क्रोध में भरकर कहा—"मर्दूद, नामाकूल, तेरा सर धड़ से अलहदा करूंगा।"

"बखुशी। मनसबदार साहेब, मगर शादी का जुलूस देख लेने के बाद।" वह हंसता हुआ एक ओर चला गया। और नजावत खां तावपेंच खाता एक ओर गया।

शाहजादी कुछ देर फूलों के एक गुलदस्ते को उछालती रही। कुछ देर बाद उसने दस्तक दी।

चांदनी खूब चटख रही थी। और बेगम अंगूरी शराब के शबाब में मस्त थी। उसका शरीर मसनद पर अस्तव्यस्त पड़ा था। आंखें नशे में झूम रही थीं। उसकी प्यारी विश्वासिनी बांदी हुस्न बानू और ख़ास ख्वाजासरा रुस्तम उसकी ख़िदमत में हाजिर था। इस समय आधी रात बीत रही थी। और ठण्ढी सुगन्धित हवा चल रही थी। उसने एकबार घूर्णित नेत्रों से इधर उधर देखा और रुस्तम की ओर रुख कर कहा—

"वह हिन्दू राजा चौकी पर मुस्तैद है न ?"

"जी हां, खुदावन्द।"

"तो उसे हमारे रूबरू हाजिर कर। अपनी मिहरवानियों से हम उसे सरफराज किया चाहती हैं।"

रुस्तम सिर झुका कर चला गया। बेगम ने गर्दन झुका कर हुस्न बानू की ओर तिरछी नजर से देखा और कहा—"क्या तू उस हिन्दू राजा की बाबत कुछ जानती है।"

"सिर्फ इतना ही कि वह एक दयानतदार और नेक रईस है।"

"बस ?"

"खूबसूरत और बांका भी एक ही है।"

"हरामजादी, क्या तेरी तबियत उस पर मायल है ?" बेगम ने उत्तेजित होकर हाथ का गुलदस्ता बांदी पर दे मारा।

बाँदी ने जमीन तक झुक कर बेगम को सलाम किया और कहा—'एक प्याला शीराजी दूँ सरकार।'

"दे, गुलाब और इस्तम्बोल भी मिला।"

बांदी ने स्वादिष्ट शराब का प्याला तैयार कर बेगम के हाथ में दिया।

शराब पीकर बेगम ने कहा---"तू किसी ऐसे मुसव्विर को जानती है जिसने इस तेरे बांके हिन्दू छैला की तस्वीर बनाई हो।"

"जानती हूं खुदाबन्द।"

"तो सुबह गुस्ल के बाद उसे मय तस्वीर के हाजिर करना, जा भाग।"

बेगम ने प्याला फिर उस पर फेंका और मसनद पर उठंग गई। इसी समय रुस्तम ने राव छत्रसाल के साथ आकर सलाम किया। छत्रसाल ने आगे बढ़कर बेगम को कोर्निश की।

बेगम ने तिरछी नजर से ख्वाजासरा की ओर देखा। ख्वाजासरा चुपचाप सलाम करके वहां से खसक गया। अब एकदम एकान्त पाकर बेगम ने कहा—'खुदा का शुक्र है, बैठ जाइए'—उसने मसनद की ओर इशारा किया। पर यह तरुण राजपूत एक क़दम आगे बढ़ कर ठिठक कर खड़ा रह गया। उसने कहा—"शाहजादी, बेहतर हो मुझे अपनी नौकरी बजाने का हुक्म हो जाय।"

"मेरे प्यारे राजा, तुम यह क्या कह रहे हो। तुम्हारी ऐसी ही बातों से मेरा दिल टुकड़े-टुकड़े हो जाता है।" शाहजादी ने अपनी बड़ी-बड़ी आंखें उठा कर राजा की ओर देखा और मीठे स्वर में कहा---"आज हम बहुत खुश हैं और उम्मीद है, इस चमेली सी चटखती चांदनी का लुत्फ उठाने में राव छत्रसाल दरेग न करेंगे।"

तरुण राजा अपनी जगह पर ही खड़ा रहा। शाहज़ादी की शराब से लाल आंखें और भी लाल हो गईं, परन्तु उसने मन के गुस्से को रोक कर कहा—"जानेमन, हमारे पास यहां मसनद पर बैठ कर हमें सेहत बख्शो।"

"मुझे अफसोस है शाहज़ादी, मैं ऐसा नहीं कर सकता।"

"क्यों नहीं कर सकते दिलवर ?"

"यह मेरे दीनों ईमान के खिलाफ है।"

"लेकिन हमारी खुशी है, हम तुम्हें दिल से चाहती हैं।"

"मैं नाचीज राजपूत, हुजूर शाहज़ादी की इस इनायत का हकदार नहीं हूँ।"

"तो तुम हमारी हुक्म उदूली की जुर्रत करते हो।"

"हुक्म दीजिए कि मैं चला जाऊं।"

"क्या इस चाँदनी रात में, इस फूलों से महकती फ़िजा में, प्यारे राजा, क्या तुम नहीं जानते कि हम दिल से तुम्हें चाहती हैं, तुम से दिली मुहब्बत रखती हैं, तुम्हें डर किस बात का है जानेमन, कहो, हम वही करें जिसमें तुम्हें खुशी हो।"

"शाहज़ादी मुझे चले जाने की इज़ाजत दीजिए और फिर कभी ऐसा कल्मां जबान पर न लाइए—मैं यही चाहता हूं।"

"और हमारी मुहब्बत ?"

"उस पर शायद मनसबदार नजावत खां का हक है।"

"ओह, समझ गई। तुम्हें रश्क हो सकता है दिलवर, लेकिन हम तुम्हें चाहती हैं—सिर्फ तुम्हें। तुम मेरे दिलवर हो। जिस दिन मैंने पहिली बार झरोखे से तुम्हें घोड़े पर सवार आते देखा—जिसकी टाप जमीन पर नहीं पड़ती थी और तुम उस पर पत्थर की मूर्ति की तरह अचल बैठे थे। तभी से तुम्हारी वह मूर्ति हमारे मन में बस गई है दिलवर। उस दिन तुम्हें देख हम अपने को भूल गईं। तभी से मेरा दिल बेचैन है। हम तुम्हें अपने आगोश में बैठा कर खुशहाल होना चाहती हैं। हरचन्द हमने तुम्हें बुलाया और तुमने इन्कार कर दिया। मेरे खतूत और तोहफे तुमने लौटा दिए। आज हमने तुम्हें पाया है। अब हमारे पास आकर बैठो। हम अपने हाथ से तुम्हारे इत्र लगाएं, तुम्हें प्यार करें और अपने दिल की आग को बुझाएं।"

"हज़रत बेगम साहिबा, इस वक्त आपकी तबियत नासाज है, मैं जाता हूं—"

बेगम शेरनी की तरह गरज उठी।

"तुम्हारी यह हिमाकत, हमारी आरजू और मुहब्बत को ठुकराओ! क्या तुम नहीं जानते कि हमारे गुस्से में पड़ कर बड़ी से बड़ी ताकत को दोजख की आग में जलना पड़ता है!"

लेकिन राजा पर इस बात का भी कोई असर नहीं हुआ। उसने बेगम की किसी बात का जवाब नहीं दिया। उसने मस्तक झुका कर बेगम को अभिवादन किया और तेजी से चल दिया। बेगम पैर से कुचली हुई नागन की भांति फुफकारती हुई मसनद पर छटपटाने लगी।

राजा के बाहर जाते ही दूल्हा ने सलाम करके हंसते हुए कहा—"मुबारक राजा साहेब, मुबारक, शाहजादी की आशनाई मुबारक।" राजा का हाथ तलवार की मूठ पर गया और दूल्हा हंसता हुआ भाग गया।

१७

हुगली के क़ैदी

हुगली का इलाका बादशाह जहांगीर ने पोर्चुगीज़ों को दे दिया था। कहने को वे केवल व्यापार करते थे। पर वास्तव में लूट-खसोट, अत्याचार और बलात्कार ही उनका धन्धा था। वास्तव में यह उन दिनों गोरे लुटेरों का एक दल था जिसे बादशाह से मनमानी लूट करने की छूट दे दी गई थी और जिनकी कहीं सुनवाई ही न होती थी।

अपने शाहज़ादा होने के समय में शाहजहां जब हुगली होकर जा रहा था तब पोर्चुगीज़ अपने क़िले से बाहर आकर बादशाह की बेगम मुमताज महल की दो लौंडियों को पकड़ ले गए थे। उस

समय मुमताज महल ने उन पोर्चुगीज़ों को बहुत खातिर खुशामद की थी कि वे उन लौंडियों को वापस दे दें, परन्तु पोर्चुगीजों ने इसकी तनिक भी परवाह न की थी।

बादशाह होने पर शाहजहां इन बदमाश पोर्चुगीज़ों की इस हरकत को भूला नहीं था। परन्तु कुछ ऐसी राजकीय उलझनें आ पड़ी थीं कि वह इस मामले में कुछ न कर सका था—यद्यपि बेगम ने उसे बहुत उकसाया भी था। इसी बीच बेगम का देहान्त हो गया। और बादशाह अनेक मामलों में फंसा रहा, अब अवसर और बहाना उसे मिल गया तो उसने कासिम खां की कमान में एक भारी सेना देकर उन्हें गिरफ्तार करने और किला ढहा देने के लिये भेजा। उससे पोर्चुगीज़ों ने पहिले तो कुछ दे ले कर सुलह करनी चाही परन्तु जब कासिम खां ने गोलाबारी शुरू कर दी तो वे लड़ पड़े। अन्त में उन्हें आत्म-समर्पण करना पड़ा। और कासिम खां पांच हजार पोर्चुगीजों को परिवार सहित कैद कर लाया। इन कैदियों में कई आगस्तेनियन, आरमीनियन और जेसह पादरी भी थे। कासिम खां ने उन सबको बादशाह के सामने पेश किया। बादशाह ने सब कैदियों को कत्ल कर डालने और उनकी औरतों और लड़कियों को बाजार में बेच डालने का हुक्म दिया। शाहजहां ने इन स्त्रियों में से बहुतों को अपने मुसाहिबों को बांट दिया। जो अति सुन्दर थीं उन्हें अपने हरम में रख लिया।

अपनी औरतों की प्राप्ति के लिए और जान बचाने के लिए बहुतों ने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया। क्योंकि बचने का एक यही मार्ग था।

परन्तु पादरियों ने अपना धर्म बदलने से बिल्कुल इन्कार कर दिया और कहा—हम ईश्वर के भरोसे हैं। बादशाह चाहे जो कुछ करे। एक आरमीनियन अमीर की सिफारिश से बादशाह

ने उन्हें प्राणदण्ड से मुक्त कर दिया। कुछ को भारी रक़म देकर उनके दोस्त योरोपियनों ने बचा लिया।

इन्हीं कैदियों में एक जार्जियन लड़की थी, जिसका बाप कत्ल कर दिया गया था और जिसे कुछ बदमाश गोरे चोट्टों ने छिपा कर रख छोड़ा था। वे चाहते थे कि मामला ठण्डा हो जाय तो उसे अच्छे दामों पर बेचे। ऐसे माल के खरीदारों की दिल्ली में कमी न थी। इन कैदियों में एक अँग्रेज स्मिथ भी था जो बहुत अच्छा गोलंदाज था। उसके हुनर की तारीफ सुन कर दारा ने उसे मृत्युदण्ड से मुक्त करा दिया था और अपनी सेवा में रख लिया था। मृत्युदण्ड से मुक्त होने पर इस अंग्रेज ने दारा को खुश करने के लिए उस जार्जियाना लौंडी की बात उससे कही। उसके रूप-लावण्य का भी बहुत-बहुत बखान किया। और कहा—"हुजूर, बेअदबी माफ हो तो कह सकता हूँ कि शाही हरम में एक भी नाज़नी उसके जोड़ तोड़ की नहीं है।" उसने यह भी बता दिया कि कुछ चोट्टों ने उसे अमुक स्थान पर छिपा रखा है। और वे उसे कहीं बेचने की सांठगांठ में हैं।

दारा स्त्रियों का बहुत शौकीन था। उसने स्मिथ के साथ जाकर गुप्त रूप से उस लड़की को देखा—और अधिक झंझट न बढ़ा कर उन चोरों से उसे खरीद लिया। और वे किसी से उसके सम्बन्ध में चर्चा न करें इसलिए उन्हें दिल्ली से बाहर भेज दिया।

जब वह जार्जियाना लौंडी दारा के ऐश महल में पहुँची तो उसके रूप और घमन्ड को देख कर महल की सारी औरतें दंग रह गईं। उसने बड़ी बड़ी मांगें पेश कीं। जो दारा ने तत्काल पूरी कीं। देखते ही देखते वह बड़े रुआब से मलिका की तरह रहने लगी। वह जैसी सुन्दर और मगरूर थी—वैसी ही मुँहफट और शराबी भी थी। वह बढ़िया कीमती विलायती शराब पीती और शराब के झोंक में मनमाने हुक्म जारी करती थी। इतना होने पर भी

उसने दारा को अपना अंग छूने नहीं दिया। उसने साफ कह दिया—हज़रत, जब तक निक़ाह न पढ़ाएंगे—मुझे न पा सकेंगे। मैं हुजूर की लौंडी नहीं मलिका बना चाहती हूं।

परन्तु यह बड़ी कठिन बात थी। बादशाह किसी भी हालत में एक ज़र खरीद गुलाम को बेगम बनाने को राजी नहीं हो सकते थे। इस चुलबुली और नखरे वाली गुलाम को खरीदने की बात जब बादशाह ने सुनी तो उसने बहुत नाराजी जाहिर की। और इस बेकायदा कार्रवाई के लिए दारा से जवाब तलब किया। दारा उस लौंडी को पाने के लिए इतना बेचैन हो गया कि जान देने पर आमादा हो गया। अंत में उसने अपनी बड़ी बहिन बड़ी बेगम जहांआरा का सहारा लेने का निर्णय किया। और वह उसके पास गया।

जहांआरा बेगम भी कुछ ऐसे ही मर्ज में मुबतिला थी। वह भी अपनी शादी कराने में मुगल-मर्यादा के विपरीत थी। वह दारा की मदद मांग चुकी थी और दारा ने उसे वचन दिया था कि बादशाह होने पर वह अवश्य उसकी शादी उसके मनचीते आदमी से कर देगा। इसी से बेगम दारा ही को बादशाह बनाना चाहती थी। दारा ने बहिन से मुलाकात कर उससे इस काम में मदद मांगी।

१८

कौल-क़रार

वली अहद दारा बड़ी बेगम के महल में तशरीफ लाए, साधारण शिष्टाचार के बाद भाई-बहन ने दिल खोल कर बातचीत प्रारम्भ की। पहले बेगम ने कहा—"अब वह वक्त आ गया है कि हमारे दिलों के अरमान पूरे हों। और बिरादर, मेरी सारी उम्मीदें सिर्फ तुम पर ही हैं।"

"तो मैंने जो कौल तुम्हें दिया है, पूरा करूंगा, अब तो तुम इस बात से खुश हो कि वल्ख पर फौजकशी नहीं होगी।"

"लेकिन हज़रत सलामत तो अमीर नजाबत खां से शादी करने को राजी ही नहीं होते।"

"यह सब उस मर्दूद शाइस्त खां की कारगुजारी है। उसी ने हज़रत सलामत को समझाया है कि यदि नजावत खां से बेगम की शादी कर दी गई तो उसे अवश्य ही शाहजादों की पदवी देनी होगी।"

"मैंने भी तो उस दोज़खी कुत्ते से पूरा बदला ले लिया है।"

"लेकिन क्या नजावत खां वल्ख का शाहजादा नहीं है, और क्या वह इस रुतबे को पहुँचने योग्य नहीं?"

"लेकिन हज़रत सलामत तो अभी तक यह समझते हैं कि कभी न कभी शाहे वल्ख से लड़ना ही पड़ेगा।"

"और तुम्हारा वादा। तुमने कहा था कि वल्ख पर कभी फौजकशी नहीं होगी।"

"इतना ही नहीं—मेरा यह भी वादा है कि बादशाह होते ही तुम्हारी शादी नजावत खां से कर दूँगा, तब तक मेरी प्यारी हमशीरा, तुम अपने दूल्हाभाई पर ही सब्र करो।"

"आह, तो तुम्हें भी कुछ ऐसा शक है?"

"शक की क्या बात है बेगम, आखिर वह खानेज़ाद है ही, शाहजादियां और अमीरज़ादियां खानेजादों से तफरीह कर सकती हैं।"

"मैंने जो उसे तीन हजारी जात का रुतबा देकर उसे सिपह-सालार बनाया है इसी से तुम शक करने लगे?"

"बहस क्या फायदा। मगर मेरा काम; उस पर भी तो गौर करो बेगम।"

"मुझे तुम्हारा पैगाम मिला था। तुम्हारा काम बहुत मुश्किल है बिरादर, एक अदना जरखरीद गुलाम को बेगम बनाना मुनासिब नहीं। आखिर तुम शहन्शाहे हिन्द होने वाले हो। क्या हिन्दुस्तान के हिन्दू राजा और दीगर अमीर यह पसंद करेंगे कि वे एक जरखरीद जार्जियाना लौंडी को मलिका समझ कर उसे सलाम करें।"

"तो अब तुम भी नसीहत देने लगी।"

"नहीं, नहीं, मै मौका पाकर हज़रत सलामत से अर्ज करूंगी, लेकिन तुमने उस मगरूर महावत की हरकत देखी।"

"लेकिन इसमें कसूर दूल्हा मियां का ही है, उसे महावत खां के सामने अपना झण्डा तह कर लेना था। तुम तो जानती हो कि वह एक पुराना और बहादुर सरदार है। जन्नतनशीन जहांगीर को भी उसने नीचा दिखाया था। हज़रत सलामत ने जब सुना कि उसने महावत के मुकाबले इलम उड़ाया है तो उन्होंने दूल्हा मियां का इलम तुड़वा दिया।"

"मैं यह बर्दाश्त नहीं कर सकती। और तुम—जो जानते हो कि मैं उसपर मिहरबानी रखती हूँ—भी यह बर्दाश्त न करोगे, यह उम्मीद है।"

"तो मैं क्या करूं ?"

"वह काबुल का हाकिम है, काबुल तुम्हारी ही जागीर है। उसे वहां से हटा कर कहीं दूर फेंक दो।"

"वल्लाह, अब्बा यह कभी पसंद न करेंगे।"

"लेकिन मैंने उससे वादा किया है। बादर, आखिर मुझे भी तुम्हारा काम करना है, जो करीब करीब नामुमकिन है।"

"खैर, तो तुम मेरी महबूबा मुझे दिलवादो तो मैं भी महावत के पंख काट दूँगा।"

"यह तो आज ही रात को हो जायगा।"

"तो वह भी कल हो गया समझो।"

"तसल्ली हुई ब्रादर, लेकिन इस पाजी शाइस्त खां से होशियार रहना।"

"और तुम उस बेईमान मीरजुमला के कबीले पर नजर रखना। कहे देता हूं-उस कमीने ने दगा की तो उसकी और उसके बेटे अमीनुद्दीन की औरत को मैं बाज़ार में बैठा दूंगा।"

"इतमीनान रखो। आज ही मैंने उस पर रहमोकरम किया है। लेकिन मुझे तुमसे एक राज़ की बात कहनी है ब्रादर। वह मैं तुम्हीं से कह सकती हूँ।"

"बेशक कहो।"

"हकीकत यह है कि मैं नजावत खां के साथ शादी करना नहीं चाहती।"

"अयँ, तो क्या कोई नया गुलरू नजर चढ़ गया।"

"ब्रादर, मैं बूंदी के राव छत्रसाल पर मर मिटी हूँ। मेरी शादी या तो उसी से होगी, या कब्र के साथ।"

"तोबा, तोबा, और नजावत ?"

"बिलफैल तुम उसे मीरजुमला के हमराह दकन भेज दो।"

"क्या यहां तक ?"

"और छत्रसाल को पांच हजारी जात का मनसब दे दो।"

"लेकिन मैं समझता था तुम अमीर नजावत खां को पसंद करती हो।"

"पसंद करती हूँ, मिहरबानी भी करती हूँ, मगर उसे सब्र ही नहीं आता।"

"वह चाहता क्या है ?"

"यही, कि मुगल शाहजादियाँ भी मुहब्बत का दर्द बर्दाश्त करें।"

"लेकिन बेगम, यह दर्द तो आप ही उठ खड़ा होता है, शाहजादियों और शाहजादों की ओर देखता भी नहीं, मेरा हीहाल देखो।"

"आंफरी ब्रादर, उस गुलाम लौंडी को तुम इतना चाहते हो !"

"बेगम, अगर उससे मेरी शादी न हुई तो मैं जान दे दूँगा।"

"यहां तक ? तौबा, तौबा !" शाहजादी हंसते हंसते मसनद पर लोट गई, फिर उसने दारा को पान देते हुए कहा—"खुदा हाफिज़, वलिऐ अहद की जान इतनी सस्ती नहीं है। मैं आज ही अब्बा-जान से अर्ज़ करूंगी।"

दारा ने बेगम का पल्ला चूमा—और चला गया।

१६

दरबारे खिलवत

इस दरबार की तैयारियां भी बहुत ठाठ से की गई थीं। यद्यपि यहां इने गिने खास खास दरबारी ही बुलाए गए थे। परन्तु इस दरबार का रोबदाब निराला ही था। दीवाने खास, जिसमें यह दरबार जुड़ा था—समूचा संगेमर्मर का बना हुआ था और इसकी छत पर अदभुत सुनहरा काम किया गया था। यह एक खूब हवादार महराबों पर बना हुआ था तथा जमना की ओर से खुली ठण्डी हवा इसमें निरन्तर आती रहती थी।

बादशाह एक जड़ाऊ कुर्सी पर बैठे थे। उन्होंने हल्के रात के वस्त्र पहने थे। वजीर और उमरा जो बुलाए गए थे—हाथ बांधे सिर झुकाए अपने अपने स्थान पर खड़े थे। वलिऐ अहद शाह-ज़ादा दारा एक छोटे से सुनहरी तख्त पर बादशाह के क़दमों में बैठा धीरे धीरे बादशाह से बातें कर रहा था। बड़ी बेगम भी चिलवन में तशरीफ रक्खे थीं और चिलवन के निकट ही मख़-मली पर्दे के पास कई तातारी बांदिएँ और खोजा सरदार अब्बास हाथ बांध इस इन्तज़ारी में चाक चौबन्द खड़ा था कि आवश्य-कता होने पर बेगम के हुक्म की तुरन्त तामील कर दी जाय।

खम्भों पर रंगीन ज़रीकाम के वस्त्र लपेटे हुए थे। और रेशमी चंदुए, जिनमें रेशम और ज़री के फुंदने टंके थे, तने हुए थे। फर्श पर नर्म नमदे और कीमती कालीन बिछे थे जिन पर पैर पड़ते ही वह हाथ भर धंस जाता था।

मीरजुमला और उसके बेटे की अवाई की सूचना नकीब ने दी। इसके साथ ही मीरजुमला ने आकर बेटे समेत शाही चौखट चूमी। और कोर्निश कर के बादशाह को एक लाल नज़र किया जिसकी कीमत एक लाख रुपये थी।

बादशाह ने नीची नजरों से मीरजुमला और उसके बेटे की ओर देखा, फिर झुककर दारा से कुछ कहा।

दारा इस वक्त बहुत भड़कीली पोशाक पहने था और प्रकट में वह बहुत गम्भीर था पर उसके माथे पर चिन्ता और असंतोष की रेखाएँ प्रकट हो रही थीं।

अमीर मीरजुमला और उसका बेटा अमीन खां शाही अदब बजा लाकर पीछे हटकर खड़े हो गए। बादशाह ने उनकी ओर रुख करके धीमे स्वर में कहा—

'अमीर मीरजुमला, खुश आमद। हम तुम्हारी बहादुरी और और दयानतदारी से बहुत खुश हैं।'

मीरजुमला ने झुककर सलाम किया। और जरा आगे बढ़ कर कहा—'जहांपनाह, गुलाम हमेशा से तख्त का वफादार ख़ादिम रहा है और ताजीस्त रहेगा।'

"हमें यक़ीन है, अमीर मीरजुमला, तुम्हारे उस लासानी जवाहर का नाम हमने कोहेनूर रक्खा है।"

इसपर दरबारी दबी ज़बान से कह उठे—'सुभान अल्लाह-करामात-करामात—'

मीरजुमला ने फिर सलाम झुकाया। और धीमे किन्तु दृढ़ स्वर में कहा—

"हुजूर, गोलकुण्डा राज पर, जहाँ ऐसे ऐसे अनगिनत जवाहरात के ढेर हैं, कब्जा करने में अब तआम्मुल न होना चाहिए। बल्के यह गुलाम तो यहां तक कहने की जुरत करता है कि हुजूर को उस वक्त तक दकन पर फौजकशी करनी चाहिए जब तक कि कन्या कुमारी तक का मुल्क तख्ते मुग़लिया के कब्जे में न आ जाय।"

बादशाह के चेहरे पर मुस्कुराहट आई, उन्होंने कहा—"अमीर मीरजुमला, हम तुम्हारी मुफीद सलाह पर अमल करने को आमादा हैं। और तुम्हें फ़र्जन्दे तख्त का खिताब अता फर्माते हैं। हम चाहते हैं कि दकन पर एक फौज भेजी जाय और उसकी कमान तुम्हें सौंपी जाय। साथ ही तुम्हारी मदद को नजावत खां, महावत खां, उनका बेटा और सलावत खां साथ रहें।"

मीरजुमला ने सिर झुकाया और कहा—

"यह मर मिटने वाला खादिम बसरोचश्म इस मुहिम के लिए तैयार है।"

बादशाह ने कुछ इधर उधर करके नर्म स्वर में कहा—"अमीर मीरजुमला, इसमें कुछ शर्तें होंगी," यह कहकर उसने दारा की ओर देखा।

दारा ने रूखे शब्दों में जरा उच्च स्वर से कहा—जिससे चिलवन में बैठी बेगम भी सुन ले, "मीर साहेब, पहिली शर्त तो यह कि इस मुहिम में औरंगजेब नहीं शरीक होगा, न उसका आप से कुछ वास्ता रहेगा। न आप उससे मिल सकेंगे, न वह दौलताबाद को छोड़कर बाहर इधर उधर कहीं जा सकेगा।"

मीरजुमला ने चेहरे पर कोई भाव प्रकट न करके गम्भीरता पूर्वक कहा—"दूसरी शर्त क्या है?"

"आपके बाल बच्चे, रिश्तेदार और आपका बेटा अमीन खां

आगरे में रहेंगे और शाही खजाने से उनका खर्चा दिया जायगा।"

मीरजुमला के चेहरे पर असंतोष के भाव प्रकट हुए। उसने बादशाह की ओर देखा। बादशाह ने कहा—

'इत्मीनान रक्खो अमीर मीरजुमला, तुम्हारे अहलो-अयाम बहुत जल्द तुम्हारे पास पहुच जाएँगे। फिलहाल हमारी दिली ख्वाहिश है कि तुम्हारा फर्जन्द मुहम्मद अमीन अभी कुछ दिन हमारी नज़रों को सेहत बख्शे।" बादशाह की इतनी खुशामद करने पर भी मीरजुमला के चेहरे का असंतोष दूर नहीं हुआ।

उसने कहा—"जहांपनाह के हुक्म और मर्जी के खिलाफ कोई काम यह गुलाम नहीं करना चाहता, मगर हुजूर शाहजादा इस जांनिसार पर शाकी हों तो रहने दिया जाय।"

"नहीं, नहीं, सिर्फ दारा के इत्मीनान के लिए। पस-हम तुम्हारी कमान में शाही तोपखाना समेत पचास हजार फौज देते हैं जिसका बखूबी इन्तजाम अपने साथी सिपहसालारों के साथ—जो तुम्हारे हमराह होंगे, तुम कर सकते हो।"

इसके बाद बादशाह ने जड़ाऊ तलवार, सात हज़ारी ज़ात का मनसब और कीमती सिरोपाव देकर अमीर मीरजुमला को बिदा कर दरबारे खिलवत खत्म किया।

२०

दलित कुसुम

आइए हम अब जरा शाइस्त खां के मकान की एक झांकी देखें। शाइस्त खां की विशाल हवेली फैज़ बाजार में थी। वह बादशाह का साला था और एक चतुर और उच्चाशय अमीर था। उसकी स्त्री एक ईरानी अमीर की इकलौती बेटी थी। वह बड़ी सती-सच्चरित्र और पवित्रात्मा थी। वह जैसी अद्वितीय सुन्दरी

थी वैसी ही अस्मत वाली भी थी। वह एक नई उम्र की बड़ी ही नाजुक मिजाज भावुक युवती थी।

बादशाह की उस पर एक अमीर के यहां दावत में दृष्टि पड़ी। रिश्तेदार होने के कारण वह बादशाह के सामने आने को विवश की गई थी। बूढ़े कामुक बादशाह ने अपनी बड़ी बेटी के द्वारा उसे एक ज़ियाफत देने रंगमहल में बुलवा लिया—बेगम जफर अली उसे फुसला कर बादशाह के उस रहस्यपूर्ण कमरे में ले गई, जिसमें अनगिनत सतियों का सतीत्व लूटा जा चुका था। भोलीभाली लड़की दाव में जैसे फंस गई। और जब वहां उसने अपने को बादशाह के चंगुल में फंस कर असहायावस्था में पाया तो छूटने को बहुत हाथ पैर मारे, बड़ी छटपटाई, पर वह अपने को बचा न सकी। बादशाह ने उसका सतीत्व भंग कर दिया। फिर वह बहुत सी भेंट और नजराने देकर वापस भेज दी गई।

परन्तु, उस मुगल राज्य में जिस प्रकार की और अमीरों की औरतें होती थीं—वह वैसी न थी। उसने घर आकर सब हाल अपने पति से कह दिया और खाना पीना तथा वस्त्र बदलना भी छोड़ दिया। इस घटना को आज १५ दिन बीत चुके थे। वह कुचली हुई फूलमाला की भांति बिस्तर पर पड़ी थी। तमाम घर भर में उदासी छाई थी। प्रातःकाल का समय था। उसके नेत्रों में मरने का दृढ़ संकल्प था। उसके पलंग के पास उसका प्यारा पति बैठा था। दोनों खूब रो चुके थे। अब जिस प्रकार एक कठोर संकल्प करने का भाव उस सती के मुख पर था, उसी प्रकार बदला लेने का उस वीर युवक अमीर के मुख पर भी था।

उसने कोमलता से पत्नी का हाथ अपने हाथ में थाम कर कम्पित स्वर से कहा—'प्यारी, अपना यह ख़ौफनाक इरादा छोड़ दो; जीती रहो—मेरी नजर में तुम पाक़साफ़ हो। मैं उस जालिम बादशाह से ऐसा बदला लूंगा कि दुनिया देखेगी।" बात पूरी

करते-करते उसकी आंखों से आग निकलने लगी और बदन कांपने लगा।

बेगम ने पति का हाथ दोनों हाथों में लेकर अपनी छाती पर रखा। वह कुछ देर चुपचाप आंखें बन्द किए पड़ी रही। फिर उसने क्षीण स्वर में कहा—'मेरे प्यारे शौहर, इतने ही दिनों में मैंने तुम से वह प्यार पाया कि जिन्दगी का सब लुत्फ उठा लिया, अब मेरी जिन्दगी में किरकिरी मिल गई। मैं नापाक़ कर दी गई। अब मैं तुम्हारे लायक न रही प्यारे, मेरे जिस जिस्म को उस नापाक कुत्ते ने छुआ है मैं उसमें न रहूंगी, न रहूंगी। और ताकयामत मैं तुम्हारी इन्तजारी करूंगी।'

"मगर प्यारी बेगम, मैं तुम्हारे बिना कैसे दुनिया में जिन्दा रहूँगा? मेरी जिन्दगी तुम हो, मेरी आंखों में सिर्फ तुम्हारी रोशनी है। तुम्हारे बिना दुनियां में मेरा कोई नहीं है।"

युवती की आंखों से आंसू ढरकने लगे। उसने पति के हाथों को प्यार से चूम कर कहा—'रहना पड़ेगा—मेरे मालिक, मैं जिन्दा नहीं रह सकती, मैं आबोदाना नहीं ले सकती, आह! उस जालिम ने न मालूम मुझ जैसी कितनी बेबस कमजोर औरतों को बर्बाद किया होगा। मुमकिन है वे सब अस्मत फरोश न हों, लेकिन इस मुगल सल्तनत में एक भी ऐसा बहादुर आदमी नहीं, जो हम बेक़सों को उस जालिम भेड़िये से बचाए! मेरे प्यारे मालिक, तुम वादा करो कि बदला लोगे।"

"मैं वादा करता हूँ प्यारी, कि जब तक मैं तुम्हारी बेहुर्मती का बदला न ले लूंगा चैन से न बैठूंगा। परवा नहीं, चाहे जान भी चली जाय।"

"तो प्यारे, फिर मैं बड़ी खुशी से मर सकती हूं, इसका मुझे बड़ा फ़ख्र है।"

"मगर मेरी प्यारी बेगम—तुम अपने इस इरादे को बदल दो,

खुदा के लिये मुझ पर रहम करो, मैं तुम्हें उसी तरह आंखों की पुतली बना कर रखूंगा।"

"नहीं प्यारे, मेरी ग़ैरत यह इज़ाज़त नहीं देती, इस तरह ज़लील होकर मैं किस तरह जिन्दा रह सकती हूं। नहीं, नहीं, किसी भी तरह नहीं। मालिक, एक मर्द की तरह तुम मुझे बिदा करना—हम लोग फिर मिलेंगे—और वैसे ही पाक़साफ़ जैसे उस दिन थे—जब कि हम पहली बार मिले थे।" इतना कहते कहते उस बेगम की आंखों से आंसुओं की धार बहने लगी—उसकी सांस जोर-जोर से चलने लगी और उसका सारा शरीर थर-थर कांपने लगा। कुछ सुस्ता कर उसने कहा—"प्यारे, तुम्हें वह दिन याद है जब मैंने अपने मेंहदी से रंगे हाथ तुम्हारे सुपुर्द किए थे, तुम्हें अपना बनाया था, और तुमने मुझे अपनाकर निहाल किया था! हमलोग कितना हंसते थे, दुनिया कितनी मीठी लगती थी, दिन कैसे सुहावने थे, सूरज कैसा चमकता था, कोयल कैसी कूकती थी, रात कैसे हंसा करती थी, चांद दूध बखेर कर दुनिया को कैसा बना देता था, हमलोग बातें करते थे, हंसते थे, रूठते थे, प्यार करते थे, लड़ते थे, फिर एक हो जाते थे, आह! इतनी जल्दी वे सब दिन ख़त्म हो गये!!"

शाइस्त खाँ ने उन्मत्त की तरह पत्नी को छाती से लगा कर कहा—"नहीं, नहीं, प्यारी, यह दुनिया वैसी ही है। देखो बाहर सूरज है - चांद है - फूल हैं, उनमें खुशबू है, कोयल है, प्यारी, यह दुनिया वैसी ही मीठी है। आओ एक बार हम फिर उसी तरह हंसें, लड़ें, रूठें और फिर प्यार करें।"

उसने विह्वल होकर मुमूर्षु पत्नी के अनगिनत चुम्बन ले डाले। फिर वह उसकी छाती पर सिर रख कर फफक फफक कर रोने लगा।

बेगम भी रो रही थी। कुछ देर रो लेने पर जब जी हल्का हो

गया तो शाइस्त खाँ ने कहा—"तो प्यारी, कह दो कि हमलोग जीएंगे।"

"नहीं प्यारे, हमारी जिन्दगी में कीड़ा लग गया है। अब हम उस तरह नहीं जी सकते। औरत की जिन्दगी उसकी अस्मत है, वह गई तो जिन्दगी भी गई। मेरे प्यारे शौहर, मुझे जाना होगा—मुझे मरना होगा। मगर ओफ, यह कभी न सोचा था कि इतनी जल्द! ओफ़, ओफ़!"

बेगम ने एक चीख मारी और बेहोश हो गई। शाइस्त खां पागल की तरह बांदियों और दाइयों को पुकारने लगा। महल में हलचल मच गई, और वह फूल की तरह सुन्दर और कोमल अस्मतवाली हमेशा के लिए चुप हो गई।

२१

रोशनआरा

नौ की नौबत बज रही थी। शाहज़ादी रोशनआरा अलसाई सी अपने कमरे में आकर मसनद पर लुढ़क गई। वह कुछ थकी हुई थी। कुछ चिन्तित भी थी। परन्तु वासना की तीखी चमक उसकी आंखों में थी—और किसी उत्तेजना से उसका चेहरा असाधारण रीति से लाल हो रहा था। वह ढाके की महीन मलमल की तीहरी पोशाक पहने थी। फिर भी उसमें उसका मनोरम शरीर छन रहा था। उसपर सुनहरी ज़री का निहायत नफ़ीस काम हो रखा था। उसकी चोटी निहायत नफासत से गुंथी थी और सुगन्धित तैलों से तर थी। माथे पर लापरवाही से हल्के फीरोज़ी रंग की एक जरवफ़ की ओढ़नी पड़ी थी। उसकी गर्दन में पांच बड़े-बड़े लालों की एक माला पड़ी थी जिसके सिरों पर मोतियों के गुच्छे लगे थे। यह माला उसके पेट तक लटक रही थी। माथे पर मोतियों की बैन्दी थी जो उसकी चिकनी काली केशराशि पर

खूब फब रही थी। उसके पास ही एक जड़ाऊ तौक था जिसके बीच में अत्यन्त तेजस्वी एक लाल जड़ा था। आसपास मोती थे। कानों में जड़ाऊ फूल थे। छाती पर एक विचित्र हार झूल रहा था, जिसमें आश्चर्यजनक बड़े बड़े हीरे जड़े थे। कलाई पर नीलम की पहुँचियां थीं, जिनमें जगह जगह मोतियों के गुच्छे लगे थे। उसकी प्रत्येक उंगली में अंगूठियां थीं। दाहिने हाथ के अंगूठे पर एक आरसी थी जिसके आईने के इर्दगिर्द मोती जड़े थे। कमर के चारों ओर सोने का दो अंगुल चौड़ा पटका था, जो बड़ी कारीगरी से जवाहरात से जड़ा हुआ था। इजारबन्द के दोनों सिरों पर दो अंगुल लम्बी पांच-पांच मोतियों की लड़ें लटक रही थीं। पैरों में भी पायजेब की जगह बड़े-बड़े मोतियों की लड़ें पड़ी थीं। पोशाक इत्र में शराबोर थी।

कुछ देर शाहजादी चुपचाप मसनद पर उठंगी पड़ी रही। फिर उसने दस्तक दी। एक बांदी ने आकर शाहजादी का इशारा पा उसका कवा उतार दिया, और पैरों पर एक कीमती शाल डाल दिया, इसके बाद उसने शराब की सुराही और जाम सामने चौकी पर रख दिया। वह दुजानू होकर बेग़म के पास बैठ गई। और जाम भर-भर कर देने लगी।

शाहजादी चुपचाप वह सुवासित मदिरा पीने लगी। दो चार प्याले पीने पर उसने बांदी को रोशनी तेज करने और गानेवालियों को बुलाने की आज्ञा दी। क्षण भर में कमरे में सुरीले गायन की स्वर लहरी भर गई। गानेवालियां यद्यपि अपनी कलाएं दिखा कर शाहजादी को खुश किया चाह रही थीं परन्तु शाहजादी का दिल आज खुश न था। शराब और संगीत दोनों ही उसे प्रसन्न न कर सके। उसने ऊब कर गानेवालियों को चले जाने का हाथ से संकेत किया। उस समय शराब की उत्तेजना से उसका चेहरा लाल हो रहा था। उसकी खास बांदी फहमिया बाघू चुप-

चाप हाथ बाँधे हुक्म के इन्तजार में खड़ी थी। बेगम ने पूछा—

"हजरत सलामत इस वक्त कहां हैं ?"

"हुजूर वे अभी गुस्लखाने के दरबार में हैं।"

"क्या बक़ाऐनवीस रोजनामचा सुना गया ?"

"अभी नहीं हुजूर खुदावन्द इस वक्त हुजूर बड़ी बेगम से कुछ जरूरी मश्वरे में मशगूल हैं।"

"तू जा और देख कि बक़ाऐनवीस क्या नई खबर सुनाता है।"

"जो हुक्म।"

"ठहर, खुफियानवीस की दारोगा को यहां भेज दे।"

"जो हुक्म," बांदी अदब से झुककर चली गई।

उसके चले जाने पर शाहजादी ने अपने हाथ से दो प्याला शराब ढाली। उसमें गुलाब दिया और चुपचाप गटगट पी गई। इसके बाद उसने प्याला कालीन पर एक तरफ फेंक दिया। और छत में जलती सुगन्धित काफूरी मोमबत्तियों की तरफ एक टक देखती रही। कुछ ठहर कर उसने दस्तक दी। पहरेदार बांदी ने हाजिर होकर कोर्निश की।

शाहज़ादी ने कहा—"क्या तू जानती है कि नर्गिस इस वक्त कहाँ है ?"

"वह हुजूर के हुक्म के इन्तजार में बैठी है।"

"उसे भेज दे, और देख चाहे भी जैसा जरूरी काम हो मगर कोई आने न पावे।"

"जो हुक्म।" बांदी झुककर चली गई।

नर्गिस ने आकर शाहजादी को सलाम किया।

शाहजादी ने अलसाई नजर से देखकर कहा—

"काम हुआ ?"

"जी हाँ, सरकार।"

"भवानी ज्योतिषी मिला ?"

"जी हां।"

"वह बात कही ?"

"हुजूर सब ठीक हो गया है।"

"उसने दारा को तेरे कहे मुताबिक़ बरग़लाया ?"

"जी हाँ सरकार।"

शाहजादी फिर मसनद पर लुढ़क गई। वह देर तक कुछ सोचती रही। इसके बाद उसने एक प्याला चढ़ाकर कहा—

"दूसरा काम ?"

"वह भी हो गया हुजूर।"

"इतमीनान से ?"

"जी हाँ खुदावन्द।"

"कौन है वह ?"

"हुजूर, एक मसख़रा अफ़ीमची है, मैं उसे मुद्दत से जानती हूँ।"

"काम बहुत नाजुक है।"

"सरकार, आप बेफिक्र रहें।"

"एक प्याला शीराजी का दे।"

बांदी ने प्याला भर कर पेश किया। बेगम ने कहा—

"बैठ, तीसरा काम ?"

"हुजूर, हो गया।"

"कहाँ है ?"

"हुजूर के ख़ास कमरे में।"

बेगम ने गले से एक मोतियों की माला उतार कर उसपर फेंकी। फिर मुस्कुराकर शराब देने का संकेत किया। बांदी प्याले पर प्याला देने लगी।

फहमिया बानू ने आकर आदाब बजाया। बेगम ने नर्गिस से

जाने का इशारा किया। उसके जाने पर उसकी ओर झूमते हुए नेत्र घुमाकर कहा—

"बादशाह सलामत क्या आरामगाह में तशरीफ ले गए ?"

"जी नहीं हुजूर।"

"बकाऐनवीस का रोजनामचा सुन लिया गया ?"

"जी हाँ खुदावन्द।"

"कोई खास बात ?"

"शाहजादा दारा ने उन चालीसों क़ैदियों के हाथ कटवा डाले हैं जो शुजा की लड़ाई में गिरफ्तार हुए थे।"

बेगम ने होंठ काट कर हुंकारा भरा। फिर पूछा—"और कुछ ?"

"हुजूर, बादशाह सलामत और वलिऐ अहद में बहुत हुज्जत हो रही है।"

"किस अम्र में ?"

"बादशाह सलामत फ़र्मा रहे हैं कि फौरन सुलेमान शिकोह को वापस बुला लो, मगर वलिऐ अहद की राय है कि उसे शाहजादा शुजा का बंगाल तक पीछा करने दिया जाय।"

बेगम मुस्कुरा दी—"बहुत खूब फहमिया बानू, तुम हजरत सलामत के ख्वाबगाह जाने तक वहीं हाजिर रहो।"

"जो हुक्म हुजूर, मगर खुफिया नवीस की दारोगा--"

"वह सुबह गुस्ल के बाद हाजिर हो।"

"जो हुक्म" कह कर फहमिया बानू चली गई। बेगम ने दस्तक दी। नर्गिस आ हाजिर हुई।

"भवानी ज्योतिषी ने दारा से क्या कहा था ?"

"हुजूर, उसने उन्हें समझा दिया है कि सुलेमान शिकोह इस मुहिम में पूरी फतह करके लौटेंगे। उनके सितारे बुलन्द हैं। लगे हाथ उन्हें बंगाल, बिहार और उड़ीसा दखल कर लेना चाहिए।"

"बहुत खूब नर्गिस ।"

"हुजूर—"

"तूने कहा—वह खूबसूरत है ।"

"हुजूर अमीरज़ादा है ।"

"शीराजी दे ।"

बांदी ने प्याला भर दिया । बेगम ने प्याला खाली कर कालीन पर लुढ़का दिया । फिर अंगड़ाई लेकर कहा—"चल कमरे खास का रास्ता दिखा ।"

बांदी ने सहारा देकर शाहजादी को उठाया और वह लड़खड़ाती हुई कमरे ख़ास की ओर चली गई ।

२२

मीरजुमला का कूच

फर्मान और फौज का अधिकार मिलते ही मीरंजुमला ने फिर दिल्ली में ठहरना ठीक नहीं समझा । उसने अपने और औरंगजेब के विश्वस्त अमीरों की एक गुप्त सभा की और उसमें भविष्य की सब योजनाएं तैयार कर तथा अपने गुप्त आदेशों की पूर्त्ति का प्रबन्ध कर अपने पुत्र अमीर खां को सब ऊंच नीच से सावधान कर दिल्ली से तुरन्त कूच बोल दिया । उसने दुहरा कूच करते हुए जल्द से जल्द दिल्ली से दूर होने तथा औरंगजेब के निकट होने की चेष्टा की ।

मीरजुमला एक मंजा हुआ सिपाही और दूरदर्शी राजनीतिज्ञ था । वास्तव में उसका मूल उद्देश्य, इस भारी सेना से औरंगजेब को लाभ पहुंचाना था । परन्तु एक तो उसका परिवार दिल्ली में दारा के अधिकार में था, दूसरे उसके साथ बादशाह ने जो सिपहसालार और उमराव लगा दिए थे उन पर उसके मन का

भेद प्रकट न था और न वह उन पर अपना असल अभिप्राय प्रकट करना ही चाहता था—इसलिए उसे प्रत्येक बात में बहुत सावधानी की आवश्यकता थी।

वह अपने प्रत्येक आचरण से यही प्रकट करना चाह रहा था कि वह प्रत्येक मूल्य पर बादशाह की आज्ञा का पालन करना चाहता है। परन्तु उसका गूढ़ उद्देश्य यह था कि वह औरंगजेब के यथासम्भव निकट ही रहे और उसके पक्ष में अपनी कूटनीति का दूसरा क़दम समय आने पर उठाने में किसी बाधा को अपने बीच न फटकने दे।

सन् १६३६ की संधि में मुग़ल साम्राज्य और गोलकुण्डा तथा बीजापुर के दोनों राज्यों की सीमाएं स्पष्ट निर्धारित हो गई थीं। कृष्णा नदी से कावेरी पार तंजौर तक कर्नाटक प्रदेश था जिसमें विजयनगर राज्य के भग्नावशिष्ट छोटे छोटे हिन्दू राज्य फैले हुए थे, जिनपर अब मुस्लिम शासकों का आधिपत्य होने लगा था। चिलका झील से पैनार नदी तक के प्रदेशों को जीतती हुई गोलकुण्डा की सेनाओं ने उस राज्य की सीमाओं को बंगाल की खाड़ी तक फैला दिया था।

बीजापुर राज्य दक्षिण की ओर बढ़ते हुए जिंजी और तंजौर के किनारों को वश में कर अब पूर्व की ओर बढ़ने लगा। विजयनगर के अंतिम ध्वंसावशेषों को सगठित करके ही चन्द्रगिरि राज्य की स्थापना की गई थी। पूर्व में नैलौर से पण्डिचेरी तक और पश्चिम में मैसूर की सीमा तक यह राज्य फैला हुआ था। उत्तर और दक्षिण दोनों दिशाओं में इन दोनों मुसलमानी राज्यों के बीच यह हिन्दू खण्ड राज्य एक प्रकार से घिर ही गया था, और अब बीजापुर और गोलकुण्डा दोनों राज्यों के बीच इसे हड़प लेने की होड़ चल रही थी। अबतक गोलकुण्डा की इस काम में जो प्रगति हुई थी उसका अधिकांश श्रेय मीरजुमला ही को था।

बीजापुर का सुलतान मुहम्मद आदिल शाह मर गया। उसके प्रधान मन्त्री खान मुहम्मद और सुलतान की बेगम बड़ी साहिबा ने मृत सुलतान के १८ वर्षीय पुत्र को अली आदिलशाह द्वितीय के नाम से गद्दी पर बैठा दिया। इस पर दक्षिण के मुग़ल सूबेदार औरंगजेब ने बादशाह को सूचना दी कि अली वास्तव में मृत सुलतान का पुत्र नहीं है। वह एक अनाथ लड़का है जिसे मुहम्मद आदिलशाह ने हरम में रखकर पाला था। औरंगजेब ने इस सूचना के साथ ही बीजापुर पर तुरन्त आक्रमण करने की अनुमति भी मांगी थी। उधर आदिलशाह की मृत्यु होते ही कर्नाटक में बड़ी भारी गड़बड़ी मच गई। जमींदारों ने जितनी चाही जमीन अपने अधिकार में कर ली। राजधानी की दशा और भी ख़राब हो गई। बीजापुर सरदार आपस में एक दूसरे से अपने अपने हाथ में शासन-सत्ता लेने को लड़ने लगे। प्रधान मन्त्री खान बहादुर चारों ओर से इन घरेलू शत्रुओं से घिर गया। इस सुअवसर से औरंगजेब ने पूरा लाभ उठाया और उन बिगड़ैल सरदारों को तोड़ फोड़ कर एक षड़यन्त्र खड़ा कर दिया। बीजापुर राज दरबार के अनेक सरदार, अमीर, औरंगजेब की सहायता करने को तैयार हो गए।

मीरजुमला के दिल्ली पहुंचने से प्रथम ही वहाँ से शाही फर्मान औरंगजेब के पास आ गया कि बीजापुर के मामले को जैसा मुनासिब समझो तय कर लो।

परन्तु यह वास्तव में बीजापुर के विरुद्ध स्पष्ट युद्ध-घोषणा थी, जो बीजापुर राज्य के प्रति सरासर अन्याय था। बीजापुर मुग़ल साम्राज्य का आधीन राज्य न था। मित्र राज्य था। इसलिए मुगल दरबार को उसके भीतरी मामलों में दख़ल देने का कोई अधिकार न था। परन्तु औरंगजेब तो ऐसे ही सुयोग चाह रहा था, और अब वह बड़ी बेचैनी से मीरजुमला के प्रत्यागमन

की राह देखने लगा।

मीरजुमला बीस हजार सुशिक्षित सैन्य और उम्दा तोप ख़ाना लेकर औरंगाबाद आ पहुंचा। अब उसने दारा के इस वक्तव्य की कुछ भी परवाह न की कि औरंगजेब से वह दूर रहे। उसने औरंगजेब को साथ ले बीदर के दुर्ग का घेरा डाल दिया। वहां के क़िलेदार सिद्दी मरजान ने भारी अवरोध किया पर मीरजुमला के सुशिक्षित तोपचियों के सामने उसकी एक न चली। किले की दीवारें भंग हो गईं और दुर्भाग्य से एक गोला बारूद के भरे हुए मकान पर गिरने से किले का आधा भाग एक बारगी ही उड़ गया। मरजान बुरी तरह अपने दो पुत्रों साहित घायल हुआ, और विजयी मुगल नगर में घुसकर लूटपाट मचाने लगे। लाचार मृत्यु-शैया पर पड़े हुए मरजान ने अपने सात पुत्रों को किले की चाबी देकर औरंगजेब के पास भेज दिया। इस प्रकार केवल २७ दिनों में बीदर का दुर्गम दुर्ग औरंगजेब ने जीत लिया। जिसमें बहुत सी सामग्री के साथ नगद बारह लाख रुपए, आठ लाख मूल्य का गोला बारूद, अनाज और दो सौ तीस तोपें उसके हाथ लगीं। निसंदेह इस विजय का श्रेय मीरजुमला को था जिसने अपूर्व दक्षता से सैन्य-संचालन किया था।

इसके बाद उसने महावत खां की कमान में पन्द्रह हजार घुड़-सवारों को आगे बढ़ा कर शत्रु के सैनिकों के एकत्र दल को मार भगाने को खड़ी रकाब दौड़ा दिए। जिन्होंने पश्चिम में कल्याणी और दक्षिण में गुलबर्ग तक के सारे बीजापुर राज्य में लूट कर उसे उजाड़ दिया। बीजापुर के बीस हजार सैन्य ने प्रमुख बीजा-पुरी सेना नायक खान मुहम्मद—अफजल खां, रण दुल्ला तथा रेहाना के पुत्रों के नेतृत्त्व में करारा अवरोध किया—परन्तु वीर सेनानी महावत खां के आगे आखिर उनके पैर उखड़ गए।

अब उसने कल्याणी की ओर रुख किया। बीदर से चालीस

मील पश्चिम में, गोलकुण्डा से सुप्रसिद्ध तीर्थ तुलजापुर जाने वाले प्राचीन मार्ग पर, कन्नड़ प्रदेश है, जहां चालुक्य राजाओं की प्राचीन राजधानी कल्याणी थी। मीरजुमला ने तावड़ तोड़ पहुंचकर कल्याणी पर घेरा डाल दिया। किले की रक्षक-सेना दीवारों पर से रात दिन गोलियों की वर्षा करने लगी। खाइयों में भयानक मारकाट मच गई। क़िले के चारों तरफ भी छुटपुट आक्रमण प्रत्याक्रमण होने लगे। और यह युद्ध एक गंभीर रूप धारण कर गया। बूंदी के राव छत्रसाल हाड़ा ने इस युद्ध में वीरत्व प्रदर्शन किया। ख़ान मुहम्मद के घुड़सवारों का उसने बड़े दर्प से अवरोध किया। उधर बहलोल खां के बेटों ने राय रायसिंह सीसोदिया पर भारी दबाव डालकर उसे घायल कर दिया। अन्त में महावत खां ने आगे बढ़कर उसका उद्धार किया।

इधर जब औरंगजेब किले के घिरे अवरोध को सफल बनाने में व्यस्त था उसे सूचना मिली कि उसके पड़ाव से सिर्फ चार मील दूर तीस हजार बीजापुरी सेना युद्ध को सन्नद्ध खड़ी है। औरंगजेब मीरजुमला पर किले का भार छोड़ वीरदर्प से अपनी सेना ले आगे बढ़ा। महावत खां, राव छत्रसाल और कुछ सेना नायक उसके साथ थे। घमासान युद्ध हुआ—और मुग़ल सेना ने दाएं बाएं ऐसा दबाव दिया कि बीजापुर की सेना के पैर उखड़ गए। वह भाग खड़ी हुई। भागती सेना पर पीछे से करारी मार पड़ी। सारी ही सेना नष्ट कर डाली गई। बीजापुरी पड़ाव की सब सामग्री—शस्त्र, गोला, बारूद, तोप, स्त्रियां, घोड़े, सामान ढोने वाले जानवर आदि सारा सामान लूट लिया।

उधर मीरजुमला का अवरोध चल रहा था। किलेदार दिलावर, जो अबीसीनिया का निवासी एक हब्शी गुलाम था, बड़ी वीरता से मीरजुमला का मुक़ाबिला कर रहा था। अन्त में शाही

सेना ने खाई पार कर किले की एक बुर्ज पर अपना कब्जा कर कर लिया और अन्ततः दिलावर ने क़िले की चाबियां औरंगजेब को सौंप दी। उसे पुरस्कृत किया गया तथा बीजापुर लौट जाने दिया गया।

कल्याणी के पतन होने पर बीजापुर के सुलतान ने संधि की बात चलाई। दिल्ली में उसके प्रतिनिधि पहुंचे। उन्होंने दारा का अनुग्रह प्राप्त कर लिया । और आदिलशाह ने बीदर, कल्याणी और परेण्डा के क़िले और उनके आसपास का भूभाग मुगलों को दे दिया। इसके अतिरिक्त क्षतिपूर्ति स्वरूप एक करोड़ रुपया भी दिया। शाहजहां ने औरंगजेब को तुरन्त लौट जाने की आज्ञा दी। मीरजुमला से मिलकर औरंगजेब औरंगाबाद लौट गया। और मीरजुमला ने अपनी समूची मुग़ल सेना सहित कल्याणी दुर्ग में अपनी छावनी डाली।

२३

मुग़ल तख्त डगमग

इसी समय बादशाह दिल्ली में एकाएक बीमार पड़ गया। शाही हकीम उसे आरोग्य करने में सफल नहीं हुए। उसकी बीमारी बढ़ती ही गई। नित्य लगने वाला दरबार भी बन्द हो गया, और झरोखे में बैठ कर दर्शन देना भी बन्द हो गया। शाही हकीमों की मुग़ल दरबार में बड़ी भरमार थी। इनकी दरबार में बड़ी इज्जत भी होती थी। इन्हें 'अजमी उलनसल' का और खाँ का खिताब मिला हुआ था, और इन्हें वार्षिक वेतन बीस हजार रुपए से लेकर दो लाख रुपयों तक मिलता था। परन्तु इनकी योग्यता पुरानी तिब्बी किताबों तक ही थी। ये साधारण इलाज कर सकते थे पर बड़ी बड़ी बीमारियों में इन्हें सफलता नहीं मिलती थी।

अनेक फिरंगी डाक्टर भी दरबार में थे जो बहुधा फ़स्त खोलते और जख्मों की दवादारू किया करते थे। ये सभी हकीम डाक्टर महलसरा में बुर्का उढ़ा कर ले जाए जाते थे। इनमें से कोई भी बादशाह को आराम नहीं कर सका।

यह बीमारी वास्तव में बादशाह ने अपने ही हाथों मोल ली थी। सड़सठ वर्ष की आयु होने पर भी वह निरन्तर कामशक्ति-वर्द्धक और स्तंभन की दवाइयां खाता रहता था—जिन्हें वह पचा नहीं सकता था, न उनके विषैले प्रभाव को उसका जीर्णशीर्ण शरीर सह सकता था। परिणाम जो होना था वही हुआ। उसकी मूत्र-पिण्ड-ग्रन्थियां बढ़ गईं और उसका मूत्र-प्रवाह रुक गया। तथा रक्त में मूत्र मिल जाने से उसकी दशा संकटापन्न हो गई। और वह बहुत कमजोर हो गया।

इस समय दिल्ली का वातावरण अत्यन्त क्षुब्ध हो रहा था। वास्तव में उस प्रबल क्षोभ को उत्पन्न करने वाला प्रमुख सूत्रधार मीरजुमला था। दिल्ली में वह यद्यपि एक सप्ताह भी नहीं ठहरा था परन्तु इसी बीच में वह अपनी ऐसी कूटनीति का जाल दिल्ली दरबार में बिछा गया था कि बादशाह के बीमार पड़ते ही बादशाह के कैद होने, मरने तथा बहुत बीमार होने की अफवाहें साम्राज्य भर में फैल गईं। और जब तक अमीर मीरजुमला कल्याणी पहुंचे तब तक तो साम्राज्य भर में संदेह और अराजकता के लक्षण दीखने लगे थे।

मीरजुमला की फैलाई हुई अफवाहों में खूब अंकुर उगा था। बादशाह की बीमारी में दारा और बेगम जहांआरा ने बादशाह की बड़ी सेवा की थी। शाहजहां अब जीवन से निराश हो गया। उसने रोग-शैया पर ही एक ख़ास दरबार किया और सब विश्वासी और बड़े-बड़े अमीरों को बुला कर यह अपनी अंतिम इच्छा प्रगट की कि वे अब दारा ही को बादशाह मान कर उसकी आज्ञा का

पालन करें। परन्तु दारा ने राज्यारोहण नहीं किया—पिता के नाम पर ही शासन-कार्य करता रहा। उसने मीरजुमला को प्रधान मन्त्री के पद से बर्ख़ास्त कर दिया और महावत खां आदि सेना-पतियों को सेना सहित दक्षिण से लौट आने की आज्ञाएं प्रचारित कर दीं। रोग-शैया पर बादशाह बुरी-बुरी खबर सुनने लगा। सब से पहिले सुलतान शुजा ने, जो बंगाल का सूबेदार था—अपने को बादशाह घोषित कर दिया, और बेशुमार फौज भरती करना आरंभ कर दिया। उसने उस प्रान्त के शहरों और जमींदारों से लूट पीट कर बहुत सा धन एकत्र कर लिया था। इससे वह बहुत जल्द एक भारी सेना का अधिनायक बन गया, और उसने आगरे की ओर कूच बोल दिया।

उसने अपने लश्कर में यह बात प्रसिद्ध कर दी कि दारा ने बादशाह को जहर देकर मार डाला है, इसलिए हम इस खूने-नाहक़ और हरकते नाशाइस्ता का बदला लेने और तख्ते सल्तनत को, जो खाली है जुलूम करेंगे। उसे दरबार के शिया ईरानी अमीरों का बहुत भरोसा था, जिन्हें अपने पक्ष में करने को उसने स्वयं शिया धर्म का बाना पहिना था—और रुपया पानी की भांति लुटाया था।

दक्षिण और गुजरात में औरंगजेब और मुराद ने भी यही किया। औरंगजेब तो पहिले से ही चौकन्ना बैठा था। उसने तुरन्त ही अपनी तैयारियां आरम्भ कर दीं। वह शीघ्रता से खजाना और फौजें संग्रह करने लगा। चारों भाई अपने-अपने मित्रों और सहायकों को इकट्ठा करने लगे। दरबार में सभी के दोस्त दुश्मन थे, परन्तु परिस्थति ऐसी थी कि किसी को न अपने दोस्त पर भरोसा था न दुश्मन पर। सच पूछा जाय तो यह कहना ही संभव न था कि कौन किसका दोस्त है और कौन किसका शत्रु।

इन तमाम खबरों से राजधानी में अन्धेर मच गया, और

बादशाह रोगी और कमजोर होने पर भी आगरा को चल पड़ा। आगरे आकर दारा ने बेशुमार फौज भरती करनी शुरू कर दी तथा आगरा और देहली नगर का प्रबन्ध खास अपने हाथ में ले लिया। इस सम्बन्ध में उसने बादशाह के हुक्म की भी परवाह न की। उसे डराया और धमकाया भी। इससे बादशाह बहुत भयभीत और शंकित हो गया। अब वह रोगी, कामुक और बूढ़ा बादशाह प्रतिक्षण अपने प्यारे पुत्र दारा पर शक करके यह भय करने लगा कि कहीं यह मुझे विष देकर न मार डाले या कैद न कर ले।

विद्रोहियों के अनेक पत्र और षड़यन्त्र दारा ने प्रकट करके बादशाह को दिखाए। बेगम जहाँआरा ने भी बहुत हाथ पैर मारे पर बादशाह तो जड़ हो गया। उसे किस पर भरोसा करना चाहिए यह भी वह नहीं सोच सका। इन सब दुश्चिन्ताओं के कारण बादशाह की बीमारी और कमज़ोरी और भी बढ़ गई। परन्तु उसने दैनिक दरबार करना नहीं छोड़ा। दूर दूर के हाकिमों को अपनी तन्दुरुस्ती और जिन्दा रहने के परचे भिजवा दिए। इसी प्रकार के पत्र उसने अपने उन पुत्रों के पास भी भिजवाए जो फौजें लिए आगरे की ओर रुख कर चुके थे।

जब बादशाह का एक ऐसा ही पत्र शुजा को मिला तो उसने जवाब में बादशाह को लिखा—"मुझे बन्दगानेवाला की सलामती पर यकीन नहीं आता, और बिलफ़र्ज़ हुजूर जिन्दा और सलामत हैं तो क़दमबोसी हासिल करने और इर्शाद व अहकाम से सर्फराज होने की मुझे बड़ी तमन्ना है।" इसी प्रकार की बहानेबाजियां दूसरे भाइयों ने भी कीं। इसका परिणाम यह हुआ कि लोग खुले आम कहने लगे कि अब तलवारें ही चारों भाइयों की किस्मतों का फैसला करेंगी। परन्तु इस युद्ध में केवल दो ही बातें थीं—या तो जय या मृत्यु। उधर इस भावी युद्ध की आशंका से

लोग शंकित, भयभीत और चौकन्ने हो गए। आगरा और दिल्ली के बाजारों में और लश्कर में एक अजीब सनसनी छा गई। बड़े-बड़े व्यापारी, लखपती अपना अपना रुपया बटोर कर उसे सुरक्षित रखने की चिन्ता करने लगे। कारबार में भी बाधा होने लगी। कई दिनों तक बाजारों में हड़ताल रही। जिन्सों के भाव तेज हो गए। बादशाह पर इसका बुरा असर पड़ा। उसके वजीर और दरबारी जो पहिले ही से उससे घृणा करते थे तथा जिनकी पत्नियों और पुत्रियों की इज्जत-आबरू उसने लूटी थी तथा जो मीरजुमला से कौल करार करके औरंगजेब से मिल चुके थे—बादशाह को गोलमटोल और उल्टी सीधी सलाह देने लगे। दारा हर समय बौखलाया सा, क्रुद्ध और अशान्त रहता। वह प्रत्येक अमीर को भारी भारी दण्ड देने की योजनाएं बनाता रहता। उनका अपमान करता। इस प्रकार अपनी हठ, अहम्मन्यता और अदूरदर्शिता से वह दिन दिन अकेला होता चला गया। प्रबल प्रतापी मुग़ल तख्त डगमगाने लगा, और लोगों को विश्वास हो गया कि जैसे शाहजहां ने अपने भाइयों के खून से हाथ रंग कर तख्त पाया था, उसी भांति उसके बेटे भी करेंगे। जैसे भाइयों के ताजे गर्म रक्त से रंगे हुए चरणों से मुगल तख्त पर आरोहण करना एक परम्परा हो गई।

इस प्रकार, सात करोड़ मूल्य का वह सुन्दर और अप्रतिम तख्ते ताऊस—जिसे अभी बादशाह के चरणों ने छुआ ही था—डगमग होने लगा।

२४

औरंगज़ेब

औरंगजेब एक उच्चाकांक्षी, वीर, दिलेर और दृढ़ निश्चय का आदमी था। बादशाह उसकी कपट-चातुरी से सदैव चौकन्ना रहता था—परन्तु फिर भी उसकी कूटनीति काम कर ही जाती थी। सब बातें सोच-विचार कर बादशाह ने उसे दमन पर आक्रमण

करने भेजा था। औरंगजेब ने वहां बड़ी वीरता और मुस्तैदी दिखाई थी। उसके साथ उसका दूधभाई मीरबाबा भी था। यह एक खूब बलिष्ट, साहसी, योद्धा और औरंगजेब का पक्का भक्त था। युद्ध में कई बार इसने औरंगजेब की जान बचाई थी।

बलख़ में औरंगजेब चटाई पर सोता; मूली, गाजर, जौ, चना खाता और टोपियां सी कर, तथा कुरआन लिख कर अपनी गुजरान का ढोंग करता था। वह खुले दिल से खैरात बांटता, बहुत-सा समय कुरआन पढ़ने तथा नमाज पढ़ने में व्यतीत करता। तस्बीह हर समय इस ढोंगी युवक राजकुमार के हाथ में रहती; उंगलियां सरकती रहतीं, और ओठ फड़कते रहते थे। अनेकों फ़कीर, साधू, जादू टोने वाले उसके पास आते। वह उनसे इस प्रकार बात करता जैसे उसे उन पर बड़ा भारी भरोसा हो, परन्तु वे वास्तव में उसके जासूस होते थे, जो राजधानी की, अमीरों की और शाही रंगमहल की तथा इधर-उधर की छोटी-बड़ी खबरें राई रत्ती उसे देते रहते थे। वह बहुधा बड़े-बड़े चिल्ले खींचता और रोजे रखता तथा मिलने वालों और दरबारियों से सूफी फ़कीरों की तरह बातें करता रहता था।

औरंगजेब यह अच्छी तरह जानता था कि बादशाह उससे प्रेम नहीं करता और दारा उसकी जान का गाहक है। परन्तु वह हमेशा बादशाह और दारा को प्रेम और विनय से भरी हुई चिट्ठियां लिखता। यद्यपि वह दारा को अपना बड़ा भारी बैरी समझता था और वह स्वयं भी उसके प्राणों का गाहक था फिर भी वह दारा को बड़ी खुशामदों से भरी अर्जियां और चिट्ठियां लिखा करता था। उनमें वह अपने अपराधों की बारंबार क्षमा माँगता और लिखता कि आप मेरे पिता के समान पूज्य हैं। कभी लिखता—"मैं और मीरबाबा आपके क़दमों के निसार होने के इच्छुक हैं।" बेवकूफ दारा इन चिट्ठियों को पढ़ कर फूल कर कुप्पा

हो जाता, और बहुधा उन्हें अपने मुसाहिबों को पढ़-पढ़ कर सुनाया करता था।

इस प्रकार जब उसने दारा और बादशाह का दिल मुट्ठी में ले लिया तो उसने दारा को लिखा कि आप किसी तरह यहां से मेरी बदली करा दें। मैं यहां बीमार रहता हूँ और यहां का जलवायु मेरे अनुकूल नहीं है। यदि मुझे दक्षिण भेज दिया जाय तो मैं प्रसन्नता से वहां जाना स्वीकार कर लूंगा।

परन्तु वास्तव में दक्षिण जाने का उसका गूढ़ उद्देश्य यह था कि गोलकुण्डा और बीजापुर की राजधानियों के निकट रहने से उसे अधिक से अधिक सेना रखने और कभी न कभी उन इलाकों पर हमला करने के सुअवसर प्राप्त हो ही जावेंगे। फिर वहां की उपजाऊ भूमि, हीरों की खानें, समुद्र का किनारा, तथा भांति भांति की वस्तुओं की प्राप्ति की सुविधाएं थीं।

परन्तु मूर्ख दारा इन बातों पर विचार नहीं कर सका। वह उसके झांसे में आ गया। उसने बादशाह को समझा-बुझा कर औरंगजेब को दक्षिण भेजने की आज्ञा दिलवा दी। बादशाह ने बहुत कहा कि तुम आस्तीन के साँप को पल्ले बांधते हो। खबरदार रहो, पछताओगे। पर उसने हँस कर टाल दिया।

दक्षिण पहुँचते ही औरंगजेब ने पैर फैला दिए। उसने पहले औरंगाबाद नाम का एक नया नगर बसाया। और वहां बैठ कर और बढ़िया बढ़िया महल बना कर अपनी कुटिल राजनीति का चक्र चलाने लगा। भाग्य से उसका चक्र चल भी गया। मीर-जुमला की मैत्री उसे अनायास ही मिल गई। पाठक जानते ही हैं कि किस प्रकार गोलकुण्डा पर अवसर पाकर उसने छापा मारा। यद्यपि बादशाह के हुक्म से उसके पंजे से गोलकुण्डा निकल गया था और इससे वह बहुत खीझ भी गया था, परन्तु उसने उसकी आशा नहीं छोड़ी। दोनों धुन के पक्के मित्र परस्पर मिल कर नए

नए मन्सूबे गांठ रहे थे। इतने ही में बहुदर्शी बादशाह ने मीरजुमला को दिल्ली दरबारे शाही में बुला भेजा।

अब औरंगजेब क्या करे? वह औरंगाबाद में बैठा अनेक जासूसों द्वारा दिल्ली के समाचार मंगा रहा था। दरबार में मीर-जुमला की जो प्रतिष्ठा हुई थी वह सब सुन चुका था और चतुर मीरजुमला ने किस कौशल से बादशाह का वलख़ पर चढ़ाई करने का इरादा बदल दिया था यह भी वह सुन चुका था। अब वह इस प्रतीक्षा में था कि मीरजुमला ज्योंही एक सुगठित सेना और उम्दा तोपखाना लेकर दक्षिण में आए तो वह भी अपने मन-सूबे पूरे करे। मीरजुमला का तो यही इरादा था। अतः उसके आते ही दोनों ने झटपट बीदर और कल्याणी का दुर्ग जय करके बीजापुर राज्य को आघात पहुँचा दिया। अब मीरजुमला को कल्याणी के दुर्ग में शाही सेना सहित व्यवस्थित करके वह अपनी भावी योजना बनाने औरंगाबाद आ बैठा।

अभी औरंगाबाद पूरा आबाद न हो पाया था। शाही महल बनते जा रहे थे। फौजों की बारकें बन रही थीं। हजारों मजदूर और कारीगर काम कर रहे थे। बड़े-बड़े बाजार तैयार किए जा रहे थे और देश-देश के व्यापारियों को भारी भारी सुविधाएं दे दे कर वहां बसाया जा रहा था।

अपनी बारहदरी में औरंगजेब एक चटाई पर बैठा कुरआन लिख रहा था। पास ही तस्बीह रखी थी। दो तीन गुलाम कुछ हट कर हाथ बांधे खड़े थे। दिल्ली से एक जरूरी सन्देश का जवाब आने की प्रतीक्षा में वह कुछ विकल सा हो रहा था। कभी कभी वह बड़बड़ा उठता और हाथ का काम छोड़ देता था। कुछ ठहर कर उसने मीरबाबा को तलब किया। मीरबाबा आदाब बजा कर चुपचाप सामने बैठ गया। औरंगजेब ने कहा—

"भाई जान, आज तीसरा चांद है, क़ासिद को आज से

पहले ही पहुँच जाना चाहिए था। बुरहानपुर तक तो वह आ चुका है—तुमने कहा था।"

"जी हां, और उसे आज यहां जरूर जरूर पहुँच रहना चाहिए।"

ये बातें हो ही रही थीं कि क़ासिद के आने की सूचना मिली। औरंगजेब ने तुरन्त उसे सामने बुला भेजा। क़ासिद बहुत थका हुआ था। उसने औरंगजेब को तीन थैलियां दीं। तीनों थैलियां कमख्वाब की थीं और उन पर बहुत कीमती जरी का काम हो रहा था। तथा तीनों पर बाक़ायदा सील मुहर थी। उन में एक ख़त बादशाह का था, दूसरा मीरजुमला का और तीसरा उसकी प्यारी बहिन रौशनआरा का था।

तीनों ख़रीतों की सील मुहर को बहुत सावधानी से देखने के बाद उसने पूछा—

"जबानी ख़बर क्या है?"

दूत ने और निकट आकर धीमे स्वर से कहा—

"हुजूर, अमीर मीरजुमला बहुत बड़ी शाही फौज और तोपखाना लेकर दकन आ रहे हैं। दिल्ली के अनक़रीब तमाम अमीर दारा से वदजन हो गए हैं और हुजूर का साथ देने को तैयार हैं।"

औरंगजेब ने दोनों होठों को बन्द करके आकाश की ओर दृष्टि की। फिर कहा—

'और बादशाह सलामत?'

"हुजूर, वे सुबह के चिराग हैं। इस वक़्त तो बादशाह दारा हैं, मगर दरबार में उनके दोस्त बहुत कम हैं।" कुछ देर चुप रह कर औरंगजेब ने उसे जाने का संकेत किया—फिर ख़रीतों को अच्छी तरह देख कर मुस्कुरा दिया। उन्हें मीरबाबा के सुपुर्द करके कहा—"आज रात को इन पर गौर किया जायगा।"

मीरबाबा ने यत्न से खरीतों को सम्हाल कर कहा—'अब हज़रत, आप उठिए और भीतर महल में तशरीफ ले चलिए।'

औरंगजेब कुछ सोचता हुआ उठा और धीरे-धीरे भीतर चला गया। उसकी तस्बीह और कुरआन शरीफ़ वहीं चटाई पर पड़ी रह गईं।

२५

औरंगज़ेब का हरम

इस समय तक इस फ़कीर शाहज़ादे के हरम में केवल तीन बेगमें थीं। बादशाह बेगम दिलरस बानू थी। वह फारस के शाह शाह इस्माईल सफाकी के छोटे पुत्र के प्रपौत्र शाहनवाज़ की नख़रेदार बेटी थी। अब से बीस वर्ष पूर्व इसका विवाह औरंगजेब के साथ आगरे में बड़ी धूमधाम से हुआ था। उस समय औरंगजेब की आयु केवल उन्नीस वर्ष और बेगम की सत्रह वर्ष की थी। प्रारम्भ में दोनों पति-पत्नियों में प्रेम रहा—परन्तु शीघ्र ही दोनों में खिंच गई। वास्तव में यह बड़े तीखे स्वभाव की स्त्री थी और उसे अपने फारस के राजवंश का बड़ा घमण्ड था। वह सदा अपने को मुगलों से श्रेष्ठ समझती थी। इस समय तक इसकी चार संतान हो चुकी थीं। सबसे बड़ी पुत्री जेबुन्निसां थी जो इस समय उन्नीस वर्ष की नवयुवती थी। उसमें पिता की तीव्र बुद्धि और अपनी भावुक साहित्य-प्रियता थी। इसी उम्र में उसे पढ़ने लिखने का गहरा शौक हो गया था और उसने अनेक पुरुष नई नई पुस्तकों की नकल करने को नियुक्त कर दिए थे, जो निरन्तर उसके पसन्द के ग्रन्थ नकल करते रहते थे। उनका वेतन वह अपने निजू ख़र्च से देती थी। वह स्वयं भी अच्छी कविता करने लगी थी। सात वर्ष की अवस्था में जब उसने कुरान कण्ठ याद करके अपने पिता को सुनाया तो औरंगजेब ने बड़ी

धूमधाम से इसका उत्सव दिल्ली में मनाया था—सारी सेना को दावत दी थी। इसके अतिरिक्त तीस हजार अशर्फियां गरीबों को बांटी थीं। साम्राज्य भर में जश्न मनाया गया था तथा दफ़र बन्द रहे थे। जेबुन्निसां अरबी की भी बड़ी पण्डिता थी। वह स्वयं नस्तालीक, नश्ख, और शिकस्त ख़त लिखने में प्रवीण थी। उन दिनों काश्मीरी लोग नस्तालीक लिखने में होशियार होते थे। उनसे लिखवा लिखवा कर वह पुस्तकें संग्रह करती थी। बड़े होने पर उसने अरबी और फारसी दोनों भाषाओं में काव्य रचना की। उसने अपना उपनाम 'मकफी' रखा था। नसीर अली, सरहिन्दी, सयाब, शम्सवली उल्ला, ब्राह्मण वहराज के सत्संग से वह काव्यानन्द लेती थी। उसका मन सूफी सिद्धान्तों पर ढल गया था। वह पिता की भांति कट्टर न थी और अपना सारा वेतन विद्वानों और कवियों को पुरस्कृत करने में खर्च कर देती थी।

औरंगजेब और दिलरस बानू की दूसरी संतान जीनतउन्निसां थी। जो इस समय चौदह साल की किशोरी थी। आगे चल कर वह बादशाह बेगम के नाम से प्रसिद्ध हुई और दक्षिण में औरंगजेब की मृत्यु के बाद भी कोई पच्चीस वर्ष तक शाही राज घराने का सारा काम धन्धा देखती रही। वह एक पवित्र और दानशीला महिला थीं।

इनकी तीसरी संतान जुवतद्-उन्निसां थी जो इस समय छ साल की थी। इसका विवाह आगे चलकर भाग्यहीन दारा के दूसरे पुत्र सिपर शिकोह के साथ हुआ था।

चौथी संतान मुहम्मद आज़म शाहजादा था—जिसकी आयु इस समय चार साल की थी।

दिलरस बानू इस समय सगर्भा और रोगिणी थी—और शाही हकीम उसकी देख-भाल कर रहे थे। दिल न मिलने पर भी

इस बेगम को औरंगजेब बहुत चाहता था—उससे भय भी खाता था।

औरंगजेब की दूसरी बेगम रहमत-उन्निसां थी, जो महलों में नवाब बाई के नाम से मशहूर थी। यह काश्मीर के अन्तर्गत राजौरी राज्य के राजा राजू की पुत्री थी। पहाड़ी राजपूत घराने में उसका जन्म हुआ था। शाहज़ादा मुहम्मद सुलतान और मुअज्जम दोनों शाहजादे इसी के पुत्र थे। इन शाहजादों की इस समय आयु क्रमशः अठारह और चौदह साल की थी। इसी बेगम की एक खूबसूरत शाहजादी बदरुन्निसां थी जिसकी आयु इस समय दस साल की थी।

'औरंगाबादी महल' नाम की एक और बेगम औरंगजेब के हरम में थी, जिसे हाल ही में उसने हरम में डाल लिया था।

परन्तु इस समय इस फकीर और ढोंगी शाहजादे के हरम में सब से दिलचस्प हीराबाई थी, जो औरंगजेब के मन पर चढ़ गई थी और उसे मनमाना नाच नचाती थी। यह एक असाधारण सुन्दरी, चंचल और नृत्य संगीत में निपुण स्त्री थी। महल में यह ज़ैनाबादी के नाम से प्रसिद्ध थी।

इसका किस्सा ऐसा है कि मीर खलील नामक एक व्यक्ति के साथ औरंगजेब की मां की बहिन का रिश्ता हुआ था। उसकी मौसी उन दिनों बुरहानपुर में रहती थी और यह किशोरी लौंडी उसकी गुलाम थी। बलख के किसी बुर्दाफरोश से उसने इसे बड़े दामों में खरीदा था और स्वयं मीरखलील भी इस पर लट्टू था।

औरंगजेब की तवाज़ा का भार उसकी मौसी ने इसी चंचल लौंडी को सौंप दिया और औरंगजेब उस पर इस कदर लहालोट हो गया—कि मौसी की लल्लो चप्पो कर करके उससे इसे मांग लाया। बूढ़ी मौसी की सौतिया डाह मिटी और इस तरुणी को बूढ़े के

स्थान पर तरुण स्वामी मिल गया।

इस तरुणी दासी का औरंगजेब पर उन दिनों ऐसा नशा छाया हुआ था कि राजकाज से फारिग़ होते ही वह उसी के महल में आ पहुँचता था। वहां उसे शराब भी पीनी पड़ती थी और उसका नृत्य संगीत भी देखना पड़ता था।

२६

हीराबाई

कमरा छोटा था किन्तु सूफियाना ढंग से सजा था, फर्श पर कीमती ईरानी कालीन बिछे थे, खम्भों और महराबों पर मौलसिरी के ताजे फूलों की मालाएँ लटकी हुई थीं। तीन चार हजारा फानूसों में सुगन्धित मोमबत्तियां जल रही थीं। उस कमरे में वह अनिन्द्य सुन्दरी बाला मसनद पर अलसाई पड़ी अपनी कोमल उंगलियों से पास पड़े एक दिलरुबा के तारों को छेड़ रही थी। वह अप्रतिम सुन्दरी बिलकुल नवौढ़ा बाला थी। एक ढीली-ढाली पोशाक अस्त व्यस्त उसके अंग पर पड़ी थी। वह पोशाक इतनी बारीक थी कि उसमें छनकर उसका अंग आर-पार साफ दिखाई दे रहा था। वह पोशाक महीन ढाके की मलमल की थी। उसका रंग यद्यपि सफेद था पर उस चम्पकवर्णी के अंग का नवीन केले के पत्ते के समान रंग छन-छन कर जो फूटा आ रहा था, उससे वह पोशाक भी चम्पकवर्णी सी दीख रही थी। एक कमखाब की जाकट उसके वक्ष को छू रही थी। और एक महीन रेशमी इजारबन्द उसकी कमर में लिपटा हुआ था। उसके सुन-हरे सुघड़ नंगे पांव उस रंगीन कालीन पर ताजे गुलाब के फूलों के ढेर से दीख पड़ रहे थे।

उसका सौन्दर्य उत्तेजक था और देह की गढ़न निराली। उसकी चमकीली और घुंघुरवाली जुल्फें उसके चांदी के समान

चमकते माथे पर अठखेलियां कर रही थीं। उसके शरीर पर बहु-मूल्य मोती और हीरे के अत्यन्त सुबुक कारीगरी से बनाए अलंकार थे। उसकी आंखें काली, बड़ी बड़ी और कटीली थीं। संक्षेप में वह वासना की जीती-जागती मूर्ति थी। विचारों की लहर मनमें उठते ही उसका चेहरा गहरा गुलाबी हो जाता था। उसका हास्य निराला था और उसके लाल अधरों पर धवल दन्तपंक्ति की बहार मन को पागल कर देती थी।

उसकी कमर में एक काश्मीरी शाल बंधी थी। सुराहीदार गर्दन में बड़े बड़े मोतियों की माला और भुज-मृणाल में जड़ाऊ पहुँचियाँ पड़ी थीं। नीचे जो सलवार पहने थी वह गुलाबी साटन की थी—जिसपर बहुत उम्दा सलमे-सितारे का काम हो रहा था।

कमरा सुगन्ध से महक रहा था और वहां की मधुर रोशनी छिटकी हुई चांदनी का आनन्द दे रही थी।

इसी पारे की भांति चपल सुन्दरी का नाम हीराबाई था। उसे पाकर औरंगजेब का मुल्लापन दूर हो गया था। सदैव का गम्भीर, चुप और मक्कार औरंगजेब इस चपला नारी के सामने आकर दीवाना हो जाता था और प्यासी चितवनों से देखता नहीं अघाता था।

औरंगजेब को धीरे धीरे कमरे में आते देख सुन्दरी खिल-खिला कर हँस पड़ी। हँसते हँसते वह फर्श पर लोट गई। उसे इतने जोर से हँसती देख औरंगजेब ने मुस्कुरा कर कहा—"इस कदर क्यों हँसती हो बानू?"

"वाह हुजूर, हँसू भी नहीं! आप की भी क्या चाल है, ऐसी चुपके चुपके चलते हैं जैसे बिल्ली चूहे को पकड़ने चलती है। वाह! यह भी कोई चाल है।"

क्षण भर ही में उस कुटिल राजकुमार की गम्भीरता नष्ट हो गई। उसने हँसकर कहा—

"यह चूहे को पकड़ने की चाल है, वह चूहा पकड़ा!" औरंगजेब ने लपक कर सुन्दरी को कमर को दबोच लिया। दोनों पास बैठ गए। परन्तु औरंगजेब के चेहरे को देखकर वह फिर हँस पड़ी। मतलब न समझने पर भी औरंगजेब भी हँस दिया। उसने कहा—

"क्या कर रही थी दिलवर ?"

"मैं कुछ सोच रही थी।"

"क्या सोच रही थी ?"

"एक बात।"

"कौन बात ?"

"हुजूर के सुनने की नहीं है।"

"सुनूँ तो।"

"न कहूँगी।"

"कहो प्यारी।"

"अच्छा कान में।"

सुन्दरी चुपचाप औरंगजेब के कान के पास मुख ले गई और चट से उसका मुंह चूम लिया।

"आह, बात कहो जानेमन।"

"यही तो बात थी हुजूर।"

"इसी बात को सोच रही थी तुम ?"

"जी हां।"

"दिलवर, तुम मुझे इतना प्यार करती हो ?"

"जाइए, मैं क्यों प्यार करती ?"

"हीरा", औरंगजेब का स्वर कांपा—वह कूटनीति और कपट का पुतला इस चंचल बालिका के सम्मुख प्रेम में विभोर होकर अपने को भूल गया। उसने कस कर उसे छाती से लगा लिया।

हीराबाई ने कहा—"अच्छा एक बात बताइएगा ?"

"कौन सी बात सितमगर ?"

"बादशाह होने पर आप लौंडी को याद रखेंगे ?"

"लौंडी को ? प्यारी, तुमसे किसने कहा कि मैं बादशाह होना चाहता हूँ।"

"मैं खुद कहती हूँ शाहजादे, मैं किसी दिन तुम्हारी इस तस्बीह माला को फेंक दूंगी। तुम्हें बादशाह बनना होगा।"

"किस लिए।"

"मेरे लिए।"

"तुम्हारे लिए ?"

"हां, हां, मैं शान से मलिका बन कर मसनद पर बैठना चाहती हूँ। और जब आप दरबारे आम से आया करेंगे तो मैं आपको जहांपनाह कहूँगी। सब महल की औरतें मुझ पर डाह करेंगी। मेरे शाहजादे, मैं इसका हमेशा सपना देखती रहती हूँ।"

"सपना देखती रहती हो ?"

"हां हुजूर।"

औरंगजेब गम्भीर हो गया। उसने धीमे अस्फुट स्वर में कहा—

"भोली बानू, प्रेम और सुपना ही तुम्हारी दुनिया है।"

"और आपकी दुनिया ? कुरान शरीफ़, तस्बीह, लोगों से घुसपुस-घुसपुस बातें करना, कुछ सोचना, आसमान की ओर देखना, बिल्ली की तरह चलना, कभी न हँसना, न बोलना—यही न आपकी दुनिया है ? जाइए मैं आपसे नहीं बोलती—"

औरंगजेब ने कांपती आवाज से कहा—"हीरा प्यारी हीरा—"

परन्तु हीराबाई ने एकदम नाराज होकर कहा—

"मैं कहती हूँ कि मैं आपकी इस दुनियां में आग लगा दूंगी। मुझे ये सब बातें पसन्द नहीं हैं। आपको बादशाह होना होगा।"

औरंगजेब ने उत्तेजित होकर कहा—

"बानू।"

"ठहरिये हजरत", उसने दस्तक दी। बांदी दस्तबस्ता आ हाजिर हुई। हीराबाई ने इशारा किया। वह शराब का प्याला ले आई और उसे सामने रख कर चली गई। हीराबाई ने भर कर कहा—"पीओ।"

"आह, क्या करती हो बानू ? नहीं, यह वाहियात ....."

"वाहियात बात मत कहो—पीओ।"

"ठहरो बानू।"

"पीओ-पीओ-पीओ प्यारे," उसने औरंगजेब के गले में हाथ डाल दिया और उसके अनगिनत चुम्बन ले डाले। उस प्रेमानुरोध को, उस वासना के उबाल को औरंगजेब परास्त न कर सका। वह उस सुवासित मद्य को पी गया। इसके बाद तो घुण्डी खुल चुकी थी। प्याले पर प्याले चले और फिर हीराबाई का कोमल कण्ठ-स्वर दिलरुबा के कम्पन के साथ वातावरण में उन्माद बखेर गया। उसके कोमल चरणों की ठोकर से महल प्रकम्पित हो गया। हिन्दुस्तान के सिंहासन के लिए सर्वत्र जाल फैलाने वाला युवक औरंगजेब उसमें डूबने उतराने लगा। आकाश में तारे हँस रहे थे और भाग्य विधाता अपने ताने-बाने बुन रहा था।

२७

मराठों का उदय

मसीह की सोलहवीं शताब्दी के प्रथम चरण की समाप्ति के साथ ही महान बहमनी राजवंश का अत हो गया और आगे बहमनी राज्य को आपस में बांट कर आदिलशाह और निजामशाह ही उस महाराज्य के उत्तराधिकारी बन गए। गुलबर्गा के सुलतानों ने जो मुस्लिम सभ्यता और राजसत्ता की परम्पराएं अहमदनगर और बीजापुर में प्रसारित कीं—उनका खूब विस्तार हुआ।

सत्रहवीं शताब्दी के प्रथम चरण में ही निजामशाह की समाप्ति हो गई थी। अब इन दक्षिण के इस्लामी राज्यों का नेतृत्व अहमदनगर करता रहा था। अब बीजापुर इनका नेता बन गया था। परन्तु सत्रहवीं शताब्दी के साथ ही दक्षिण की राजनीति में एक नई सत्ता का उदय हुआ। हम बता चुके हैं कि मुगल साम्राज्य की दक्षिणी सीमाएं सन १६३६ ही में निर्धारित हो चुकी थीं। इसके बाद बीस वर्षों में बीजापुर अपने चरम विकास को पहुँच गया था। इस समय इसका राज्य भारतीय प्रायःद्वीप के दोनों समुद्र तटों को छू गया था और उसकी राजधानी कला-साहित्य-धर्म-राजनीति की केन्द्रस्थली हो गई थी। परन्तु दुर्भाग्य से बीजापुर राज्य के सुलतान विलासी और आलसी निकले। और उनकी सैनिक सत्ता का कभी भी सुगठित रूप नहीं हो पाया। अंत में आदिल अली की मृत्यु के बाद अत्यन्त शीघ्रतापूर्वक दक्षिण की मुसलमानी रियासतों का आसानी से मुगल साम्राज्य में विलय हो गया।

इसी समय दक्षिण में मराठा शक्ति का उदय हुआ। अत्यन्त प्राचीन काल से मराठे दक्षिण में रहते आते थे, वे अपनी ही जन्मभूमि में भिन्न-भिन्न विदेशी रियासतों की अनुगत प्रजा के रूप में जीवन व्यतीत कर रहे थे। उन्हें न तो कोई राजसत्ता के अधिकार ही प्राप्त थे, न उनका कोई राजनैतिक संगठन ही था। जिस समय मुगल महाराज्य का धूमकेतु औरंगजेब अपनी महत्त्वाकांक्षा के ताने बाने बुन रहा था—उसी समय दक्षिण में वीर शिवाजी का प्रादुर्भाव हुआ—जिसने इन बिखरे हुए मराठों को सुगठित करके उन्हें एक जाति में परिणत कर, उनका अजेय संगठन किया और उसे लेकर प्रबल प्रतापी मुगल राज्य पर ऐसे धक्के दिए कि उसकी जड़ें हिल गईं।

शिवाजी औरंगजेब के महान प्रतिद्वन्द्वी, और मराठों के महा

शक्तिशाली नेता थे। जिस समय की बात हम कह रहे हैं, तब से कोई सौ वर्ष प्रथम जब अकबर ने विन्ध्याचल से आगे दक्षिण की ओर कदम बढ़ाया था, तब से मुगल शक्ति निरन्तर दक्षिण के राज्यों को जीतने की चेष्टा करती रही थी। मुगल साम्राज्य की इस टक्कर को झेलने में सबसे बड़ी प्रतिभा और शक्ति का परिचय शिवाजी ने ही दिया—उनके बाद उनके पुत्र शम्भु जी के साहस और वीरता का नम्बर आया। इन प्रबल प्रतापी मराठों को दमन करने के लिए मुगल साम्राज्य को बीजापुर और गोलकुण्डा के साथ गठ-बन्धन करने को विवश होना पड़ा था।

मुगलों से तंग आकर गोलकुण्डा का सुलतान तो एक बारगी ही शिवाजी से जा मिला। बीजापुर जरा झिझक और हिच-किचाहट के बाद शिवाजी के आसरे जा खड़ा हुआ। खासकर जब आदिल शाह द्वितीय शराब और औरतों में मस्त रहने लगा, और दरबार के अमीर सुलतान राजधानी पर अधिकार जमाने लगे—तब नाबालिग सुलतान सिकन्दर के गद्दी पर बैठते ही बीजापुर की हालत एकदम बिगड़ गई और इस सुअवसर से शिवाजी ने पूरा लाभ उठाया।

शिवाजी ने मुगलों की ईमानदारी पर तनिक भी विश्वास नहीं किया। इसी से उसने दक्षिण में मुगल प्रदेश को हथियाने का कोई सुअवसर नहीं छोड़ा। बीजापुर को बिना दबोचे वह अपना उत्थान न कर सकता था, परन्तु जब आदिलशाही मंत्रियों ने उसके साथ समझौता कर लिया तो उसने बीजापुर को सताना छोड़ दिया।

सन १६५८ में औरंगजेब मुगल तख्त का दावेदार बनने के लिए दक्षिण से चला और २४ वर्ष बाद सन ८२ में वापस लौटा तो यहां उसे पूरे पचीस वर्ष घोड़े की पीठ पर ही व्यतीत करने पड़े। इस बीच के २४ वर्षों में दक्षिण में पांच सूबेदारों ने

शासन किया। इस बीच न कोई निर्णयात्मक विजय हुई न युद्ध। जो युद्ध हुए वे सफल नहीं हुए। शाहजादा शाह आलम विलासी और आरामतलब आदमी था। शराब में मस्त अन्तःपुर की स्त्रियों में मौज-मजा करना उसे पसन्द था। उसका सेनापति दिलेर खां की उससे कभी ताल मेल नहीं खाई। और वह शाहजादे की आज्ञाओं की कभी परवाह भी न करता था। वे दोनों परस्पर विरोधी उद्देश्यों पर चलते रहे। अन्य सेनानायकों में हिन्दू नायक इस हिन्दू धर्म उद्धारक नए मराठा राजा से सहानुभूति और प्रेम रखते थे। पीछे शाहजादा अकबर का विद्रोह करके शम्भु जी की शरण जाना दिल्ली तख्त के लिए एक नए संकट का संदेश लाया। जिसका सामना करने को औरंगजेब को दक्षिण जाना और निरन्तर २५ वर्ष युद्ध करना पड़ा।

अब यहां जरा मराठों की जन्म भूमि की भौगोलिक दशा पर भी विचार कीजिये। पश्चिमी घाट और हिन्द महासागर के बीच एक लम्बी किन्तु सकड़ी जमीन का हिस्सा दूर तक चला गया है। इसकी चौड़ाई कहीं कम और कहीं अधिक है। बंबई और गोआ के बीच के इस प्रदेश को कोंकण कहते हैं। गोआ के दक्षिण में कन्नड़ प्रदेश शुरू हो जाता है। कोंकण में अधिक बरसात होती है। यहां की मुख्य पैदावार चावल है। आम, केला और नारियल के बाग़ यहां बहुत हैं। घाट पार करने पर पूर्व दिशा में लगभग बीस मील चौड़ा भूखण्ड है जो लम्बा चला गया है। यही 'मावल' कहाता है। यह भूभाग ऊंची-नीची घाटियों से परिपूर्ण है। समतल स्थान बहुत कम है। इससे आगे पूर्व की दिशा में पश्चिमी घाट की पहाड़ियों की ऊंचाई कम होने लगती है, यहीं से 'देश' नामक प्रदेश का प्रारम्भ होता है। यह एक लम्बा चौड़ा उपजाऊ मैदान है जहां की मिट्टी काली है और जो दक्षिण के मध्य भाग में दूर तक फैला हुआ है। यहां के लोग सीधे-सादे और परिश्रमी हैं।

सोलहवीं शताब्दी में अन्य सभ्य जातियों की अपेक्षा मराठों में सामाजिक भेद भाव कम था। पन्द्रहवीं और सोलहवीं शताब्दियों में जो संत मराठों में जन्मे, उन्होंने जन्म की श्रेष्ठता पर चरित्र की श्रेष्ठता को उच्च बताया। मराठा समाज की भाषा और साहित्य यद्यपि उन दिनों अविकसित थे, पर उसमें एकता के भाव थे। इसी मराठा जाति को सत्रहवीं शताब्दी के द्वितीय चरण में शिवाजी ने राजनैतिक एकता में बांध कर जीवन से परिपुष्ट कर दिया। शिवाजी की सेना में कुर्मी और मराठा सैनिक थे। जो स्वभाव ही से सीधे, निष्कपट, स्वच्छन्द और परिश्रमी थे। ईसा की १४ वीं शताब्दी में जब मुसलमानों ने दक्षिण भारत अधिकृत कर लिया और मराठों के अंतिम हिन्दू राजा का भी अंत हो गया तब इस प्रदेश के योद्धाओं के छोटे-छोटे दल भिन्न-भिन्न नायकों के नेतृत्व में संगठित हो गए। इन दलों को धन देकर मुसलमान नायकों ने अपने-अपने वश में समय-समय पर किया। इस प्रकार शिवाजी के उदय से पूर्व अनेक मराठा घरानों ने अपने पार्श्ववर्ती मुस्लिम शासक की सहायता करके अपनी धन दौलत खूब बढ़ा ली थी।

इसी प्रकार का एक संपन्न घराना भोंसलों का था। जो पूना प्रान्त में पाटस नामक तालुके में रहता था। और वहीं के दो गांवों की पटेली करता था। वे खेती करते थे और अपने धार्मिक जीवन और उदार व्यवहार के कारण आस-पास बहुत प्रसिद्ध थे। संयोग से उन्हें खेत में गड़ा हुआ धन भी मिल गया, जिससे उन्होंने शस्त्रास्त्र और घोड़े खरीदे और निजाम शाही राज्य के सेनानायक बन गए। मालो जी के ज्येष्ठ पुत्र शाहजी भोंसले भी ऐसे ही एक नायक थे। वे निजाम शाह के वजीर मलिक अम्बर की वजारत के दिनों में अपने कुटुम्ब की छोटी सी टुकड़ी के नायक होकर नौकर हुए थे। पीछे मलिक अम्बर की मृत्यु होने पर

वे पहले मुगलों से फिर बीजापुर से जा मिले। पीछे उन्होंने शक्ति प्राप्त कर निजाम शाह के एक शाहजादे को नाम मात्र के लिए गद्दी पर बैठा कर—पूना और चाकण से लेकर बालाघाट तक के सारे प्रदेश तथा गुजर, अहमदनगर, संगमनेर, त्र्यम्बक, नासिक आदि स्थानों के आस-पास का सारा निजामशाही इलाका छीन लिया। और इस सुलतान के नाम से तीन वर्ष तक सारा ही राज्यभार सम्हाला।

अंत में मुगलों की एक बड़ी सेना से उन्हें युद्ध में परास्त होना पड़ा और वे महाराष्ट्र छोड़ कर बीजापुर चले गए।

सन १६३७ के लगभग शाहजी जब फिर बीजापुर की नौकरी पर आए तब मुगल साम्राज्य की दक्षिणी सीमाएं निश्चित हो चुकी थीं। इसलिए वे अपने नए स्वामी के लिए तुङ्गभद्रा और मैसूर के पठार की ओर और फिर वहां से मद्रास के समुद्री तट की ओर के प्रदेश जीतने चले गए।

शिवाजी इन्हीं शाहजी के दूसरे पुत्र थे। परन्तु शिवाजी और उनकी माता उपेक्षित थे। वे उनके कर्मचारी दादाजी कोणदेव की देख-रेख में पूना में अपनी माता के साथ रहते थे। पति की उपेक्षा के कारण जीजी बाई की वृत्तियां अन्तर्मुखी हो गई थीं और उनकी स्वाभाविक धार्मिक भावनाएं उभर आई थीं, जिनका शिवाजी पर काफी प्रभाव पड़ा। वे अकेले थे। साथ खेलने को कोई भाई-बहन न था। इस एकाकीपन ने माता-पुत्र को एक दूसरे के अति सन्निकट ला दिया और वे माता को देवी की भांति पूजने लगे। साथ ही वे स्वावलम्बी भी हो गए। और बिना ही किसी की सहायता के अपने संगी साथी मराठा तरुणों को जोड़ कर अपना दल बना लिया। वे शस्त्र बांध घोड़े पर चढ़ कर वनों और पर्वतों में साथियों सहित चक्कर लगाया करते, उनके संगी साथी मावली बालक थे। इस प्रकार उन्हें कठोर और परिश्रमी

जीवन का अभ्यास हो गया और स्वतन्त्रता से प्यार हो गया। मुसलमानों की आधीनता में दासता करने से वे घृणा करने लगे।

जिन दिनों औरंगजेब बल्ख बुखारे का सूबेदार था, शिवाजी को दक्षिण में उदय होने का अवसर मिला। बीजापुर का सुलतान मुहम्मद आदिलशाह सख्त बीमार पड़ा और दस साल रोग-शैया पर पड़ा रहा। इन दस वर्षों तक उसकी राज्य-व्यवस्था बड़ी ही ढीली रही। जिसका शिवाजी ने पूरा लाभ उठाया। उसने तोरण का किला वहां के किलेदार से छीन लिया जहां उसे दो लाख हूण हाथ लगे। इसके बाद ही उसने राजगढ़ का किला बनवाया। पीछे उसने बीजापुर वालों से कोण्डाना का किला भी छीन लिया। और साथ ही अपने पिता की पश्चिमी जागीर के सभी भागों को अपने अधिकार में कर लिया।

इसी बीच शाहजी को बीजापुर के सेनानायक मुस्तफा खां ने कैद कर लिया और उनकी सारी सेना और जायदाद को जब्त कर लिया। इस समय मुस्तफा खां दक्षिणी अर्काट के जिले में जिंजी नामक किले में घेरा डाले हुए था। शाहजी के पांवों में बेड़ियां डाल दी गईं। अन्त में अहमद खां के, जो बीजापुर दरबार का सरदार था और शाहजी का मित्र था, बीच में पड़ने से समझौता हुआ। और शाहजी ने बंगलौर, कोण्डाना और कन्दर्पी के तीन किले बीजापुर के सुलतान को भेंट कर के छुटकारा पाया।

उस समय जावली एक बड़े राज्य का केन्द्र था। यह एक सम्पन्न गांव था जो सतारा जिले के उत्तर पश्चिमी कोने में बिलकुल छोर पर था। इस राज्य का स्वामी मोरे नाम का एक मराठा सरदार था। इस सरदार के पास पहाड़ी जाति के परिश्रमी बारह हजार सैनिक थे जो मावली ही के समान थे। अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण यह जावली की छोटी सी रियासत दक्षिण और दक्षिण पश्चिम दिशा में शिवाजी की राह का एक रोड़ा बन गयी थी।

शिवाजी ने अपने ताबेदार रघुनाथ बल्लाल कोरड़े के द्वारा इस सरदार को मरवा डाला और फिर चढ़ाई कर के जावली को अपने अधिकार में कर लिया। जावली को जीत कर शिवाजी ने वहां से दो मील पश्चिम में प्रताप गढ़ नाम का क़िला बनवाया और अपनी इष्टदेवी भवानी की स्थापना की। रायगढ़ का क़िला भी मोरे कुटुम्ब के हाथ ही में था। उसे भी शिवाजी ने उनसे छीन लिया। यही रायगढ़ का किला आगे चलकर शिवाजी की राजधानी बना।

जब सन् ५६ में मुहम्मद आदिल शाह की मृत्यु होने पर औरंगजेब ने बीजापुर पर आक्रमण किया तो शिवाजी ने अपनी नीति बदली और बीजापुर की सहायता करने की ठान ली। जब औरंगजेब ने बीजापुर पर आक्रमण किए, तब उधर तो औरंगजेब के बीदर और कल्याणी पर आक्रमण हो रहे थे—इधर शिवाजी ने मुगलों के दक्षिणी पश्चिमी कोने में घुसकर लूटपाट और अन्धेर गर्दी मचाई हुई थी। तीन हजार घुड़सवारों को लेकर भाना जी भोंसले ने भीमा नदी पार कर मुगल राज्य के चमार गुण्डा तालुक़ा के गांवों को लूट लिया। इसी समय काशी नामक दूसरा सरदार भीमा पार कर रायसीन के तालुके में लूट खसोट करने लगा। अभी इस प्रतिक्रिया को एक वर्ष भी न बीता था कि मुगल साम्राज्य के दक्षिणी सूबे के प्रधान नगर अहमदनगर की चहारदिवारी तक इन मराठा सरदारों के उत्पात और लूट-मार की धूमधाम पहुँच गई। जब अहमदनगर की नाक पर बसे पेठ नगर पर मराठों का धाड़ा पड़ा—तब मुगल साम्राज्य में चिन्ता की लहर फैली। उधर शिवाजी स्वयं भी उत्तर में जुन्नर तालुका में अंधेर गर्दी मचा रहे थे। वे मौका पाकर एक अन्धेरी रात में रस्सियों की सीढ़ी लगा जुन्नर शहर की सफ़ीलों को फांद गए और वहां के पहरेदारों को मार कूट तीन लाख हूण और दो सौ घोड़े और बहुत से आभूषण और सामान लूट ले गए।

आखिर औरंगजेब का इधर ध्यान गया। उसने नसीरी खां और हरज खां की कमान में तीन हजार सवार देकर अहमदनगर भेज दिया। उधर मुल्तफत खां ने भी चमार गुण्डा में मराठों मे एक मोर्चा लिया। उधर शिवाजी से नसीरी खां की भी मुठभेड़ हो गई। अब मुगलों की सेना शिवाजी के इलाकों में घुस गई और गांवों को जलाना, लोगों को कत्ल करना और लूटना आरम्भ कर दिया।

इसी समय आगरे में भारी भारी घटनाएं हुईं। बादशाह बीमार पड़ गए और मुगल तख्त को अधिकृत करने चारों ओर से शाहजादों ने आगरे की ओर कूच कर दिया। शाहजादा औरंगजेब भी दक्षिण से चल पड़ा। उधर मुगलों से लगातार लड़ते रहने से बीजापुर सरदारों में वैमनस्य फैल गया और बीजापुर के वजीर खान मुहम्मद की हत्या कर डाली गई। अतः अब शिवाजी को अपनी महत्त्वाकांक्षा पूरी करने का पूरा अवसर मिल गया। उनकी राह में अब कोई बाधा न थी। पश्चिमी घाट के पहाड़ों को पार कर वे कोंकण में जा धमके। आजकल जो थाना जिला कहाता है, तब वह कल्याण प्रान्त का भाग था। वहां का शासन नवायत मुल्ला-अहमद नाम का एक अरब करता था जिसकी गिनती बीजापुर के प्रमुख सरदारों में थी। कल्याण और भिवण्डी के शहर सम्पन्न तो थे—पर इनकी शहरपनाह न थी। शिवाजी ने थोड़े ही प्रयास से इन दोनों नगरों को अधिकृत कर लिया। जहां से उन्हें बेशुमार धन और व्यापारिक सामग्री हाथ लगी। शिवाजी ने कल्याणी और भिवण्डी को अपनी जलसेना और जहाजों का एक अड्डा बना दिया। इस प्रकार मुगल तख्त की डगमगाहट के साथ साथ ही दक्षिण में शिवाजी के मराठा राज्य की नींव स्थापित हुई।

२८

औरंगजेब का कूटचक्र

पहले औरंगजेब ने बादशाह का ख़रीता खोला। उसमें लिखा था—"तुम्हारे ख़त से हमें तसल्ली है और हम चाहते हैं कि तुम इत्मीनान से अपने मुल्क का इन्तज़ाम करो—हमने सुना है कि तुम बराबर फौजें भरती कर रहे हो और अपने सदर से आगरे की ओर कूच करना चाहते हो। हमारा हुक्म है कि तुम अपने सदर ही में मुकीम रहो और दकन से न हटो। नई फौज भरती करने की फिलहाल ज़रूरत नहीं। हमने शाहे गोलकुण्डा और शाह बीजापुर से सुलह की है। बस, हम नहीं चाहते कि तुम कोई ऐसी हरकत करो, जो उसके ख़िलाफ हो।"

औरंगजेब की भृकुटी में बल पड़े और उसने जरा होठ सिकोड़े, फिर उसने दूसरा ख़त खोला। दूसरी चिट्ठी उसकी बहिन शाहजादी रोशनआरा की थी। उसमें लिखा था—

"मेरे प्यारे ब्रादर,

मुझे उम्मीद है तुम तन्दुरुस्त होगे। तुम्हारी हिदायतों के मुताबिक़ सब काम हो रहा है। बादशाह अपने ढर्रे पर है, शाइस्त खां की बीबी के साथ बादशाह सलामत ने जो ग़जब ढाया है उससे उस औरत ने जान दे दी। उसके मरने से तमाम दरबार में बादशाह के ख़िलाफ जोश और नाराज़ी फैल रही है। अफसोस तो इस बात का है कि ख़ास बेगम ने अब्बा को इस काम में मदद दी है, मगर बिरादर, फिक्र की कोई बात नहीं। तुम्हारे हक़ में यह सब बहुत अच्छा है। शाइस्त खां जैसा बहादुर अब तुम्हारी मुट्ठी में आ गया है। वह बादशाह से बदला लेगा। माासेवा इसके

बादशाह सलामत को इसका पूरा यक़ीन हो गया है कि वजीर सादुल्ला खां की मौत में दारा का हाथ है और वे डरते हैं कि कहीं वह बादशाह पर भी हाथ साफ न करे। इससे बादशाह भीतर ही भीतर दारा के ख़िलाफ़ सोच रहे हैं। असल तो राज यह है कि दारा की बढ़ती हुई बेअदबी और ताक़त को चुनौती देने ही के लिए बादशाह ने अमीर मीरजुमला की राय मानकर उसकी कमान में मुकम्मिल तोपख़ाने समेत इतनी बड़ी फौज दक्षिण भेजना मंजूर फर्माया है, जो वक्त जरूरत तुम्हारे ही काम आएगी। अब तुम बहुत जल्द देखोगे कि तमाम दरबार तुम्हारी मुट्ठी में है।"

इस ख़त को पढ़कर औरंगजेब ने दांत के नीचे होठ दबाया और दो तीन बार सिर हिलाया। फिर उसने तीसरा ख़त खोला। यह ख़त मीरजुमला का था। उसमें लिखा था—"मुबारक, आपने जो चाहा था वही हुआ, आपकी मुरादें बर आईं। मगर हज़रत, ख़बरदार रहिए, अब मैं बादशाह का नौकर हूँ, और उनके हुक्म की पाबन्दी मेरे लिए बहुत जरूरी है। इसलिए कत्ल अजवक्त मैं आपको कोई ख़ास मदद नहीं पहुँचा सकूंगा मगर फिर भी याद रखिए कि मेरा दिल आपके साथ है।"

औरंगजेब कुछ देर आंखें बन्द किए कुछ सोचता रहा। उसे वे सब बातें एक एक करके याद आने लगीं जो दौलताबाद में इन दोनों दोस्तों ने सोची थीं। वह समझ गया था कि इस आदमी की दोस्ती हिन्दुस्तान के इतिहास में अमर रहेगी और मुझे जो कुछ मिलेगा इसी की मदद से।

दारा के हाथ से वजीर सादुल्ला का खून किया जाना औरंगजेब के हक़ में एक जबर्दस्त बात थी। वह जानता था कि वजीर सादुल्ला खां की जोड़ का बुद्धिमान आदमी उस समय एशिया भर में न था। बादशाह उसी पर इतने बड़े राज्य का भार सौंपकर

बेफिक्र था। वह उसका सिर्फ विश्वास ही नहीं करता था जो कि मुग़ल बादशाहों के स्वभाव के विरुद्ध था, प्रत्युत वह उसका अत्यन्त आदर करता था। मगर दारा जानता था कि वह शिया है और उसके हाथ में इतनी ताकत है कि वह जिसे चाहे तख्त पर बैठाए। वह अवश्य ही शुजा की मदद करेगा। दरबार में यह भी चर्चा दबे कण्ठ से होती रहती थी कि वह बादशाह के बाद खुद बादशाह बनेगा या अपने बेटे को बादशाह बनावेगा। कुछ कहते थे कि वह पठानों को सल्तनत सौंपा चाहता है और उसके प्रमाण में कहा जाता था कि उसकी स्त्री पठानी है और उसने पठानों की एक बड़ी फौज भरती कर रखी है। दारा को उससे कुछ आशा न थी, वह कभी भी दारा की परवा नहीं करता था। इसी से दारा उसे अपने रास्ते का रोड़ा समझता था। और उसे उसने दूर कर देना ही ठीक समझा। परन्तु इस काम से बादशाह को दारा से घृणा हो गई और वह उससे बहुत शाकी हो गया। यह सब बातें औरंगजेब के लिए अत्यन्त लाभदायक थीं।

पर, औरंगजेब की अपनी आमदनी बहुत कम थी और खजाना भी खाली था। फौज उसके पास बहुत मामूली थी। नई फौज भरती करने में बड़ी बड़ी दिक्कतें थीं इसलिए उसने अपने बुद्धि-बल पर ही भरोसा करके कार्यक्षेत्र में पैर डाला। उसने भली भांति समझ लिया कि दो ही ऐसे आदमी हैं जिनकी मदद से बेड़ा पार हो सकता है। एक मुराद बख्स दूसरा मीरजुमला। मीरजुमला की दोस्ती पर उसे पूरा भरोसा था। लोगों के संदेह से बचने के लिए उसने वह सब धन—जो कल्याणी और बीदर के किले में उसे मिला था, सब वहीं मीरजुमला के पास छोड़ दिया था। अब वह बेवकूफ मुराद पर अपना चक्र चलाने की चिन्ता में था और उसे अपने बुद्धि-बल पर पूरा भरोसा था कि वह मुराद को अपने चंगुल में फंसा लेगा।

२६

पहली चाल

काली रात के पर्दे ने दुनिया में अंधेरा कर दिया था। सारी दुनिया सो रही थी। पर यह युवक शाहज़ादा बेचैनी से अपने सूने महल में अकेला टहल रहा था।

खूब सोच समझ कर उसने एक ख़त अपने छोटे भाई शाहजादा मुराद बख्स को लिखा, जो इस समय गुजरात का हाकिम था और अहमदाबाद में रहता था एवं उसके आगरे लौटने के मार्ग पर था। पत्र इस प्रकार था—

"प्यारे भाई, मैंने पुख्ता ख़बर सुनी है कि दारा ने हमारे वालिद बुजुर्ग वार शाहंशाह शाहेजहां को जहर देकर मार डाला है और खुद बादशाह बना चाहता है। इसीलिए शाहजादा शुजा ने तख्त के हुसूल और वालिद की मौत का बदला लेने के लिए एक बड़ा भारी लश्कर लेकर देहली की ओर कूच किया है।

आप को इस बात की याद दिलाने की कोई जरूरत नहीं कि उमूर सल्तनत की मेहनत उठाना मेरे असली मिजाज और तबियत के किस क़दर ख़िलाफ़ है। इस वक्त जब कि दारा और शुजा निहायत सरगर्मी से हुसूल सल्तनत के लिए कोशिश और सई कर रहे हैं, मैं सिर्फ फ़कीराना जिन्दगी बसर करने में मुतरफ़ित हूं। मगर, प्यारे अर्ज़ाज़, अगर्चे सल्तनत के हक़ हकूक और दावों से मैं बिलकुल दस्तबरदार हूँ। ताहम इस राय और ख़याल से आपको मुत्तिला करना वाजिब समझता हूँ कि न सिर्फ यही कि दारा शिकोह फर्माबांई औसाफ़ से खाली है, बल्के लामजहब और काफ़िर होने की वजह से बिल्कुल ताज व तख्त के काबिल नहीं। बड़े बड़े उम-

राए सल्तनत और अरकाने दौलत उससे मुतनफ्फिर हैं। अलहाज़ा क़यास शुजा भी सल्तनत के क़ाबिल नहीं। क्योंकि वह राफ़जी मजहब का पाबन्द और हिन्दुस्तान का दुश्मन है। बस इस सूरत में इस अजी मुश्शान सल्तनत की फर्माखाँई के लायक सिर्फ आप हैं। यह महज मेरी ही राय नहीं—बल्के पाऐ तख्त के तमाम मशीर और अमीर जो आपकी बहादुरी के क़ायल हैं सब इसमें इत्तफ़ाके राय रखते हैं और हमजबान होकर दारुल खिलाफत में आपकी रौनकबख्शी के मुन्तजिर हैं। मेरी बाबत तो यह तसौव्वर कर लीजिए कि अगर आपकी तरफ से मुस्तहकम तौर पर मुझे यह वादा मिल जायगा कि जब खुदा के फ़जल से आप बादशाह हो जाएंगे तो मुझे खिलवत के मौके का गोशए-अफियत-बइत्मीनान खातिर इबादत-इलाही बजा लाने के लिए इनायत फर्माएंगे, तो बस मैं इतने ही से फौरन आपकी तरफ़दारी में खिदमत बजा लाने को आमादा और तैयार हो जाऊंगा। और सलाह व मशवरे से अपने दोस्त व रफीकों से मय अपनी तमाम फौज आपके हुक्म में कर देने से, गरज किसी क़िस्म की मदद से मैं दरेग़ न करूंगा। बिलफैल मैं आपकी खिदमत में एक लाख रुपया भेजता हूँ, और उम्मीद करता हूँ कि आप इसे बतौर नज़र कुबूल करेंगे जो कि मेरी खुशी का बाइस होगा। हुनर आजमाई और जवांमर्दी का यही वक्त है। बस आप एक लहमा भी जाया न कीजिए। मौके को ग़नीमत समझिए और जल्दी से सूरत के किले पर, जहां मुझे खूब मालूम है कि बेशुमार दौलत मदफून है कब्जा कर लीजिए।"

रात के घोर सन्नाटे में औरंगजेब ने यह ख़त अपने हाथ से लिखकर कई बार पढ़ा फिर उसने अपने दूधभाई मीरबाबा को बुला कर ख़त उसके सुपुर्द करके कहा—'तुम अभी इसी दम गुजरात को रवाना हो जाओ और जबानी हर तरह उसकी तसल्ली

करदो और उसे आमादा करो कि वह फौरन सूरत के ख़जाने को लूट ले। तुम्हारे हमराह जाने के लिए पाँच सौ सवार तैयार हैं। जाओ भाई, अभी कूच कर दो—तुम्हारी इस कूच की कामयाबी पर ही हमारी उम्मीदें हैं।' इतना कह कर औरंगजेब ने मीरबाबा के हाथ चूम लिए और अपना कीमती जड़ाऊ खंजर उसकी कमर में खोंस दिया। और गले से मोतियों की एक कीमती माला उतार कर उसके गले में डाल दी।

मीरबाबा ने तुरन्त ही कूच बोल दिया। उसके जाने के बाद औरंगजेब हाथ मलता हुआ कुछ देर टिमटिमाते तारों को देखता रहा—फिर उसने फौरन ही अपने बड़े बेटे सुलतान मुहम्मद को तलब किया। उसे एक अत्यन्त गोपनीय खरीता देकर कहा—'तुम्हें अभी कल्याणी की ओर कूच करना होगा जहां हमारा दोस्त और मददगार अमीर मीरजुमला काबिज है। उनसे तुम निहायत आजिजी से कहना कि निहायत जरूरी काम आ पड़ने से एक जरूरी मसले पर आप से मश्विरा लेना है। इसलिए यहां आकर मुझसे मिल जायँ। यह खरीता उन्हें बिलकुल पोशीदा ढंग से देना और जैसे मुमकिन हो उन्हें साथ ले ही आना। पांच सौ सवार तुम्हारे हमराह जाने को तैयार हैं। मेरे प्यारे वफादार बेटे अभी इसी दम कूच बोल दो। इत्मीनान रखो कि तुम्हारी जवांमर्दी और वफादारी फिजूल न जायगी।' उसने पुत्र को छाती से लगाया।

शाहजादा ने बन्दगी की और चल दिया। औरंगजेब ने फिर सुदूर तारे पर दृष्टि जमा दी। इस बार उसने अपने विश्वासी मुसाहिब अमीर खां को तलब किया। और कहा—"तुम्हें मालूम है कि हमें तुम्हारा किस क़दर भरोसा है। अब वह वक्त आ गया है कि हमें अपने काम करने चाहिए। मैं तुम्हें एक नाजुक काम सौंपना चाहता हूं।"

"मैं बसरोचश्म हाजिर हूं। हुक्म कीजिए।"

"यह खत लो और सतारा चले जाओ। वहां बहादुर मराठा शिवाजी है, उसे खत दो और समझाओ कि वह अगर हमारी मदद करेगा तो हम बीजापुर से लड़कर उसे नई सल्तनत कायम करने में मदद दे सकते हैं। उसे यह भी समझा देना कि बिना ऐसा किए उसका दक्षिण में अपनी सल्तनत कायम करना बिलकुल मुमकिन नहीं। इसके सिवा—वह अगर हमारी मदद करेगा तो मैं वादा करता हूँ कि दखन के एक हिस्से की चौथ हम हमेशा उसे देंगे।"

इसके बाद औरंगजेब ने और भी जरूरी बातें उसे समझाईं। फिर कहा—'मगर तुम्हें यह खतरनाक सफ़र अकेले खुफिया तौर पर करना होगा। जिसका तुम उस्तादी से बन्दोबस्त कर लोगे।' यह कह कर उसने अपना जड़ाऊ कमरबन्द उसकी कमर में बांध दिया।

अमीर खां ने हँस कर कहा—"आप इतमीनान रखिए। ठीक वक्त पर जवाब हुजूर की खिदमत में पहुँच जायगा।" वह सलाम करके चला गया। औरंगजेब उस समय तक उसे देखता रहा, जब तक उसकी पीठ अंधेरे में गायब न हो गई। इसके बाद उसने दस्तक दी।

एक अधेड़ खोजा दस्तबस्ता आ खड़ा हुआ। औरंगजेब ने भेदभरी नजर से उसे देखकर कहा—'मुबारक, तुम्हें पोशीदा तौर पर अभी इस आदमी के पीछे जाना होगा और इसकी तमाम हरकतों का भेद इसके आने से पेश्तर ही लाना होगा। उसने एक छोटी सी थैली, जो अशर्फियों से भरी थी, उसकी हथेली पर रख दी। मुबारक बिना एक शब्द बोले झुक कर चला गया। औरंगजेब के होठों पर मुस्कान की एक क्षीण रेखा आई और वह धीरे धीरे कुछ सोचता हुआ महल में चला गया।

३०

शिकार

शाहजादा मुराद बख्स एक बलिष्ठ और सुन्दर युवक आदमी था। शिकार, युद्ध, शराब और रमणी इन चार चीजों में उसकी जान थी। भाला और बरछा फेंकने में वह मुगल साम्राज्य-भर में एक था। शराब और रमणी से जब उसका मन ऊबता तो वह शिकार को चला जाता। वहां से ऊब कर वह महलसरा में घुस कर सुरा सुन्दरी की आराधना में डूब जाता। यही उसका जीवन, यही उसका अस्तित्व, यही उसका पुरुषार्थ था। यद्यपि उसने भी दिल्ली और आगरे की सब हलचलों को सुन रखा था और राज्य-लिप्सा अन्य भाइयों की अपेक्षा उसमें कम न थी पर वह उतना बुद्धिमान न था जितना एक राजकुमार को होना चाहिए। इसलिए जब दारा, शुजा और औरंगजेब लोहू और लोहे के सुपने देख रहे थे और बड़े बड़े राजनीति के तानेबाने बुन रहे थे, मुराद बख्स शिकार-शराब और सौन्दर्य में डूब-उतरा रहा था।

सुबह ही से शिकार की तैयारियां हो गईं। सजे हुए हाथियों पर तमाम मुसाहिब और खास खास अमीर बैठे थे, शाहज़ादा मुरादबख्स एक ऊंचे हाथी पर सवार था। हाथियों पर खुले हौदे कसे थे। सबके हाथों में बन्दूकें थीं।

जंगल में शिकार का इन्तजाम पहले ही करा दिया गया था और जंगल के चारों ओर मजबूत जाल लगा दिया गया था, जिसमें बाहर आने जाने का सिर्फ एक ही रास्ता था। जाल के

बाहर थोड़े थोड़े फासले पर सिपाही भाले और बर्छे लिए मुस्तैद खड़े थे, मगर ये शेर का शिकार नहीं कर सकते थे न शेर ही इन्हें कुछ हानि पहुँचा सकता था।

सवारी जंगल को चली। आगे आगे बड़े बड़े भीम काय अरने भैंसे थे, उनके भयानक विशाल सींग देख कर भय होता था। उन पर मोटे चमड़े पड़े हुए थे जो सिंह के आक्रमण से उनकी रक्षा करते थे, ये भैंसे लगभग एक सौ थे, इन पर एक एक आदमी तेज़ा लिए सवार था।

जंगल में पहुँचते ही शाहज़ादे को खबर मिली कि आज साबरमती के कछार में एक जोड़ा बहुत बड़े शेर और शेरनी का है। शाहजादे ने खुशी से चिल्ला कर घेरा करने की आज्ञा दी। शेर घेर कर जंगले मे ले आए गए। चारों तरफ हल्ला हो रहा था। दोनों जानवर घबरा कर बौखला रहे थे। कहीं निकल भागने की उनके लिए जगह न थी। सिंहनी एक ग़ार में चुपके से छिप गई। मगर शेर ने भैंसों को देखते ही एक छलांग मारी। भैंसों पर के आदमी फुर्ती से कूद पड़े। और छलांग मारते ही भैंसों ने शेर को सींगों में उठा लिया। यह सब काम ऐसी फुर्ती और कौशल से हुआ कि शेर की कोमल पेट की खाल में उनके तीखे सींग पूरे घुस गए। वह दर्द से डकराने और चीखने लगा। शाहजादे ने आनन्द से हाथ मलते हुए अपने एक मुसाहिब को गोली दाग़ने का हुक्म दिया। गोली दाग़ी गई और शेर मर कर ढेर हो गया। तमाम सिपाही उस पर टूट पड़े। किन्तु हांकेवालों ने चिल्ला कर कहा—"खबरदार! सवारियों से न उतरिए, कछार में शेरनी है।"

शीघ्र ही शेरनी की क्रुद्ध हुंकार से वन गूंज उठा। वह बारंबार दहाड़ रही थी—उसकी दहाड़ सुन कर शाहजादे ने सब भैंसों को

घेरे से बाहर कर देने का हुक्म दिया। इसके बाद उसने आगे अपने हाथी बढ़ाए।

शेरनी पर सब से पहली नजर शाहजादे की पड़ी और उसने दन से गोली दाग दी। गोली शेरनी को घायल करती हुई निकल गई। इस पर झल्ला कर शेरनी शाहजादे के हाथी पर झपट पड़ी और जोर से हाथी के माथे पर पंजे गड़ा कर लटक गई। महावत डर कर जमीन में गिर गया। शाहजादे ने फायर किया पर खाली गया। आखिर उसने अपने प्राण संकट में देख कर दोनों हाथों से बन्दूक पकड़ कर शेरनी को पीटना शुरू किया। फिर भी उसने अपनी गिरफ़ को न छोड़ा। जब हाथी ने यह देखा कि उसका कोई दाव-पेंच ही नहीं चलता तो वह भागकर एक भारी वृक्ष से आ टकराया। और उसने इस कौशल से वृक्ष में टक्कर मारी कि शेरनी कुचली जाकर भयानक रीति से चीख उठी और छूट कर दूर जा गिरी। इतने ही में एक सरदार ने गोली दाग़ कर उसका काम तमाम कर दिया।

शाहज़ादे ने उस हाथी का रातिब बढ़ा दिया। उस दिन फिर और शिकार नहीं हुआ। शाहजादा अपने खीमों में लौट आया। दोनों जानवर उसके सामने लाए गए। फिर मूंछों के अफसर ने उसकी मूंछ काट ली।

शाहजादा एक हफ्ते शिकारगाह में रहा। उसने सैकड़ों हिरन, नीलगाय, अरने भैंसे, चिड़ियां, बत्तख आदि जानवर मारे। हजारों आदमी उसके साथ इधर से उधर दौड़ धूप करते फिरे। अन्त में एक सप्ताह तक शिकार का आनन्द लूट कर वह अहमदाबाद लौट आया।

३१
मीरबाबा से मुलाक़ात

शिकार से लौटने पर उसे औरंगजेब के दूत मीरबाबा के आने की सूचना दी गई। मीरबाबा से मिलकर मुराद बहुत खुश हुआ। उसकी बहुत खातिर तवाज़ा की। और औरंगजेब के हाल चाल पूछे। मीरबाबा ने उसे औरंगजेब का खत देकर कहा—'मैं चार दिन से आपका इन्तज़ार कर रहा हूं। मुझे बड़ा अफसोस है कि आप जैसे शाहज़ादों का जब एक एक लहमा कीमती है आप अपना वक्त इस तरह शिकार में जाया करते हैं।' इसके बाद उसने औरंगजेब की तरफ से बड़ी बड़ी लल्लो चप्पो की बहुत बातें कहीं। यह सब सुनकर, वह खत पढ़ और लाख रुपए देख कर वह फूलकर कुप्पा हो गया, और यह समझने लगा कि मानो हम बादशाह हो ही गए।

मुराद की आमदनी बहुत ही कम थी। सेना भी उसके पास नहीं थी, वह भी इस मौके पर अपनी भाग्य परीक्षा करे यह सोच कर रह जाता था। इसका कारण कुछ तो उसका आलस्य-व्यसन और कुछ कमअक्ली थी। अब इस प्रकार अतर्कित सहायता मिलती देख वह बहुत आशान्वित हो गया। उसने नगर अहमदाबाद के तमाम अमीरों, शहर के बड़े बड़े व्यापारियों, मुसाहिबों और जिम्मेदार आदमियों को बुलाकर एक छोटा सा दरबार कर डाला। उसमें उसने खुले आम वह खत सबको सुनवाया और जोर देकर लोगों से धन और सेना की सहायता मांगी। उसने साहूकारों को तुरन्त रुपये की कमी पूरी करने का हुक्म दिया और विश्वास दिलाया कि सूरत का खजाना हाथ आते ही वह अच्छे सूद के

साथ उन्हें उनकी रक़म लौटा देगा। विवश साहूकारों को भी उसकी बात माननी पड़ी। देखते देखते हलचल मच गई। और धड़ाधड़ सेना भरती होने लगी। धुने, जुलाहे, मोची, कुम्हार सब सिपाहियों में भरती होने लगे। उन्हें अच्छी तनख्वाह, लूट का लोभ और सिपाहियाना ठाठ, बस और क्या चाहिए।

मुराद बख्स का एक गुलाम ख्वाजासरा शाह अब्बास नामक था। वह बड़ा वीर और मुराद का शुभचिन्तक था। उसे मुराद ने तीन हजार फौज देकर सूरत पर आक्रमण करने को चुपचाप रवाना कर दिया।

मीरबाबा ने यह सब बन्दोबस्त अपने सामने करा दिया। इसके बाद वह मुराद की मूर्खता पर मन ही मन हँसता हुआ मुराद को अच्छा खासा सब्जबाग दिखा मुराद का खत औरंगजेब के नाम लेकर वापस लौटा। मुराद ने जवाब में औरंगजेब को लिखा था—

'इसलाम की पुश्तो पनाह, आक़िल व दाना और वफादार भाई औरंगजेब, आपका खत पढ़कर और मेरी तरफ जो आपका रहम व करम है जानकर मुझे अज़हद खुशी हुई है। खासकर यह देखकर कि आप कुरान शरीफ़ पर न्यौछावर होने और अपने पाक मज़हब को इस तबाही से बचाने के लिए इस कदर मुतफिक हैं। जिसका हमारे दोनों भाइयों में से किसी के भी बादशाह होने पर तबाह होने में शकोशुबहा नहीं है। मैं आपका शुक्रिया अदा करता हूँ और कुरान की क़सम खाता हूँ कि मैं बादशाह होने पर आपके बाल-बच्चों को वह दर्जा दूँगा जो शाहज़ादों को दिया जाता है। और सबसे बढ़कर यह कि मैं आपको अपने बाप से बढ़कर समझूंगा। आपके ऊपर मुझे किस क़दर यकीन है यह आप इसी से समझ लीजिए कि आपके भेजे हुए रुपयों से मैंने आनन-फानन लश्कर इकट्ठा करके उसे सूरत के क़िले को फ़तह करने भेज दिया

है, इसके अलावा मैं तैयारी कर रहा हूँ कि जल्द हमारा लश्कर कूच करे। खुदा हमारी मुराद पूरी करेगा। नई खबरें देते रहिए। मुझे आपके वादे पर पूरा यक़ीन व इत्मीनान है।"

३२

मीरजुमला की शह

मुहम्मद सुलतान मीरजुमला के पास से निराश और क्रुद्ध होकर लौटा। उसने उसके साथ रूखाई का बर्ताव किया था। और उसने सब लोगों के सामने ऊंची आवाज में मुहम्मद सुलतान की माज़रत करते हुए कहा—"मैं शाहंशाह का सेवक हूं, न कि औरंगजेब का। न मैं उसकी बात मान सकता हूँ न मदद कर सकता हूं। क्योंकि बादशाह सलामत जिन्दा हैं और उनके मरने की खबर झूठ है। असली खबर मुझे मिल गई है।" राजनीति से अज्ञान मुहम्मद सुलतान का युवक खून यह सुन कर खौल उठा। और वह होठ काटता हुआ लौट चला। मीरजुमला ने मुहम्मद को औरंगजेब के लिये एक खत भी दिया। पत्र में उसने लिखा था—'कल्याणी का किला छोड़ और फौज से अलहदा होकर मेरा दौलताबाद आना नहीं हो सकता। अलावा अज़ीं आप यकीन फर्माएं, कि मैंने आगरे से अभी इस मजमून की ताजी खबर पाई है कि शाहजहां हनोज़ जिन्दा है। इसके सिवा यह बात भी है कि जब तक मेरे अहलोअयाल दारा शिकोह के काबू में हैं, तब तक मैं आप के साथ शरीक नहीं हो सकता—बल्के मेरी असल मंशा तो यह है कि मैं इस हंगामे में किसी का भी तरफदार न रहूं।"

चतुर चाणाक्ष औरंगजेब ने जब यह खत पढ़ा तो वह मुस्कुरा दिया। कुछ सोच विचार कर उसने अपने छोटे बेटे सुलतान मुअज्जम को जो अभी केवल १४ साल ही का था फिर मीरजुमला

के पास भेजा। उसके साथ उसने तीन हजार सेना दी और उसे हुक्म दिया कि तुम फौरन क़िले पर गोलावारी शुरू कर देना। पीछे से हम भी आते हैं।

सुलतान मुअज्जम जब कल्याणी के निकट पहुँचा तो उस समय किले में मीरजुमला और उसके कुछ थोड़े से सरदार थे। दूसरे शाही अमीर सलावत खां, महावत खां और नजावत खां किले से एक मील के अन्तर पर अपनी अपनी छावनी डाले पड़े थे।

औरंगजेब की हिदायत के अनुसार मुअज्जम ने मीरजुमला को कहला भेजा कि या तो किला हमारे सुपुर्द करके हमारी खिदमत में हाजिर हो वरना लड़ो। मीरजुमला ने हंसकर कहा—"मैं बादशाह का सेवक हूँ, औरंगजेब को किला नहीं दे सकता—क्योंकि वह बादशाह से बगावत खड़ी कर रहा है" इतना कह, उस कूटनीतिज्ञ ने प्रकट में तो सेना को लड़ने की आज्ञा दे दी, परन्तु गुप्त रूप से अपने सेनापतियों को आदेश दिया कि हवा में गोले और बन्दूकें दागते रहो, ऊपर से चाहे जितनी धूमधाम दिखाओ, पर—औरंगजेब की फौज को नुकसान न पहुंचाओ।"

रातभर गोले-गोलियां चलती रहीं। किले से गोले सनसनाते हुए हवा में आकर बीहड़ जंगल में गिरते रहे। दिन निकलते निकलते किले का फाटक खोल दिया गया और मीरजुमला ने सुलतान मुअज्जम को आत्म समर्पण कर दिया। वह अपने थोड़े से अफसरों और कुछ सैनिकों के साथ शाहजादे के पास चला गया। किले पर शाहजादे का अधिकार हो गया। उसका प्रबंध-भार एक सेनानायक को दे शाहजादा मीरजुमला को औरंगजेब के पास ले चला। सूरज निकलने तक यह अद्भुत विजेता शाहजादा कल्याणी से बहुत दूर निकल गया था। मार्ग में उसने अपनी चपलता और विनय से मीरजुमला को खूब प्रसन्न कर लिया। जिसकी औरंगजेब ने शाहजादा को पूरी पट्टी पढ़ा दी थी।

मार्ग में ही दोनों मित्र मिल गए। औरंगजेब अपनी समस्त सैन्य लिए धीरे धीरे आगे बढ़ रहा था। ज्योंही उसने मीरजुमला को सफेद घोड़े पर शाहजादा मुअज्जम के साथ आते देखा—वह घोड़ा दौड़ा कर बाबा जी, बाबा जी, कहता हुआ दोनों हाथ फैला कर उसकी ओर चला। उसके पास पहुँच कर वह घोड़े से उतर पड़ा। दोनो मित्र बारंबार गले मिले। फिर एकान्त में बैठकर दोनों में बातें हुईं। औरंगजेब ने कहा—"मुझे बखूबी मालूम है कि आपने जो सुलतान मुहम्मद से इन्कार किया था वह बिल्कुल दुरुस्त था। और बेशक मेरे सब दूरन्देश अहले दरबार की भी यही राय है कि जब तक आप के बालबच्चे दारा शिकोह के काबू में हैं, तब तक जाहिरा आप को कोई ऐसी हरकत न करनी चाहिए थी कि जो हमारे हक़ में मुफीद आती है। लेकिन आप जैसे आक़िल शख्स को यह बात समझाने की कोई जरूरत नहीं कि दुनिया में हर मुश्किल काम की आखिर एक तदबीर होती है। चुनांचे एक मनसूबा मेरे ख्याल से गुज़रा है, जिससे बजाहिर आप हैरान होंगे। मगर जब उसके नशेबोंफ़राज पर बखूबी गौर करेंगे तो बेशुबहा— आपकी अहलोअयाल की सलामती के लिये एक यकीनी जरिया हो जायगा। वह मन्सूबा यह है कि आप बजाहिर कैद होना मंजूर कर लें। इससे तमाम जहान को मेरी आपकी दुश्मनी का यकीन हो जायगा और इस हिकमत से हम लोग अपनी तमाम ख्वाहिशों में कामयाब हो सकेंगे। क्योंकि किसी शख्स को हरगिज ऐसा गुमान नहीं होगा कि आप जैसे रुतबे का कोई आदमी इस तरह अपनी खुशी से कैद हो गया।" इतना कह कर औरंगजेब तीखी नजरों से उसे देखने लगा। मीरजुमला ने कनखियों से इधर-उधर देखा। पीठ के पीछे सुलतान मुहम्मद और सुलतान मुअज्जम नंगी तलवार लिए खड़े थे। यह देख कर मीर-जुमला ने जोर से हंस दिया। उसके हंसने का ठीक मतलब समझ कर

औरंगजेब भी हंस पड़ा। मीरजुमला ने कहा—"साहबे आलम, यह सब तो मैं पहले ही से सोच कर निकला हूं, खैर तो मेरी फौज का क्या होगा?"

औरंगजेब की आंखें चमकने लगीं। उसने धीरे से कहा—"उसे मैं जिस वजा से और जिस हैसियत से आप पसन्द करेंगे और मुनासिब समझेंगे—नौकर रख लूंगा।"

"बहुत खूब, मैंने अपने अफसरों को ताकीद कर दी है कि वे आपकी फौज में आप के कहते ही मिल जायं।"

"शुक्रिया, और मुझे यह भी यकीन है कि आप जैसा कि मुझसे हमेशा वादा करते रहे हैं इस वक्त कुछ रुपये देने से इन्कार न करेंगे, क्योंकि इस वक्त मुझे रुपयों की अशद जरूरत है, आपके इस रुपये और लश्कर से मैं अपनी किस्मत-आजमाई करूंगा।"

मीरजुमला ने गम्भीरता पूर्वक कहा—"आप इत्मीनान रखिए, आप के लिए एक अच्छा खजाना मैं हमराह लाया हूं।"

इस पर खुशी से दोनों हाथ मल कर औरंगजेब ने कहा—"तो बस, अब आप इजाजत दीजिए कि मैं आप को इसी वक्त दौलताबाद के किले में पहुँचा दूं। वहां मेरा एक शाहजादा आप की खिदमत में रहेगा। इसके बाद हम दोनों इस मुहिम की दुरुस्ती की तदबीरों की निस्बत वाहम गौर और फिक्र कर सकेंगे। इस सूरत में हरगिज मेरे ख्याल और कयास में नहीं आता कि दारा शिकोह के दिल में कोई शुबहा पैदा होगा और वह ऐसे शख्स के बाल बच्चों के साथ बदसलूकी करेगा जो बजाहिर इस कदर दुश्मन हो।"

औरंगजेब ने अत्यन्त नम्रता और विनय से ये बातें कहीं। और मीरजुमला ने उन्हें स्वीकार कर लिया। अब औरंगजेब ने एक क्षण की भी देर न लगाई। शाहजादा मुअज्जम के साथ

मीरजुमला को दौलताबाद भेज, उसने तेजी से कल्याणी की ओर बाग मोड़ी। और उसके दो पहर से प्रथम ही अपने प्रथम विजित दुर्ग पर अपना विद्रोही झंडा खड़ा कर दिया।

३३

औरंगजेब की दूसरी चाल

मीरजुमला जैसे पुराने अनुभवी सरदार के इस प्रकार अचानक हार कर क़िला खाली कर देने और कैद हो जाने की खबर सुनकर शाही फौज में हलचल मच गई। सेनापति सरदार सब सन्नाटे में रह गए। परन्तु जब क़िले पर औरंगजेब का विद्रोही झण्डा फहराते और तोपों को शाहीसेना की ओर मुंह किए आग उगलने को तैयार देखा तो अमीर लोग किंकर्तव्यविमूढ़ हो गए।

वे सब मिलकर सलाह-मश्वरा करने लगे। इसी बीच बीजापुर से आई हुई मीरजुमला की फौज ने—दल बांध कर किले को घेर लिया। और उसपर जोर का आक्रमण कर दिया। शाही उमराव और सेनापति यह तमाशा देख कुछ भी अपना कर्तव्य निर्णय न कर सके।

अब औरंगजेब स्वयं किले की सफील पर आकर खड़ा हो गया। उसने पुकार कर कहा—

"तुम्हारा सरदार कौन है?"

पांच छ सरदारों ने आगे बढ़कर संकेत किया।

औरंगजेब ने उनसे बात करने और उन्हीं की इच्छानुसार काम करने का उन्हें आश्वासन दिया।

फ़िर दोनों सेनाओं के बीच में उसने सरदारों से बातचीत की।

"अब आपलोग क्या चाहते हैं?"

"हमारे सरदार को छोड़ दीजिए।"

"मगर वे तो अपनी ही मंशा से कैद हुए हैं। यह तो दर

असल एक चाल है जो मेरी और उनकी सलाह से हुई है।" इसके बाद उसने सब सरदारों को भारी भारी इनाम और कीमती नजराने दिए। और बड़े बड़े वादे किए। इसके बाद उसने कहा—'आप अब से मेरे सरदार हुए। आपकी सब फौज भी मेरी हुई। इस फौज के सिपाहियों को अब से दुगुनी तनख्वाह मिलेगी। और तीन महीने की पेशगी तनख्वाह उन्हें आज ही दे दी जायगी।'

मीरजुमला की सेना और सरदार सब औरंगजेब की जय जयकार करने लगे। अब इनसे निबट कर उसने शाही अमीरों को एक एक पैगाम भेजा। उसमें कहा गया कि चूंकि बादशाह सलामत मर गए हैं आपलोगों को लाजिम है कि हमारी तरफदारी करें। वरना आपको दारा की ख़िदमत बजानी पड़ेगी। जो काफ़िर और इस्लाम का दुश्मन है, आप जैसे बहादुरों और दीनदार अमीरों को एक काफ़िर के आगे सिर झुकाना सचमुच शर्म की बात है। इसके साथ ही औरंगजेब ने बहुत सी बहुमूल्य भेंटें उनके लिए भेजीं।

महावत खां ने औरंगजेब की कोई बात नहीं सुनी। उसने तुरन्त आगरे की ओर कूच बोल दिया। शेष सरदारों ने सलाह करके जवाब दिया—"जब तक हमें यह तस्दीक नहीं हो जाता कि बादशाह सलामत मर गए हैं हम आप से नहीं मिल सकते। इस के लिए हम पचास दिन की मोहलत चाहते हैं। इस अरसे में हम अपने क़ासिद भेजकर दिल्ली और आगरा से सच्ची ख़बरें मंगा लेंगे। और अगर खबर सच्ची हुई तो हम आपकी ख़िदमत बजा लायेंगे?"

यह सुलह पैगाम कुरान उठा कर जब हो गए तब औरंगजेब ने एक विश्वासी आदमी को बुरहानपुर के किलेदार मिरज़ा अस्दुल्ला के पास यह सन्देश लेकर भेज दिया कि जो आदमी आगरे से दक्षिण को आ रहा हो उसे बिना तलाशी लिए आगे न बढ़ने दे।

और यदि उसके पास कोई ऐसा ख़त हो जिसमें बादशाह के जिन्दा रहने का हाल हो तो उसका सिर काट ले और ख़त को जला दे।

इधर यह सब काम हो ही रहे थे कि उसे सूचना मिली कि सूरत का किला जीत लिया गया। अब वह प्रसन्न होता हुआ—और गुप्तरूप से मीरजुमला से मिलकर आगे के मनसूबे गांठने के लिए चुने हुए सवारों के साथ अंधेरी रात में कल्याणी के दुर्ग से निकल कर दौलताबाद को चल दिया।

३४

सूरत

सूरत उन दिनों मुगल साम्राज्य का सब से सम्पन्न और बड़ा बंदरगाह था। योरोप और अरब, मक्का, बसरा, साहलकारो-मण्डल, मालावार, मछली पट्टम, बंगाल, श्याम, चीन, कैफा, माल-देव, मलाका, बटेबिया, मनैला आदि तथा समुद्र के उस पार के देशों से भारत का सम्पर्क सूरत ही के द्वारा था। यह सुन्दर नगर ताप्ती नदी के किनारे समुद्र से नौ फर्लांग के अन्तर पर था। यद्यपि इसके इर्दगिर्द फसीलें न थीं पर यह अत्यन्त आबाद नगर था। ताप्ती का घाट समुद्र से कम न था और सम्पूर्ण नद छोटे बड़े जहाजों से परिपूर्ण था। बड़े बड़े जहाजों का माल गहरे समुद्र में उतार कर नावों द्वारा भेजा जाता था। ऐसी नावों का यहां तट पर खूब हजूम रहता था। सैकड़ों नावें माल से लदी फदी इधर से उधर आ जा रही था। देश विदेश के व्यापारियों से ताप्ती का किनारा भरा रहता था। वे माल नकद लेकर या बदले में माल देते लेते रहते थे। सूरत में जहाज बनाने के भी अनेक कारखाने थे। इन कारखानों में बहुत बड़े बड़े जहाज बनाए जाते थे, क्योंकि यहां जहाजों के योग्य लकड़ी बहुतायत से मिलती

थी। सूरत के बने हुए जहाज विलायती जहाजों की अपेक्षा मूल्य में सस्ते और आकार में बड़े होते थे। ये कारखाने अंग्रेजों के और बुलन्देजों के थे। एक कारखाना हाल ही में फ्रान्सीसियों ने भी बनाया था। इस प्रकार यह नगर भारतीयों, फ्रान्सीसियों, अंग्रेजों, डचों और अरबों का सम्पन्न निवासस्थान और व्यापार-केन्द्र बना हुआ था।

नगर निवासी सभ्य और खुशहाल थे। संध्या काल में हिन्दू, पारसी स्त्री-पुरुष उच्च व श्वेत परिधान धारण किए—ताप्ती के सुखद समीर का सेवन करते थे। स्त्रियां परदा नहीं करती थीं। पारसियों की यहां काफी आबादी थी।

अभी दोपहर नहीं हुआ था। एक जहाज हरमज टापू से अभी बहुत से यात्रियों और माल असबाब लेकर आया था। हरमज द्वीप फ़ारस का भारी बन्दरगाह था—यहां सैकड़ों करोड़-पतियों के बसने थे। जो भिन्न भिन्न प्रकार के व्यापार करते थे। इस टापू में नमक की अनेक चट्टानें थी। जहाज पर अनेक अरबी, फारस निवासी व्यापारी जवाहरात, मोती, सुगन्ध, गोंद, खजूर, घोड़े, हजरत यहूंद, आदि वस्तु लाए थे।

इनके बदले में वे गुड़,खांड़, जैतून का तेल, नारियल आदि लेना चाहते थे। जिनके व्यापारी जहाज पर पहुँच कर सौदे कर रहे थे।

जहाज़ से दो योरोपियन यात्री उतरे। एक प्रौढ़ आयु का पुरुष था जिसकी नीली तेज आंखें और भूरी छोटी सी दाढ़ी उसकी दृढ़ता और बुद्धिमत्ता को प्रकट कर रही थीं। उसके साथ एक और युवक था, जो खूब बलिष्ठ और फुर्तीला नवयुवक था।

दोनों पुरुष इधर-उधर देखते हुए बन्दरगाह से बाहर आए। दोनों योरोपियन नवागन्तुक थे। उन्होंने देखा—लोग लाल लाल थूक रहे हैं। यह देख उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। प्रौढ़ पुरुष ने एक

योरोपियन प्रवासी से जो वहीं रहता था पूछा—"यह क्या बात है मोशिए, ये देशी लोग खून क्यों थूक रहे हैं ?"

वह बूढ़ा फ्रान्सीसी बहुत दिन से सूरत में रहता था। और शाही तोपखाने का नायब दारोगा था। उसने आगन्तुकों की ओर ध्यान से देखा, और कहा—"खून नहीं थूक रहे हैं मोशिए, ये लोग पान खा रहे हैं।"

"पान, यह क्या कोई दवा है ? और इनके मुँह में कोई बीमारी है ?"

"नहीं, नहीं, पान एक पत्ता है जिसे ये लोग शौक से चबाते हैं और पोर्चुगीज जिसे 'बीटल' कहते हैं। इससे होठ सुर्ख हो जाते हैं, और मुँह से खुशबू आने लगती है, कुछ लोग पान के साथ तम्बाकू भी खाते हैं।"

"तम्बाकू खाते हैं ? क्या ये पाइप नहीं पीते ?"

"नहीं मोशिए, वे हुक्का पीते हैं। आप शायद हिन्दुस्तान में पहली ही बार आए हैं।"

"जी हां।"

"तभी, यह पान हिन्दुस्तान में सब लोग खाते हैं, आप देखेंगे कि हिन्दुस्तान के बादशाहों का पान खाने का बड़ा खर्चा है। और यह सूरत का बन्दरगाह जिसकी भारी आमदनी है, बादशाह ने बड़ी बेगम साहेब के पानदान के खर्च के लिए दे दिया है।"

"क्या पान खाने का खर्चा इतना ज्यादा होता है ?"

"मोशिए, वह एक तहजीब की चीज है और आप चूंकि हिन्दुस्तान में नए आए हैं, मैं आप को नेक नसीहत दूँगा कि जब कोई हिन्दुस्तानी दोस्त आप को पान पेश करे तो कभी इन्कार न करना। वरना इसे वह ऐसी बेइज्जती और बदतमीजी समझेगा कि फिर कभी आप से बात भी न करेगा।"

"यह तो बड़ी अजीब बात है।"

"बेशक, पान खाने की आदत हो जाती है, और हिन्दुस्तानी औरतों का तो काम ही सिर्फ पान खाना और गप्पें उड़ाना है। वे एक मिनिट भी बिना पान मुँह में दिये नहीं रह सकतीं।" इतना कह कर वह बूढ़ा रसिक फ्रान्सीसी हंसने लगा। कुछ ठहर कर उसने कहा—"आप पान खाना चाहें तो मैं पेश कर सकता हूं, मेरा एक दोस्त पास ही है जिसकी पान की बढ़िया दूकान है।"

तरुण यात्री ने उत्सुक होकर कहा—"जरूर, जरूर मोशिए, खिलाइए पान, यह हिन्दुस्तान की नई तहज़ीब सबसे पहिले हमें सीखनी चाहिए।" उसकी उत्सुकता देख कर उसका साथी ज़ोर से हंस पड़ा। और बूढ़ा फ्रान्सीसी लपक कर आगे बढ़ा। और उसने दो बीड़ा पान बढ़िया बनाने का हुक्म अपने दोस्त दूकानदार को दिया। और जब मसाला लगाया तो उसने यात्रियों को कत्था-चूना-सुपारी का भेद बताया। युवक ने दोनों बीड़े खा लिए। कदाचित दुष्ट दूकानदार ने उसमें थोड़ा जर्दा इन बेवकूफ योरोपियनों को उल्लू बनाने के लिये डाल दिया। उसे खाते ही युवक का सिर घूमने लगा। और वह मूछित होकर भूमि पर गिर पड़ा। उसके साथी ने तलवार खींच कर दूकानदार से कहा—"बदमाश! तूने मेरे साथी को ज़हर दे दिया है, शहर कोतवाल के पास अभी चल।"

हंगामा सुन कर बहुत लोग इकट्ठे हो गए। इस भीड़-भाड़ में एक मुगल सिपाही भी था। उसने मामले की हकीक़त जान कर कहा—'फिक्र न करो। यह अभी ठीक हुआ जाता है।" इतना कह कर उसने ज़रा सा नमक युवक के मुंह में डाल दिया। जिससे उसे होश आया। और उसने आंखें खोलीं।

इस पर बूढ़े फ्रान्सीसी ने सिर हिला कर कहा—"पहिले पहल पान खा कर ऐसा ही होता है, लेकिन बाद में सब ठीक हो जाता है।"

अभी यह बातें हो ही रही थीं कि चार सिपाही आए और वे

आगन्तुकों के सामान की राई रत्ती तलाशी लेने लगे। तलाशी लेने पर एक ने कहा—

"क्या तुम्हारे पास कोई बेशकीमती जवाहरात है ?"

"जी नहीं।"

"कोई उम्दा मोती है ?"

"जी नहीं, हम तो रोजगार की तलाश में हिन्दुस्तान आए हैं। जौहरी नहीं हैं।" इस पर वे लोग बड़ी देर तक बहस हुज्जत करते रहे—उसके सरदार ने कहा—"हमारे हाकिम साहेब का हुक्म है कि कोई कीमती जवाहरात भीतर हिन्दुस्तान में नहीं जाना चाहिए। बादशाह का सख्त हुक्म है कि ऐसे सब जवाहर ख़रीद कर शाही ख़जाने में रख दिए जांय।"

इन लोगों से अभी इन आगन्तुकों का पिण्ड छुटा ही था कि बहुत से लोग भागते दौड़ते इधर से उधर आने लगे। वे कह रहे थे—शहर में लूट हो रही है। शाहज़ादा मुराद की फौजों ने क़िले को घेर लिया है।

थोड़ी ही देर में बंदूकों की आवाज और आदमियों की चीख-चिल्लाहट चारों ओर से आने लगी। फ्रेंच बूढ़े ने कहा—"मोशिए, बेहतर हो आप लोग तुरन्त योरोपियनों की बस्ती में मेरे साथ भाग चलिए। वरना जान नहीं बचेगी। ये मुगल बिना सोचे समझे योरोपियनों के सिर काट लेते हैं।"

इसके बाद तीनों व्यक्ति तलवारें नंगी कर के तेजी से एक ओर को रवाना हो गए।

थोड़ी ही देर में लूट और आग का बाजार गर्म हो गया। जो योरोपियन लोग सूरत में रहते थे और शाही सेना में नौकर थे, वे शाही सेना के साथ भाग चले। उनमें से कुछ लुटेरों के साथ मिल कर शहर लूटने को चल दिए। इन दोनों नवागन्तुकों ने इस अवसर से लाभ उठाया और खूब बढ़ बढ़ कर हाथ

मारे। वह बूढ़ा फ्रान्सीसी बड़ा खुर्राट निकला। वह सूरत को उन सब गली कूंचों से जानकार था, जहां धनी लोग रहते थे। वह कुछ लुटेरों को वहीं ले गया। जहां खूब लूट पाट कर ये दोनों नवागन्तुक तुरन्त ही आगरे की राह चल पड़े। जहां इस समय बहुत लोग आ-जा रहे थे।

३५

ज़ीनतुल्-निसां

चैत का सवेरा था। दिन गर्म होते थे और रातें ठण्डी। औरंगाबाद के शाही हरम में हलचल होने लगी थी। लौंडियां, बांदियां नींद के झोंके लेतीं—गिरतीं पड़तीं उठ अपने अपने काम में लग रही थीं। शाहज़ादी जीनतुल् निसां आसमानी दुशाले से अपना स्वर्ण गात लपेटे सुबह की मीठी झपकियां ले रही थी। दो बांदियां चुपचाप मोरछल लिए छपरखट के पास खड़ी मक्खियां उड़ा रही थीं, वे डर रही थीं कि कहीं ऐसा न हो कि कोई मक्खी उसे जगा दे। मख़मल का गद्दा और रेशम के तकियों में शाहज़ादी अपनी गोरी गोरी बांहों को बगल में दबाए कवियों की सारी उपमाओं को बेकार कर रही थी।

इसी समय शाहजादी की पुरानी विश्वासी बूढ़ी बांदी नादिरा ने आकर धीरे से कहा—"अय—हऐ अभी तक शाहज़ादी सो रही हैं ?"

शाहज़ादी के उनींदे कानों में आवाज़ गई। धीरे धीरे आंखें खोलीं, अंगड़ाई ली, बाल सम्हालती उठी। बांदियों ने कपड़े सम्हाल दिए। शाहज़ादी की नजर सामने खड़ी नादिरा पर पड़ी। त्यौरियों में बल पड़ गए—"अलामा दहर, चुड़ैल, नींद बर्बाद कर दी, किसी के दर्द को भी देखती है, जरा मक्खियां तक नहीं उड़ाई जातीं, भला री ठहर,

आज तेरे बल निकालूंगी।"

नादिरा ने बलैया ली, कहा—"बहुत सो लीं हुजूर, मैं सदक़े, अब उठिए और दीनों दुनिया की खबर लीजिए।"

"तो तुझे क्या? सोते हैं तो अपना ही वक्त खोते हैं।"

परन्तु नदिरा को जवाब देने का समय नहीं मिला। महलों में इधर से उधर सगड्डे मारती बांदियां, अन्ना, मानी, हप्फा छूछू, बारी गई, बलिहारी गई, के तार बांधती एक एक करके कितनी इकट्ठी हो गईं, एक से बढ़ कर एक का सिंगार, कुछ लौंडियां चांदी की किश्तियों में विविध इत्र लेकर आईं और शाहजादी को इत्रसे शराबोर करने लगीं। इतने में नाचनेवालियों का हजूम आ गया। बांदियों ने मसनद सजा दी। और नाचनेवालियां अदा से नाचने लगीं। अब एक एक पर बोलियां, ठठोलियां मारने लगीं। सब ने बूढ़ी नादिरा को देखा तो उसे घेर कर बैठ गईं। एक ने कहा—"अच्छी बुआ, तुम यहां क्यों आईं!"

दूसरी ने नखरे से कहा—"देखो तो जरी, सींग कटाकर बछड़ों में आ मिली हैं।"

तीसरी ने कहा—'अय हय, उस पोपले मुँह में मिस्सी की बहार तो देखते ही बनती है।"

चौथी ने कहा—"दरगारे तुम्हारी सूरत, कब्र में जाने को बैठी हो पर बिना नाच देखे चैन नहीं पड़ा।"

पांचवी ने कहा—"बुआ, ये तुम्हारे बाले बुन्दे तो गजब ढा रहे हैं।"

छठीने कहा—"तो जली क्यों मरती हो, उनके मियां ने पहनाए हैं। अपना अपना शौक।"

शाहजादी ने यह चुहुल सुनी और हँस दी। उसने कहा—"अच्छा, हम गुस्ल करेंगे।" शाहजादी उठ खड़ी हुई। छम छम

करती सब जश्नियां, तुर्किनियां, कल्लाकनियां, उर्दू बेगनियां, जसोलनियां और ख्वाजासरा पीछे पीछे चलीं।

शाहज़ादी का यह जुलूस महल के हम्माम में पहुँचा। समूचा हम्माम अठपहलू संगमर्मर का बना हुआ था, दीवारों पर रौशनदान थे जिनसे रौशनी आती थी, धूप नहीं आती थी। यह हम्माम गर्मियों में ठण्डा और सर्दियों में गर्म रहता था। बीच में एक बड़ा हौज था, जिसमें सुगन्धित जल भरा था, उसमें गुलाब के ताज़ा फूल तैर रहे थे। बांदियों ने शाहज़ादी की पोशाक उतारी। वे आपस में नोक झोंक करने और शाहज़ादी के साथ जल क्रीड़ा करने लगीं। जीवित सौन्दर्य वहां अपना सौरभ बखेरने लगा।

पता नहीं कब से वह गुलाब जल से लबालब हौज सूखा पड़ा है। छै शताब्दियों से हौज की गोद सूनी पड़ी है जहां ये अप्रतिम सौन्दर्य की प्रतिमाएं केलि क्रीड़ाएं करती थीं। हाथ मुंह धोने के वे हौज; जो खिले कमल के समान एक बड़ी रक़ाबी के आकार के थे, जिनमें भरे निर्मल जल में नीचे की कांपती हुई पच्चीकारी और सुमुखी सुन्दरियों का कांपता प्रतिबिम्ब परस्पर प्रतिस्पर्द्धा सा करता दीख पड़ता था, अब भला गुलाब जल और इत्र तो उन हौज़ों को कहां मुअस्सर, कभी टूटी छतों से बर्साती पानी बह आता है। फूल अब इनमें कौन डाले? धूल गर्द तक की सफाई नहीं होती। न जाने कहां से इधर उधर से सूखी पत्तियां और कूड़ा कर्कट उड़कर ढेर हो गया है। संगमर्मर के वे आबदार उज्ज्वल तले भी अब काई से काले पड़ गए हैं। अब तो ये हौज जैसे उस रंग महल के कलेजे के बड़े बड़े घाव हैं जो कभी न भरेंगे।

हौज से शाहज़ादी निकली। बांदियों ने एक हल्की तनजेब से उसका शरीर ढंक दिया। तनजेब से छन छन कर शाहज़ादी का यौवन झांकने लगा। इसी समय तोशेखानेवालियां कमख्वाब का बुकचा लेकर आ उपस्थित हुईं। बांदियों ने शाहज़ादी को पोशाक पहनाई।

इत्र लगाया। बाल गूंथे, सिंगार किया। बांदियां जड़ाऊ गहनों की भरी किश्तियां लिए अदब से आ खड़ी हुईं। मन पसंद जेवरात शाहज़ादी ने पहने। अब शाहज़ादी बारहदरी में आई। चांदी का नक्काशीदार तख्त बिछाया, पीछे तकिया, आगे तीन सीढ़ियां, पायों में फूल-पत्ते। ऊपर करकरी ताश का तख्तपोश।

सामने जश्नियां, तुर्किनियां, कल्मानियां बैठीं, बगल में मुंह लगी लौंडियां और अदबेगनियां। मिठाई और मेवों के सजे खान पेश हुए। एक चांदी की बड़ी भारी किश्ती में बड़ा सा कलाबा, पांच पानों का एक बीड़ा, हरी दूब, मिश्री के कूजे, चांदी के छल्ले, ऊपर कमख्वाब का कश्ती पोश, जिसमें कलाबत्तू की झालरें। जसोलिनी ने दस्तबस्ता अर्ज की—"हजरत तशरीफ़ लाए हैं।"

शाहजादी अदब से खड़ी हो गई। हज़रत अलीबेग आए। काला आबनूस का रंग, पांच हाथ का नंगतड़ंग शरीर, तीन मन की लाश, मेहदी रंगी दाढ़ी, पान कचरते, होठ फड़काते। नंगा बदन हज़रत मसनद पर बैठे। उन्होंने पहिले हज़रत फातमा, बाबर बादशाह आदि की नयाजें दीं! फिर किश्ती से कलाबा निकाला। सुबहान अल्लाह-अल रहमान रहीम-कहकर उसमें गिरह दी। दूसरी गिरह में पान का बीड़ा बांधा, तीसरी में हरी दूब और मिश्री की डली बांधी। चौथी में चांदी का छल्ला बांधा, पांचवी गिरह शाहजादी के सिर से छुआ कर उस कलाबे में लगाई। होठों में बड़बड़ाए। दुआ दी और चल दिए। इन सब झंझटों से शाहजादी थक गई। फौरन नौबहार, सदाबहार, नर्गिस, भानकुंवर, भौन कुंवर, तलुए सहलाने और पांव दाबने लगीं।

शाहजादी ने मुंह बनाकर कहा—"हमारे सर में दर्द है।" बांदियों के होश उड़ गए। वे दौड़ीं शाही हकीम के पास। अन्ना-मानी-हप्फा-छूछू सब इकट्ठी हो गईं—"हाय, हाय, किसी कल्जनी ने हुजूर शाहजादी को होंस दिया।" अन्ना ने गम्भीरता से शाहजादी

को देखकर कहा—'ज़री दौड़ो कोई, कल्हारी के पांव तले की मिट्टी चूल्हे में जलाओ।' कई बांदियां दौड़ीं। छू छू ने कहा—'बलाऐं लूं मैं हज़रत फ़तिमा हज़रत मुहम्मद के नाम की खैरात बोलती हूँ।'

शाहजादी खिलखिलाकर हँस पड़ी। लौंडी बांदियां-सब 'सुबहान अल्लाह' चिल्ला उठीं। शाहजादी ने कहा—'अच्छी अम्मा, अब हम गुड़िया खेलेंगे।' बांदियां दौड़ चलीं और शाहजादी की गुड़ियाँ उठा लाईं। छोटी बड़ी अनेक, जरवफ़्त और जवाहरात से सजी धजी। शाहजादी गुड़िया खेलने लगी। एक ने कहा—"अय मैं बारी, हुजूर की इस छोटी गुड़िया की तो आज साल गिरह है?"

बस अब तो नाच मुजरा और मुबारकबादी की झड़ी लग गई। शाहजादी बहुत खुश हो गई। उसने अंगूठी, छल्ला, माला, अशर्फी, मुहर, रुपए जो हाथ में आया बांदियों पर फेंकना शुरू कर दिया। बांदियां मालामाल होने लगीं।

उसी समय—नादिरा बीबी ने फिर कक्ष में प्रवेश किया। उसने क्रोध भरी नजर से इस हुजूम को देखा। लौंडियां उसे देख मुंह बनाने लगीं। पर उसने उनकी परवा न की—वह सीधे शाहजादी के पास तक चली गई। उसने घुड़क कर सबको चले जाने का हुक्म दिया। मतलब सब का पूरा हो गया था। नादिरा बीबी को शाहजादी मानती है यह वे सब जानती थीं। वे सब भाग गईं। शाहजादी अकेली रह गई। अकेली होने पर उसने कहा—

"शाहजादी, आप गुड़िया खेल रही हैं और सल्तनत में बगावत की आग भड़कना चाहती है।"

शाहजादी ने अपनी गुड़िया को गोद में सुलाते हुए कहा—"तो मैं क्या करूं?"

"हुजूर, शाहजादा जंग करने के लिए आगरे जा रहे हैं?"

"इससे क्या होगा? अब्बा का इस क़दर परेशान होने का

मकसद ?"

"हुजूर शाहजादी, उनका जल्द आगरे जाना निहायत जरूरी है।"

"इस शिद्दत की गर्मी में ?"

"अभी गर्मी कहां है।"

"रात ही तो ठण्डी है, दिन में मुई आग बरसती है, अब्बा सफर की जहमत बर्दाश्त कर सकेंगे ?"

"क्यों नहीं, अगर तख्त पर उन्हें कब्जा करना है तो सब कुछ बर्दाश्त करना पड़ेगा। जरूरत हुई तो जंग भी करनी पड़ेगी।"

"तौबा, तौबा, जंग भी।"

"तब क्या शाहजादी समझती हैं—तख्ते शाही योंही मिल जायगा, आप जानती हैं कि शाहजादी रोशनआरा ने हज्रत शाहजादा को बुलवाया है।"

"तो मैं क्या करूं ?"

"आप भी शाहजादी रोशनआरा को खत लिखें।"

"क्या उन्होंने खत लिखा है ?"

"बेशक, हज्रत शाहजादा को खत मिला है।"

"तो मैं भी खत लिखूंगी। दवात कलम लाओ और मुग़लानी बी को बुलाती लाओ।"

"बहुत खूब, मगर याद रखिए शाहजादी, यदि हज्रत शाहजादा तख्त नशीन हुए तो हुजूर का इकबाल ही आगरे के रंग महल में बुलंद रहेगा।"

"वह रहना ही चाहिए, तू दवात कलम ला—मैं अभी खत लिखूंगी।"

नादिरा ने मुजरा किया और चली गई। शाहजादी फिर अपनी गुड़ियों से खेलने लगी।

३६

कूच का नक्कारा

अमीर मीरजुमला से सब सलाह मश्विरा कर के और मीर-जुमला की और अपनी सम्मिलित सेना लेकर औरंगजेब ने एक क्षण भी नष्ट न कर गुजरात की ओर कूच बोल दिया।

मुराद को धन की बड़ी आवश्यकता थी। उसने अपने विश्वासी खोजा शाहबाज खां को ६ हजार सवार देकर सूरत पर आक्रमण करने को रवाना कर दिया। उस समय सूरत एक धन-सम्पन्न नगर और बन्दरगाह था।

परन्तु मुराद ने सूरत पर आक्रमण करने से प्रथम ही इस भेद को खोल दिया। और बड़ी बड़ी डींगें मारी। इसका यह परिणाम हुआ कि सूरत का क़िलेदार सावधान हो गया। इससे केवल यही नहीं—कि सूरत की लूट में अधिक धन मुराद के हाथ नहीं लगा—सूरत का दुर्ग भी नहीं जीता गया। धूर्त औरंगजेब यह बखूबी जानता था कि बिना सूरत के क़िले को जीते हुए आगे आगरे की ओर बढ़ने से पीठ अरक्षित रहेगी। उसने कूच के प्रारम्भ ही में अपने दूधभाई मीरबाबा को बहुत सी बातें समझा-बुझा कर तथा कुछ चुने हुए सवार देकर आगे मुराद के पास भेज दिया। उसने उसके द्वारा सूरत की फतह पर मुराद को बहुत सी मुबारकबादियां दीं तथा मीरजुमला के साथ जो कार्यवाही की गई थी और जो कौल करार हुए थे वह भी सब उसने कहला भेजे। सब के साथ उसने एक खत भी मुराद को लिखा, जिसमें उसने लिखा था—"कि मैं एक बड़ी फौज की सरदारी में हूँ। और

दौलत भी मेरे पास बेशुमार है। बड़े बड़े उमराए-दरबारे शाही से मेरी पक्की बातचीत हो चुकी है, और अब बुरहानपुर व आगरे की तरफ बढ़ने में मेरी तरफ से कुछ भी देर नहीं है। बस, आप से इल्तजा करता हूं कि आप भी कूच में देर न करें और दोनों लश्करों को एक साथ मिल जाने के लिए कोई जगह करार देकर मुझे जल्द खबर दें।"

सूरत की लूट में बहुत कम खजाना मिलने से मुराद बहुत निराश हो गया था। उसने जो आशा भरे सुपने देखे थे, वे खोने लगे। परन्तु अब औरंगजेब का यह पत्र पढ़ कर और मीरबाबा की कुमक पाकर वह आशा और उत्साह से भर गया। जो धन सूरत की लूट से उसे मिला था—वह सब तो उन लुटेरे सिपाहियों को तनख्वाह बांटने ही में खर्च हो गया था—जिन्हें वह उस मुहिम पर ले गया था। अब उसने इस पत्र से उत्साहित होकर—सूरत के दुर्ग पर घेरा डाल दिया और डच सरदारों की सहायता से जो उसकी सेना में थे—दुर्ग की सफीलों को सुरंग से उड़ा दिया। जिससे दुर्ग में घबराहट फैल गई और दुर्ग का अधिपति उसकी शरण में आ गया। मीरबाबा ने भी उस वक्त बड़ी बहादुरी दिखाई। साथ ही उसने वहां के ही धनिकों से जबर्दस्ती ५ लाख रुपए वसूल कर लिए।

सूरत के दुर्ग को फतह कर के मुराद को बहुत प्रसन्नता हुई। उसका हौसला बढ़ गया। और उसका नाम भी प्रसिद्ध हो गया। सिपाही आ आ कर उसकी सेना में भर्ती होने लगे। औरंगजेब के पत्र तो निरन्तर आते ही रहते थे, जिनसे वह फूल कर कुप्पा होता जाता था। स्पष्ट था कि इन पत्रों में उसकी खूब लल्लो-चप्पो की गई रहती थी। अब उसने धूमधाम से मुरब्बजुद्दीन के नाम से अपने को बादशाह घोषित कर दिया।

ख्वाजा शाहवाज खां उसका सच्चा शुभचिन्तक था। वह

औरंगजेब की धूर्तता से अच्छी तरह परिचित था। जब औरंगजेब माण्डो तक आ पहुँचा और माण्डो में छावनी डाल कर उसने मुराद को लिखा कि 'आपका सेवक यह औरंगजेब यहां माण्डो में अपने लश्कर समेत आप के इस्तक़बाल को हाजिर बैठा है। अब आप जल्द तशरीफ लाइए।' तो एक बार शाहबाज खां ने उसे फिर समझाया—

"मेरे आक़ा, मुझ पर यकीन कीजिए। चाहे कुछ हो जाय आप गुजरात को —बल्के अहमदाबाद को मत छोड़िए। मैं आप को इस इलाके के सभी मजबूत किलों का मालिक बना दूंगा। और बेशुमार दौलत आपके क़दमों में ला रखूंगा।"

इस पर मुराद ने हंस कर कहा—"मगर वे सब क्या तख्ते देहली के बराबर होंगे ?"

"हुजूर, उसकी उम्मीद न रखिए।"

"लेकिन मेरा भाई औरंगजेब मेरे लिए इस क़दर सिरदर्दी कर रहा है तब मुझे मुनासिब नहीं कि ढीला रहूँ, और बुज़दिल कहलाऊं।"

"हुजूर, मेरे आक़ा, इस दग़ाबाज औरंगजेब के फेर में न पड़िए, इस पर जरा भी भरोसा मत कीजिए।"

मुराद ने अविश्वास की हंसी हंस कर इस सच्चे वीर और स्वामीभक्त सेवक से कहा—"अच्छा, मैं फुर्सत में तुम्हारी दास्तान सुनूंगा, मेरे प्यारे शाहबाज, बेशक तुम एक बहादुर सिपाही हो—मगर बादशाहों के मशीर होने लायक नहीं।"

इसी समय मुहम्मद अमीन और मुहम्मद सिद्दीकी ने आकर मुराद को सलाम किया। ये दोनों भी औरंगजेब के भेदिए थे, और उसी के हुक्म से मुराद के पास रहते और हर समय उससे बादशाह की भांति व्यवहार करते थे। इस कारण मूर्ख मुराद उन

से बहुत खुश रहता था। उन्हें देखते ही मुराद ने हंस कर कहा—"खुश आमदन, कहिए, लश्कर के क्या हालचाल हैं?"

"जहांपनाह, तमाम लश्कर हर तरह लैस है, वह कूच के लिए जहांपनाह के हुक्म की इन्तजारी कर रहा है।"

"लेकिन, आप लोगों का क्या ख्याल है कि मुझे औरंगजेब पर यकीन नहीं करना चाहिए।"

मुहम्मद अमीन ने आश्चर्य का भाव चेहरे पर ला कर कहा—"आफ़रीन हुजूरेवाला, दुनिया में ऐसा भाई हो नहीं सकता।"

मुराद ने मुस्कुराकर कहा—"आप कुछ कह सकते हैं कि औरंगजेब का लश्कर कहां तक आ चुका है?"

इसपर मुहम्मद सिद्दिकी ने कहा—"खुदावन्द, सुनने में आया है कि वह माण्डो में जहांपनाह के हुक्म की इन्तजारी कर रहे हैं।"

मुराद ने बादशाही शान से कहा—"बहुत खूब, तो अब हमें एक लहमा भी न खोना चाहिए और उनसे मिल जाना चाहिए। बस, आज रात ही को कूच बोल दिया जाय।"

शाहवाज खां क्रुद्ध दृष्टि से दोनों अमीरों को देखने लगा। उसकी कुछ भी परवाह न कर दोनों ने अदब से मुराद को कोर्निश की और हाथ बांध कर कहा—"जो हुक्म जहांपनाह।"

दोनों सरदार चले गए तो शाहवाज खां ने फिर कुछ कहना चाहा—परन्तु मुराद ने आराम करने का इरादा प्रकट किया।

उसी रात उसने अपना लश्कर लेकर माण्डो की ओर कूच बोल दिया। मीरबाबा के हाथ धन्यवाद और प्रेम के संदेश भेजना भी वह न भूला। और गुजरात से सीधा पहाड़ों और जंगलों की राह कूच दर कूच करता वह माण्डो आ पहुंचा।

जब दोनों भाइयों की सेना आमने सामने हुई तो औरंगजेब ने दो कोस आगे बढ़ कर मुराद की अगवानी की। आगे बढ़ कर उसकी रक़ाब चूमी और विनम्र भाव से कहा—"जहांपनाह, बादशाहत और सल्तनत की मुझे जरा भी हवस नहीं है। यह फौजकशी मैंने केवल इसलिए की है कि जिस तरह बन पड़े काफिर दारा से—जो मेरा और आप का जानी दुश्मन है, लड़-भिड़ कर आप को तख्ते सल्तनत पर—जो ख़ाली पड़ा है, बिठा दूँ।"

औरंगजेब ने जब यह बात सरे आम सब सरदारों के समक्ष कही तो सुन कर मुराद खुशी से फूल उठा। उसने औरंगजेब और सब सरदारों से बारंबार वादे करने प्रारम्भ किए। औरंगजेब अब जब मिलता—उसे हजरत—जहांपनाह, आदि कह कर सम्बोधित करता। और साधारण सेवक की भांति अपने को प्रकट करता।

मुराद राज्य के लालच में ऐसा अन्धा हो गया कि इस कपटी भाई के आचरण पर उसे तनिक भी संदेह न रहा। इस प्रकार दोनों सेनाएं मिल कर बहुत बड़ी हो गईं और वे धीरे-धीरे उज्जैन की ओर बढ़ने लगीं।

आगरे में जब यह ख़बर पहुँची तो चिन्ता और घबराहट का वातावरण वहां छा गया—बुद्धिमान लोग कहने लगे कि औरंगजेब की बुद्धिमत्ता और मुराद की शूरता देखिए, क्या रंग लाती है।

३७

गुस्लखाने का दरबार

बादशाह गुस्लखाने में तशरीफ रखते थे। सुगन्धित मोमबत्तियों का धीमा प्रकाश हो रहा था। मन्सबदार खलील खां की उस दिन की चौकी थी और वह निहायत अदब से एक कोने में खड़ा था। जगह जगह बलिष्ठ गुर्जबर्दार व्यवस्था करते फिर रहे थे और

आवश्यक आज्ञाएं ला रहे थे, कुछ लोग शाही मरातिब आदि लिए खड़े थे। खिलवत का दरबार था इसलिए और कोई वहां न था। बादशाह क्रोध से कांप रहे थे और जो लोग वहां थे वे भय से थर थर कांप रहे थे, एक तो वृद्धावस्था, दूसरे कमजोर शरीर, तीसरे रोग, चौथे चारों तरफ विश्वासघात, अविश्वास ऐसी हालत में तमाम हिन्दुस्तान के बादशाह का विचलित हो जाना स्वाभाविक ही था।

थोड़ी ही देर में दारा ने आकर बन्दगी की। बादशाह ने मुंह फेर लिया। दारा भी गुस्से में भरा था। बादशाह की नाराजी की कुछ भी परवाह न कर वह सीधा तनकर खड़ा हो गया। कुछ देर सन्नाटा रहा। दारा ने कहा—'हुजूर ने मुझे किसलिए तलब किया है ?"

बादशाह ने रुखाई से कहा—"सुलेमान शिकोह और मिर्जा राजा जयसिंह भी आ जांय तो कहूँ।"

इतने ही में नकीब ने राजा जयसिंह और शाहजादा सुलेमान के आने की सूचना दी। दोनों आदाब बजाकर अपने स्थानों पर खड़े हो गए। बादशाह ने मिर्जा राजा जयसिंह की तरफ रुख करके कहा—"आपको मालूम है कि हमारे दानिशमन्द वजीरुदौला सादुल्ला खां को किसी ने मरवा डाला। क्या आप उस खूनी का पता लगा सकते हैं ?"

राजा साहब ने कोई जवाब नहीं दिया। वे सिर नीचा किए खड़े रहे। बादशाह ने फिर कहा—"आप जानते हैं वह एशिया भर में अद्वितीय आलिम था। सल्तनत का तमाम बोझ वह उठाए था। आज उसके बिना सल्तनत डगमगा रही है। यदि आप उस खूनी को जानते हैं तो बताइए वह चाहे जो हो हम उसे माफ न करेंगे। फिर वह खूनी चाहे हमारा बेटा क्यों न हो।" यह कह कर उसने लाल लाल आंखें करके दारा की ओर देखा। दारा ने दृष्टि

नहीं मिलाई। वह जमीन की तरफ देखता रहा।

बादशाह ने फिर दारा की ओर अग्निमय नेत्रों से घूरकर लरजती हुई जबान से कहा—

'तुम इसकी बाबत कुछ कैफियत दे सकते हो ? फर्जन्दमन। तुम इस वक्त तख्त के वारिस–बल्कि एक तौर पर मालिक हो। स्याह सफैद सब कुछ करने का तुम्हें अख्तियार है। तुम्हें सल्तनत की सब बातें मालूम होनी चाहिए। कैफियत दो, इतना बड़ा अमीर किस तरह मारा गया ?"

दारा ने नीची नज़र किए हुए ही कहा—

"क्या हुजूर कुछ मुझ पर शक करते हैं ?"

"शक ? तो क्या तुम इस खून के मुतल्लिक कुछ नहीं जानते ?"

"हुजूर के पास मेरे खिलाफ़ क्या सुबूत है ?"

"सुबूत ! तुम मुझसे सुबूत मांगते हो ? तुम्हारी यह जुरत। तमाम में यह चर्चा आम है कि तुमने यह खून किया है और तुम मुझसे सुबूत मांगते हो ?"

दारा क्षण भर होठ काटता खड़ा रहा। फिर उसने कांपते हुए किन्तु दृढ़ स्वर में कहा—"ख़ैर, तो जब हुजूर का ऐसा ख्याल है तो मेरा जवाब यह है कि सल्तनत की बहबूदी के लिए जो कुछ किया गया वह दुरुस्त है।"

"तो तुम तस्लीम करते हो कि यह खून तुमने किया है ?"

"अगर हुजूर यह तस्लीम करें कि बेगम शाइस्त खां का खून हुजूर ने किया है तो बन्दा भी बे उज्र इस खून को तस्लीम करेगा।"

यह सुनते ही बादशाह तिलमिला उठे। वे एकदम तख्त से उछल पड़े। परन्तु तुरन्त ही वे घायल पशु की भांति गिर गए। उन्होंने दोनों हाथों से आंखें ढांप लीं। उनकी उंगलियों से आंसुओं की धारा बह चली। वे बड़ी देर तक बड़बड़ाते रहे, पर इससे ज़रा भी विचलित न होकर दारा ने कहा—"हुजूर कैफियत मांगते हैं

तो सुनिए। मरहूम वज़ीर साहेब की पठान बेगम—जिसे हुजूर बहुत अच्छी तरह जानते हैं। और जो उस बदनसीब की किस्मत का सितारा बुलन्द करने का एक अच्छा जरिया रही, अपने बेटे को तख्ते तैमूरी देने के मन्सूबे गांठ रही थी, उसका यह दावा था कि उसके बेटे में शाही खून का असर है, मगर यह फर्मांबर्दार तो उसे पठान ही समझता है।"

बादशाह बूढ़े शेर की तरह गर्ज उठा। उसने कहा—"खबरदार, याद रखो अभी तक बादशाह हम ही हैं।"

परन्तु दारा उद्दंडता से कहता ही गया–"यक़ीनन हुजूर बादशाह हैं और जब हुजूर ने कैफ़ियत ही तलब की है तो पूरी बात सुनिए हुजूर! हमारे मामू साहब शाइश्त खां, जिनकी बेगम····· "

बादशाह एक दम तख्त से खड़े हो गए और पागल की तरह अपने बाल नोचने लगे। मिर्ज़ा राजा ने इशारे से दारा को रोक कर बादशाह को सम्हाल कर तख्त पर बैठाया।

तख्त पर बैठकर बादशाह झींखने लगे। वे फूट फूट कर रोने लगे। अपने पापों को स्मरण करके वे बहुत विकल हो उठे। मिर्जा राजा ने कहा—

'जहांपनाह, यह वक्त घर में फूट डालने का नहीं है। हुजूर, तख्त पर इस वक्त मुसीबत की काली घटाएं छाई हैं। सबको मिलकर उसे दूर करने का बन्दोबस्त करना चाहिए।'

बादशाह कुछ देर चुप बैठे रहे। फिर बोले, "अफसोस, हमने जो सोचा था वह न हुआ। हमने चालीस साल बिना लड़ाई झगड़े के काटे। मुल्क में अमन आमान रहा। लोग फले फूले। मगर अब देखते हैं—तमाम मुल्क उजड़ जायगा। हमारा इतनी मिहनत से इकट्ठा किया खज़ाना लुट जायगा। यह मुग़ल तख्त अब धूल में मिल जायगा।"

बूढ़े बादशाह को अत्यन्त दुःखी देखकर सुलेमान शिकोह धीरे-धीरे आगे बढ़ा। वह बीस वर्ष का सुन्दर युवक था। वह उदार, सरल किन्तु जिद्दी था। बादशाह उसे बहुत प्यार करते थे। उसने बादशाह के निकट पहुंचकर धीरे से कहा—"दादा जान, इस क़दर रंजीदा न हों, जो होना था हो गया। हुजूर, बंगाल से शुजा और दखन, गुजरात से मुराद और औरंगजेब बढ़ते आ रहे हैं। हुजूर के जितने ख़त जाते हैं उनकी वे लोग कुछ भी परवा नहीं करते। ख़ासकर सुलतान शुजा सोन पार कर चुके हैं, उनके साथ चालीस हज़ार सवार और ढेढ़ लाख प्यादे हैं। साथ ही बेशुमार रसद और खजाना है।"

यह सुनकर बादशाह सन्नाटे में आकर सुलेमान का मुंह ताकने लगा। सुलेमान ने अदब से झुककर फिर कहा—"अगर, हुजूर का हुक्म हो तो मैं चाचा जान को आगे बढ़ने से रोक दूँ। या उन्हें पकड़ कर हुजूर के रूबरू हाज़िर करूं।"

बादशाह ने मिर्जा राजा जयसिंह की तरफ प्रश्नसूचक दृष्टि से देखा।

मिर्जाराजा ने कहा—"शाहज़ादे की दर्ख्वास्त मुनासिब है। जहांपनाह ?"

'तो' कुछ सोचते हुए बादशाह ने धीमे स्वर में कहा—"हम चाहते हैं कि शाहज़ादे के साथ आप भी जांय, आप न सिर्फ तख्ते मुग़लिया के पुराने खैरख्वाह हैं, मेरे पुराने दोस्त भी हैं। आप की बहादुरी दुनिया में ज़ाहिर है। हम चाहते हैं कि आप जैसे बने शुजा को वापस बंगाल लौटा दें।"

बादशाह की अपने प्रति इतनी उपेक्षा और अवज्ञा देख दारा जल उठा। उसने धीरे से कहा—"मुमकिन है राजा साहेब बहादुर हों—मगर बज़ाहिर तो वे एक मीरासी दीख पड़ते हैं।"

बादशाह कुछ कह रहे थे इसलिए वे शायद इन शब्दों को न सुन

सके। मगर मिर्जा राजा ने सुन लिया। सुनकर भी वे सह गए। उन्होंने बादशाह के पास झुककर कहा—"जहांपनाह की जैसी मर्जी होगी वही होगा।"

"तो हम चाहते हैं कि आप कूच की तैयारी कर दें। दिलेर खां भी आपके साथ रहेंगे। शाहज़ादा सुलेमान को मैं आप के सुपुर्द करता हूं।"

राजा ने स्वीकृति सूचक सिर हिलाया। वह छोटा सा दरबार बर्खास्त हुआ। दारा सबसे पहिले सलाम करके चल दिया, परन्तु मिर्जाराजा जय सिंह जब जाने लगे तो बादशाह ने उन्हें रुकने का इशारा किया। एकान्त होने पर उन्होंने कहा—

"आप शुजा से कह दीजिएगा कि शाही हुक्म के मुआफिक वापस चले जाना—सिर्फ तुम्हारा फ़र्ज ही नहीं बल्के फर्ज हुकूमत और सल्तनत की रू से भी यह निहायत जरूरी है कि वह इस तौर पर अपना ज़ोर और ताक़त न दिखाए। इसलिए, जब तक एक मुनासिब मौका इस काम के लिए न आ जाय यानी तावक्के कि हमारी बीमारी लाइलाज न साबित हो या मुराद बख्स और औरंगजेब की शामिल फौजों का कोई नतीजा न मालूम हो जाय, ऐसी जल्द-बाजी तुम्हारे लिए मस्लहत नहीं है।"

महाराज जय सिंह ने बादशाह को हर तरह इत्मीनान दिलाया कि ऐसा ही होगा। और जहां तक होगा लड़ाई बचाई जायगी। सिर्फ शाहज़ादे को वापस ही लौटा दिया जायगा।

बादशाह ने सन्तुष्ट होकर कहा—"बस, यही हम चाहते हैं और साथही यह भी कि जल्द से जल्द यह काम करके-बिना फौज को थकाए या कमजोर किए आप आगरे लौट जायँ ताकि आगे न मालूम कैसा मौका हो। और कैसी जरूरत पड़े।"

राजा ने यह भी स्वीकार किया। और फिर बन्दगी करके चले आए। बादशाह दुःखित और चिन्तित मन से भविष्य को

सोचते हुए—तख्त से उतर ईरानी लौंडियों के कन्धे का सहारा ले धीरे धीरे ख्वाबगाह की ओर तशरीफ ले चले।

चांदनी छिटक रही थी। सामने ताज चांदी के समान चमक रहा था। बादशाह ने एक नजर उस पर डाली। और अतीत की सुखद स्मृतियों में विभोर हो एक ठण्डी सांस खींची।

३८

औरंगजेब की कठिनाइयां

बीदर और कल्याणी के दुर्ग बीजापुर से जीत लेने के बाद सिंहासन के लिए आगरे की ओर प्रस्थान करने तक के पांच मास औरंगजेब के, भारी कठिनाइयों और परेशानियों के थे। घटनाएं तेजी से घट रही थीं, संकट अनेक थे। इन सब का सामना करते हुए अपने ध्येय पर आगे बढ़ना आसान न था। उसका भविष्य अंधकारपूर्ण था और जिन संकटपूर्ण स्थितियों मे वह फसता जाता था वे साधारण न थीं। परन्तु उसनधीरज और साहस से उन सब विपरीत परिस्थितियों का सामना किया और इस समय अपनी सेना को सुगठित करने में उसने अपनी सारी शक्ति लगा दी।

अभी उसने बीजापुर पर विजय प्राप्त की ही थी, और वह सोच रहा था कि उस बड़ी सैन्य से कैसे लाभ उठाया जाय जो मीरजुमला आगरे से ले आया है। परन्तु शाही सिपहसालार उसका साथ देने में आनाकानी कर रहे थे। यद्यपि उसने आगरे से कोई समाचार दक्षिण में न आने पावे इसकी बड़ी बड़ी पाबन्दियां और रोक-थाम लगा दी थी। फिर भी यह अफवाह फैल ही गई कि बादशाह जिन्दा है और उन्होंने दक्षिण की सेना को वापस बुलाया है। महावत खां तो अपनी सेना लेकर आगरे चल ही दिया था—शेष अमीर विरोधी हो रहे थे। ऐसी दशा मे उसने अपनी विलक्षण बुद्धि और असीम साहस करके मीरजुमला को कैद कर लिया और उसकी सारी सेना अधिकृत कर ली।

इन सारी परिस्थितियों का प्रभाव बीजापुर दरबार पर भी पड़ रहा था। बीजापुर को इस समय शिवाजी का सहारा मिल रहा था। औरंगजेब का कूटदूत शिवाजी के पास से विफल मनोरथ होकर लौट आया था--चतुर शिवाजी ने अपना अवसर ताक लिया था—औरंगजेब की स्थिति से लाभ उठा कर बीजापुर दरबार उन संधि की शर्तों का अब पालन ठीक-ठीक नहीं कर रहा था जो मीरजुमला और बीजापुर दरबार में हुई थीं। निस्संदेह मीरजुमला का कैद हो जाना भी इसका एक कारण था—जिसका वास्तविक स्वरूप कोई नहीं जानता था। अब तो इस के लिए एक ही राह थी कि वह सब ओर से ध्यान हटा कर, जो कुछ भी हाथ लगे उसी को लेकर केवल एक ही ध्येय पर अपना पूरा ध्यान केन्द्रित करे और वह ध्येय था आगरे पहुँच कर मुगल तख्त को अधिकृत करना। सो उसने अब सारा ध्यान इधर ही लगाया और अपनी सारी चालों और साधनों को आगरे को अधिकृत करने में लगा दिया।

दक्षिण से रवाना होने से प्रथम उसने बीदर और कल्याणी के किलों का निरीक्षण किया, वहां मजबूत थाने क़ायम किए। किलों की मरम्मत करा कर वहां की सामग्री और सेना को व्यवस्थित किया। इसी समय उस पर एक वज्रपात हुआ। उसकी रुग्णा बड़ी बेगम दिलरस बानू ने शाहजादा मुहम्मद अकबर को प्रसव किया और प्रसूति पीड़ा ही में उसका प्राणान्त भी हो गया। यह इस समय औरंगजेब के सिर पर एक विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा, पर उसने बड़े धैर्य से इस आपत्ति का सामना किया। वह तुरन्त औरंगाबाद पहुंचा। और शान्तिपूर्वक बेगम की अंत्येष्टि क्रिया अत्यन्त सम्मान और प्रतिष्ठा से की। उसने उसे 'रुबिया-उद-दौरानी' अर्थात आधुनिक पवित्रात्मा रुबिया, नाम दिया और औरंगाबाद में उसे दफनाया, जहां बाद में उसका संगमरमर का

मकबरा बनाया गया, जो दक्षिण का ताजमहल मशहूर हुआ। अभी उसे बहुत काम करने थे। और अपनी प्यारी बेगम का मातम मनाने का उसे समय नहीं था। उसने सबसे महत्वपूर्ण और आवश्यक काम यह किया कि सेना भेज कर नर्मदा पार करने के सब घाटों पर अपना अधिकार कर लिया। इस प्रकार दक्षिण के शाही हाकिमों और दारा का सम्बन्ध एकदम विच्छेद हो गया।

उसने यह तय कर लिया था कि जबतक शाहजहां की मृत्यु का निश्चय न हो जाय वह विद्रोह का झण्डा न उठावेगा। परन्तु जो घटनाएं तेजी से घट रही थीं उन्होंने उसे इस निर्णय पर दृढ़ न रहने दिया। उसे दक्षिण से सम्बन्ध रखने वाली दारा की नीति ज्ञात हो चुकी थी। उसने यह भी सुना था कि मुराद को गुजरात की सूबेदारी से हटा कर बरार का सूबेदार बनाने का हुक्म जारी हो चुका है। इसका स्पष्ट यह अर्थ था कि बरार औरंगजेब से छीन कर और मुराद को देकर दोनों भाइयों में झगड़ा पैदा करा दिया जाय। उसे यह भी सूचनाएं मिल चुकी थीं कि शाइस्त खां जो उसका सशक्त समर्थक था—और अभी मालवे का शासक था, मालवे से वापस आगरे बुलाया गया है तथा ऐसे ही परवाने मीरजुमला और दक्षिण के अन्य उमरावों पर भी जारी किए गए हैं।

अब उसे स्पष्ट हो गया कि बादशाह बनने के लिए अंतिम प्रयत्न करने का समय आ उपस्थित हुआ। उसके असीम साहस और कूटनीति का यह श्री गणेश था कि उसने मीरजुमला को बनावटी झगड़ा करके दौलताबाद के किले में कैद कर लिया और बादशाह के नाम से उसकी सारी सेना और जायदाद जब्त कर ली। प्रकट उसने यही किया कि मीरजुमला दक्षिण के दोनों सुलतानों से मिल कर षड़यन्त्र रच रहा है। इस समय आगरे में नया वजीरे आजम दारा ने जाफर खां को नियत किया था। उसने उसे लिख दिया कि बादशाह सलामत की बाबत अफवाहों को

सुन कर वह रुग्ण पिता के दर्शन करने आगरे आ रहा है। इसके अतिरिक्त बादशाह को भी एक अत्यन्त विनयपूर्ण पत्र लिखा। जिसका जिक्र पीछे हो चुका है।

अब उसने गोलकुण्डा के कुतुब शाह को कर का शेषांश तुरन्त अदा करने के पत्र लिखे। और गोलकुण्डा स्थित मुगल राजदूत के साथ ठीक-ठीक व्यवहार रखा जाय ऐसी हिदायतें दी गईं। इसके बाद उसने बीजापुर को राजमाता बड़ी साहिबा को बहुत से उत्तम और बहुमूल्य उपहार भेज प्रेम और मैत्री भाव प्रकट किया। और निवेदन कराया कि जो धन भेज देने का वादा किया गया था—वह शीघ्र भेज दिया जाय। साथ ही उसने राजधानी और मालवा के दरबारियों को अत्यन्त सावधानी से भिन्न-भिन्न आदेश भेजे। हक़ीकत तो यह थी कि आगरे दरबार में अब सभी सरदार—उसी को भारत का भावी सम्राट मान चुके थे। और प्रायः सभी ने उसे कुछ न कुछ सहायता देने का वचन दे रखा था।

नए सैनिक वह लगातार भर्ती कर रहा था, अनेक स्थान पर गोला बारूद बनाने के लिए गन्धक, सीसा,शोरा खरीद कर एकत्र किया गया था। दक्षिण के सब किलों से बारूद, घोड़े और अन्य आवश्यक चीजें मंगा ली थीं और जब वह दक्षिण से कूच कर रहा था तब तीस हजार सवार उसकी रक़ाब के साथ थे। तथा मीरजुमला का सुशिक्षित तोपखाना भी था। जिस में अंग्रेज और फ्रान्सीसी तोपची नौकर थे। इतना ही नहीं—उसके पास अच्छे योग्य और विश्वासी अधिकारी भी काफी थे। उसने दक्षिण की सूबेदारी करते करते ही योग्य कर्मचारियों का एक गुट्ट बना लिया था। वे सब औरंगजेब को एक औलिया समझते—उस पर श्रद्धा करते और उसके लिए जान देने को तैयार थे।

इस प्रकार सब भांति तैयार होकर औरंगजेब ने औरंगाबाद से कूच किया और कूच पर कूच करता हुआ बुरहानपुर आ पहुंचा।

३६

मुतासिब-फ़क़ीर

बुरहानपुर एक बहुत साधारण क़स्बा था। वहां न कोई क़िला था न नगर की शहरपनाह थी। पर औरंगजेब बीच बीच में औरंगाबाद से यहां आकर रहा करता था। यहां उसका एक आलीशान महल था और उसकी प्रधान बेगम दिलरस बानू प्रायः यहीं रहा करती थी। औरंगजेब बुरहानपुर को दक्षिण का द्वार समझता था और उसने यहां एक विश्वासी ओहदेदार रख छोड़ा था, जिसके आधीन एक छोटी सी फौज भी थी। उसे इस बात की सख्त हिदायत थी कि उत्तर से दक्षिण आने वाले प्रत्येक व्यक्ति और उसके सामान की खूब सावधानी से जांच की जाय और उसे सब बात की इत्तला मिलती रहे।

क़स्बे के चरणतल में ही जो नदी थी उसका स्वच्छ जल नगर निवासियों को आसानी से उपलब्ध हो जाता था। बस्ती में पारसी और आरमीनियन सौदागर बहुत थे। यहां फलों की काफी भरमार रहती थी और फसल में आम तो इतना होता था कि बाज़ार पट जाता था। इसके अतिरिक्त नीबू, नारंगी, चकोतरा, अंगूर भी खूब होते थे। सब्जी तरकारियों की यहां कमी न थी। जंगल में साए-दार वृक्षों की कमी न थी। जंगल में हिरण, बारहसींगा, जंगली सांढ़, मोर, फाख्ता, कबूतर आदि शिकारों की भरमार थी। परन्तु चोर-डाकुओं का भय भी बहुत था। इक्कादुक्का आदमियों का यात्रा करना संभव ही न था। ये लोग तीर कमान और भाले बर्छा से लैस शिकार की तलाश में घूमते ही रहते थे।

दनादन कूच करता हुआ औरंगजेब बुरहानपुर आ धमका। बुरहानपुर में उसने नदी के किनारे पर अपनी छावनी डाली, और फौज की थकान उतारने लगा। परन्तु उसका असल विचार यह था कि मीरबाबा—मुराद के सच्चे समाचार ले आवे।

औरंगजेब स्वयं तो अपने को फ़कीर कहता तथा लश्कर में भी फ़कीर की भांति रहता था। वह चटाई पर सोता, बहुत सादा भोजन करता तथा टोपियां सीता या कुरआन लिखा करता। ज़ाहिरा बहुत से फ़कीर उसके पास आते रहते, वह उनकी ख़ातिर करता और बड़ी आव-भगत करता। पर सच पूछा जाय तो इनमें से बहुत से उसके जासूस होते थे और दूर दूर की ख़बरें ला कर उसे देते रहते थे। जो लोग इस भेद को नहीं जानते थे, वे उसे एक औलिया समझते, उसे दाता समझ बहुत से फ़कीर ख़ैरात लेने उसके पास दूर दूर से आते।

उन दिनों फ़कीरों की सब जगह बड़ी आव-भगत होती थी। लोग उन्हें मनमानी भीख देते—उनकी इज्जत करते और उन्हें माल मलीदा खिलाते थे। इन फ़कीरों में थोड़े ही सच्चे फ़कीर होते थे, अधिकतर मुस्टंडे धूर्त ही होते थे। औरंगजेब जो स्वयं धूर्त था और बिना जरूरत कभी एक धेला किसी को नहीं देता था, भला इन मुस्टंडों के चंगुल में क्यों फंसता। उसे अनेक बार इन फसली फ़कीरों की चालाकियों की सूचना मिल चुकी थी और उसने इस बार उन्हें सज़ा देने का पूरा इरादा कर लिया।

उसने आज्ञा की कि सब फ़कीरों को बुरहानपुर में इकट्ठा किया जाय। और उनको भोजन, धन और नवीन वस्त्र प्रदान किए जांय। यह आज्ञा सुनते ही दूर दूर के फ़कीर इस अवसर से लाभ उठाने बुरहानपुर में आ जुटे। फ़कीरों का एक अच्छा खासा मेला लग गया। हजारों की संख्या में फ़कीर आ गए। औरंगजेब ने उन्हें भोजन खिला कर आज्ञा दी कि उनके पुराने

वस्त्र उतार लिए जांय और नए वस्त्र उन्हें पहनाए जांय। फ़कीरों को जब इस बात का पता चला तो वे बड़े घबराए। और चिल्लाने लगे कि "नहीं, नहीं, हम इन्हीं वस्त्रों में मरेंगे। हम इन्हें नहीं उतारेंगे। ये वस्त्र बड़े पाक़ हैं।" पर इस धूर्त शाहजादे के सामने सब बकवाद व्यर्थ थी। उन्हें वे पुराने वस्त्र उतार कर नए वस्त्र पहना दिए गए।

परन्तु जब इन पुराने वस्त्रों की तलाशी ली गई तो इन गुदड़ियों में न केवल बेशुमार अशर्फिएं, अपितु बहुत से जवाहर भी सिले हुए मिले। इस मुफ्त के माल को पाकर औरंगजेब बहुत खुश हुआ।

इसी समय एक पोर्चुगीज व्यापारी ने औरंगजेब को एक अत्यन्त क़ीमती मोती दिखाया और औरंगजेब ने उन फ़कीरों के धन से वह मोती ख़रीदने का इरादा किया।

शेखमीर औरंगजेब का एक विद्वान मित्र था। उससे औरंगजेब ने पूछा—'क्या मोती इतनी क़ीमत का है कि उसे इतनी अशर्फियों में ख़रीद लिया जाय।' इस पर शेख़ मीर ने आँखें नीची करके कहा—'यदि हुजूर, इससे बड़े बड़े बहुत से मोती नहीं ख़रीदना चाहते तो इसे ही ख़रीद लीजिए, परन्तु मेरा तो यह ख़याल है कि आप इस धन से नए सिपाही भर्ती करें जिनकी बदौलत आप इससे भी उत्तम बहुत से मोती ख़रीद सकें।'

मित्र की इस बात से औरंगजेब खुश हो गया और शेखमीर की बात उसने गांठ बांध ली। दूसरे ही दिन से बुरहानपुर में औरंगजेब ने नई फौज भर्ती करना प्रारम्भ कर दिया। उसने अपने विश्वस्त अनुचरों से हंस कर कहा—'फ़कीरों की यह ख़ैरात हिन्दुस्तान से कुफ्र उठाने में काम आएगी, यह अच्छा है।' औरंगजेब को इस प्रकार कहते सुन कर खुशामदियों ने उसे 'मुतासिब फ़कीर' कह कर उसकी बड़ाई की।

४०

अपनी-अपनी डफली—अपना-अपना राग

बंगाल का सूबेदार—शाहजहां का दूसरा पुत्र शुजा एक बुद्धिमान पुरुष था। वह स्वभाव का विनम्र और सहृदय व्यक्ति था। पर वह आराम तलब और आलसी था। इसी से उसके शासन में सदा ढील-ढाल बनी रहती थी। सेना भी इन्हीं कारणों से उसकी सुगठित न थी। वह चाहता तो परिश्रम करके अपनी राज्य व्यवस्था और सेना को उत्तम बना सकता था। परन्तु दुर्भाग्य से वह कभी भी सावधान न रहता था।

शाहजहां की बीमारी की अतिशयोक्तिपूर्ण खबरें उसे बंगाल की तत्कालीन राजधानी राजमहल में मिलीं। उसने उसी समय अपने को बादशाह घोषित कर दिया और अपने नाम पर उसने अबुल-फ़ैज नासिरुद्दीन मुहम्मद, तीसरा तैमूर, दूसरा सिकन्दर शाहशुजा ग़ाजी का नया ख़िताब धारण किया।

इसके बाद उसने चालीस हज़ार सवार और लगभग डेढ़ लाख पैदल लेकर बंगाल से कूच किया। रकाब पर पैर रखते हुए उसने कहा—'या राज या ताबूत।' शुजा बड़ी उमंग में था। उसके पास उम्दा सेना तो थी ही जिसमें आलादर्जे के पुर्तगीज़ तोपची थे। साथही ख़जाना भी बेशुमार था। यह दौलत उसने बंगाल बिहार और उड़ीसा के ज़मींदारों-रईसों और नगरों को लूटकर ज़मा की थी, इसी इरादे से कि एक दिन मुझे अपने बाहुबल से दिल्ली का तख्त जीत लेना पड़ेगा।

आगरे के दरबार में शुजा के अनेक बड़े बड़े मित्र थे। और इन मित्रों पर उसका पूरा भरोसा था। ये सब ईरानी थे और

शिया धर्म मानने वाले थे। शुजा ने भी अपना धर्म शिया मशहूर कर दिया था, पर यह सिर्फ उसकी अपने इन दोस्तों को खुश करने की चाल थी। उसका पत्र व्यवहार बराबर राजधानी में इन अमीर दोस्तों से जारी रहता था, उसे उन दोस्तों पर अपनी प्रबल सेना से भी ज्यादा भरोसा था, परन्तु इस अदूरदर्शी को अपने दुश्मनों की कुछ भी चिन्ता न थी। दारा इस मामले में बड़ा चौकन्ना था। उसने उन सब अमीरों को अपनी नज़र में जंचा लिया था जो दारा के पक्षपाती थे। इस गुट्ट के नेता वज़ीरुद्दौला सादुल्ला खां को तो उसने मरवा ही डाला था, बाकी सब सरदारों को उसने मीरजुमला की दुम से बांधकर दक्षिण की ओर धकेल दिया था। यह काम वास्तव में उसने बड़ी बुद्धिमानी और दूरदर्शिता का किया था। इन अमीरों में सलावत खां, महावत खां और आजवत खां पांच पांच हजारी जात के मन्सबदार थे। साथ ही वे पूरे वीर भी थे। वे इस अवसर पर आगरे से बाहर नहीं जाना चाहते थे। क्योंकि वे जानते थे कि उन्हीं के भरोसे, उन्हीं के बुलाने पर शुजा आ रहा है। पर वे विवश थे। फिर वे बहुत अच्छी तरह यह भी जानते थे कि मीरजुमला औरंगजेब का कट्टर मित्र और पक्षपाती है। और यह कि हम दक्षिण नहीं जा रहे, काल के गाल में जा रहे हैं, उनके जासूसों ने उन्हें औरंगजेब की समस्त कूटनीति से जानकार बना दिया था। परन्तु दारा ने बादशाह से उन्हें मीरजुमला के साथ भेजने की आज्ञा दिला दी। और उन्हें जाना भी पड़ा ही। मीरजुमला इन सब भेदों को जानता था, यह प्रबंध देख वह मन ही मन खूब हँसा, उसने समझ लिया औरंगजेब का भाग्य अच्छा है कि उसका मुझ जैसा दोस्त बादशाह और दारा को सोलह आना उल्लू बनाकर और उम्दा शाही सेना और खजाने की मदद लेकर उसके पास जा रहा है। और शुजा के हाथ पैर वे सरदार उससे दूर और बेबस किये जा रहे हैं। उसने

अपने पत्र में इसी बात को दृष्टि में रखकर औरंगजेब को मुबारक बादी दी थी।

सुलेमान शिकोह साहसी और वीर एवं खुश मिज़ाज युवक था परन्तु वह राजनीति से निपट अनजान था। उसे लड़ने की बड़ी उमंग थी और वह इस युद्ध में बढ़ बढ़ कर हाथ मारने, तथा विजय का सेहरा अपने माथे पर बांधने को बहुत उतावला हो रहा था। यद्यपि उसके साथ मिर्ज़ाराजा जय सिंह और प्रसिद्ध सेनापति दिलेर खां भी थे, जो बादशाह के बड़े भारी विश्वासी और राज्य के स्तम्भरूप थे। खास कर राजा जय सिंह की समस्त साम्राज्य में धाक थी। वे अस्सी हजार अश्वारोहियों के स्वामी थे। वे एक वीर अनुभवी और राजनीति-विचक्षण योद्धा थे। उन्होंने बड़ी बड़ी विजय प्राप्त की थी। परन्तु यहां तो द्विविधा का राज्य था। मुगल राज्य में दुर्भाग्य से घर घर राजनीति चलती थी। प्रथम तो बादशाह शुजा का उतना विरोधी न था। फिर पिछले दिनों वजीर सादुल्ला को मरवा डालने तथा राज्य में मनमानी करने से दारा से उसका मन फिर गया था। इसके अतिरिक्त लोगों ने उसके कान यहां तक भर दिए थे कि दारा आपको विष देने की फिक्र में है, इसलिए उसके मन में शुजा को ही गद्दी देने की कभी कभी इच्छा हो उठती थी। इसी से उसने मिर्जाराजा को गुप्त रीति से समझा दिया था कि वे शुजा से लड़ें नहीं—पीछे लौटा दें, और धीरज से समय की प्रतीक्षा करने को समझा दें।

परन्तु सुलेमान शिकोह दारा का पुत्र था। वह राजनीति से अनजान तो था ही, बादशाह के दृष्टिकोण से उसका दृष्टिकोण भी नहीं मिलता था। फिर उसे दारा ने गुप्त हिदायत भी की थी कि मिर्जा राजा चाहे कितनी भी लीपापोती करें, तुम शुजा को बिल्कुल ही पीस डालना। जिससे इस दुश्मन से हमेशा के लिए बेफिक्र हो जाऊं। बढ़े चले जाना और उसकी तमाम फौज को

चीर डालना। इस प्रकार से यह शाही सेना भिन्न भिन्न विचारों और इरादों के सरदारों के साथ जा रही थी। शाहज़ादा अनुभव शून्य होने पर भी स्वामी था। मिर्ज़ाराजा और दिलेर खां अनुभवी और योग्य—होते हुए भी अनुगत थे। उस समय की यही दूषित मुगल राजनीति और रणनीति थी।

यह तो सेनापतियों के भाव थे। सेना का हाल इससे भी बुरा था। उसे इस बात का कुछ भी पता न था कि उसे क्या करना चाहिए। सरदारों का हुक्म बजा लाना, लूट के मौके को ताकते रहना, उनका काम था। कोई जीते कोई हारे, उन्हें अपनी रंगरेलियों और तनख्वाह से मतलब। लड़ाई के वक्त जहां तक हो वे अपनी जान बचाने और जख्मी होने से बचने की ही कोशिश करते थे। यही उनका सैनिक धर्म था। अन्त में इस प्रकार की सेना-व्यवस्था और रणनीति का जो परिणाम होना था वही हुआ। इसीसे शाही सेना सब तरफ़ से हारती ही गई।

४१

बहादुरपुर का युद्ध

दोनों सेनाएं तेज़ी से बढ़ती हुईं एक दूसरे के निकट होती चली जा रही थीं। इस कूच के बीच में भी मिर्ज़ा राजा निरन्तर शुजा को वापस लौट जाने की सलाह देते जाते थे। पर शुजा टक्कर लेने का इरादा कर चुका था और बिना राजा के पत्रों का जवाब दिए बढ़ा ही चला आता था। सुलेमान शिकोह भी पूरे जोश में था और उसने सेना को आज्ञा दे रखी थी कि ज्योंही दुश्मन की सेना दीखे—तुरन्त गोलाबारी शुरू कर दो। उसने सेना के अग्र भाग में अपना तोपखाना रख छोड़ा था। उसके प्रधान तोपची का नाम मुमताज खां था। वह एक दिलेर और बड़े डील डौल का आदमी था। उसका निशाना बिल्कुल सच्चा पड़ता था।

वह ढीठ बहुधा शाहज़ादे के सामने डींग हांकता था—"इन्शा अल्लाताला पहला ही गोला सुलतान शुजा के खीमे पर सर करूं तो बात है।" सुलतान इस बात से बहुत खुश होता था।

मिर्ज़ा राजा और दिलेर खां उदासीन भाव से आगे बढ़ रहे थे।

शुजा को जासूसों द्वारा खबरें मिल रही थीं कि शाही सेना दिन दिन निकट हो रही है। अन्त में बनारस से पांच मील उत्तर बहादुरपुर के निकट एक पहाड़ी पर उसने तोपें जमा दीं और शाही सेना से टक्कर लेने को कटिबद्ध हो गया।

दूसरे दिन सूर्योदय के साथ ही साथ दोनों सेनाओं ने एक दूसरे को आमने सामने देखा। तुरन्त ही सुलेमान ने गोले दाग़ने की आज्ञा दे दी। देखते देखते वहां का वातावरण गर्जन-तर्जन और धुएं से भर गया, परन्तु यह अन्धाधुन्धी की लड़ाई थी। कहां किसकी कितनी क्षति हो रही है, यह कुछ जान ही न पड़ता था। सुलेमान घोड़े पर सवार हो बड़ी मुस्तैदी से तोपखाने का मुलाहिज़ा करता तथा उन्हें उत्साहित करता दौड़ धूप कर रहा था। दोनों प्रसिद्ध सेनापति उदासीन भाव से इस अव्यवस्थित युद्ध को देख रहे थे। शाहज़ादे ने इस सम्बन्ध में उनकी कोई सम्मति तक नहीं ली थी।

महाराज जय सिंह ने दिलेर खां से सलाह करके आखिर दिलेर खां को शुजा के पास समझाने के लिए रवाना किया। गोला-वारी तो होती ही रही। सेनापति दिलेर खां केवल ५० सवार साथ लेकर रास्ता काट पीछे के भाग से शुजा के लश्कर में पहुंच गया। सूचना पाते ही शुजा ने सेनापति दिलेर खां को आदर पूर्वक अपने खीमे में बुला लिया। साधारण कुशलवार्ता के बाद दोनों में बातें प्रारम्भ हुईं। दिलेर खां ने कहा—"मैं हुजूर के सच्चे खैर-ख्वाह के रूप में हाज़िर हुआ हूँ।"

"हमें आप का इत्मीनान है।"

"मुझे मिर्ज़ा राजा जय सिंह जी ने आप की खिदमत में भेजा है, मिर्ज़ा राजा हुजूर के वैसे ही सेवक और खैरख्वाह हैं, जैसे तख्त के।"

"मिर्ज़ा राजा की खैरख्वाही और खिदमत मैं जानता हूं।"

"मैं तसलीम करता हूं कि हुजूर उस शख्स से बदला लेने के इरादे से तशरीफ लाए हैं जिसने आपके वालिद को, जो दीनो-दुनिया के मालिक और हिन्दुस्तान के शहनशाह हैं, मार डाला है।"

"बेशक, बेशक, और मैं उससे बिना बदला लिए न लौटूंगा।"

"मगर हुजूर को यह ख़बर बिल्कुल ग़लत मिली है, शहन-शाह ज़िन्दा और बिल्कुल तन्दुरुस्त हैं, मैं आप को यकीन दिलाता हूँ।"

"यह सुनकर मुझे बहुत खुशी हुई है···"शुजा जरा अटका—

इस पर तुरन्त ही दिलेर खां ने कहा—

"इसलिए शहनशाह की मन्शा है कि आप अपने सूबे को वापस तशरीफ ले जांय, और इस मौके पर आपने जो मुहब्बत और इज्ज़त जहांपनाह के लिए दरसाई है, उससे बादशाह ने पटने का शहर आपको इनायत किया है। इसमें कोई शक नहीं कि इस हालत में आपका इस तरह आना एक उम्दा काम था और इससे हुजूर की जवांमर्दी और जांनशीनी जाहिर होती है, मगर इससे भी ज्यादा उम्दा काम आपका वापस तशरीफ ले जाना होगा, जिससे आपके दुश्मन शाहनशाह के कान आपके खिलाफ भर कर आपको बागी न मशहूर कर दें। आप अगर इस वक्त वापस तशरीफ ले जाएंगे तो मैं और मिर्जाराजा वादा करते हैं कि जब कभी जरूरत होगी, हम मदद के लिए हाजिर रहेंगे।"

सब बातें सुनकर शुजा कुछ देर सोचता रहा। फिर उसने

धीरे से कहा—

"खां साहब, आपकी बात सुनकर मुझे बखूबी तसल्ली हो गई-खासकर मैं राजा साहब की बड़ी इज्जत करता हूँ। मगर मेरी बंगाल से आने की वजह तमाम हिन्दुस्तान में ज़ाहिर है। परन्तु अब, जबकि आप विश्वास दिलाते हैं कि मेरे वालिद बुजुर्गवार ज़िन्दा और तन्दुरुस्त हैं, मैं वापस जाने को तैयार हूँ—मगर चूंकि आप शाही नौकर हैं, इसलिए मैं चाहता हूँ कि शाहज़ादा की इज्जत का ख़याल करके आप अपना लश्कर पीछे हटा लें। मैं आप से वादा करता हूँ कि मुझे आप सूरज निकलने के पेश्तर ही मैदान से दूर देखेंगे। ऐसा करने से लोग यह न कह सकेंगे कि शुजा हारकर भाग गया।

शाहज़ादे की ज़िद समझकर दिलेर खां ने ऐसा ही करने का वचन दिया। तत्काल दोनों ओर से लड़ाई रोकने का संकेत कर दिया गया। लड़ाई रुक गई। और दोनों ओर के सैनिक निराश होकर यह सोचने लगे कि देखें अब क्या होने वाला है।

मिर्ज़ा राजा जय सिंह एक तजर्बेकार सेनापति थे। उन्होंने ज्योंही दिलेर खां की बातें सुनीं तो हँसकर कहा—'शाहजादा साहब, इस बूढ़े राजपूत के साथ गहरी चाल चला चाहते हैं खां साहब, वे यक़ीनन पीछे लौटती फौज पर सुबह हमला करेंगे।'

"मगर अब क्या किया जाय? मैं तो मंजूर कर आया हूँ।"

कुछ सोच कर राजा साहब ने कहा—

"आप गाड़ी, हाथी, खच्चर सबको एक पहर रात रहे सामान लाद कर कूच करने का हुक्म दे दें। मगर अपने अफसरों को पोशीदा तौर पर हुक्म दे दें कि वे लड़ाई के लिए बिल्कुल तैयार रहें। और ज्योंही कूच के नक्कारे बजें—बजाय कूच करने के आगे बढ़ने के लिए चौकन्ने और मुस्तैद रहें।"

इस युद्ध की व्यूह रचना इस प्रकार की गई कि बीच में शाह-

ज़ादा और दाहिने हाथ राजा साहब तथा बांये हाथ दिलेर ख़ां रहे।

कूच की तैयारियों की सूचना शुजा के जासूसों ने शुजा को दे दी—और उसने भी चुपके चुपके अपनी सेना को लड़ने के लिए तैयार रहने की आज्ञा दे दी।

अभी थोड़ा अंधकार बाकी था, कि महाराज ने कूच का नक्कारा बजवा दिया। इसके बाद एक ऊंची जगह पर खड़े होकर वे शुजा की हरकतें देखने लगे। क्षण भर ही में उन्हें मालूम हो गया कि शुजा ने अक्रमण बोल दिया। बस फिर क्या था। मिर्जा राजा ने अपने राजपूत सरदारों को संकेत किया। शुजा ने अपनी आशा के विपरीत शत्रु को पूरी मुस्तैदी और व्यवस्था से जमकर लड़ने को सन्नद्ध पाया। सुलेमान ने भी इस अवसर पर अपने दिल के हौंसले पूरे किए। खूब बहादुरी दिखाई। फलतः दोपहर से पहिले ही शाहजादे की सेना का व्यूह टूट गया। और कुछ ही देर में उसके पैर उखड़ गए। तथा शाहजादा शुजा हाथी पर बैठकर बुरी तरह भाग खड़ा हुआ। जोश में आकर सुलेमान शिकोह ने आगे बढ़कर भागती हुई सेना को काटना शुरू कर दिया। शाहजादे का तोपखाना, हाथी, ख़ीमें और बहुत सा खजाना लूट लिया गया। बहुत से सिपाही और सरदार कैदी भी बना लिए गए। जिनमें से चालीस प्रमुख चुन कर दारा के पास तुरन्त आगरे भेज दिए गए।

मिर्जा राजा चाहते तो शुजा को पकड़कर कैद भी कर सकते थे। परन्तु उन्होंने उसे चला जाने दिया। वे जानते थे कि बादशाह उसे छोड़ देगा और फिर एक नया दुश्मन खड़ा हो जायगा। उन्होंने दिलेर ख़ां को सब बातें समझा कर जल्द से जल्द आगरे लौटने की तैयारी कर दी। परन्तु सुलेमान ने इस तज़बीज़ को अस्वीकार कर दिया।

मिर्जा राजा ने शाहजादे को समझा कर कहा—

"बेहतर है कि अब हम जल्द से जल्द आगरे को लौट चलें, क्योंकि दरबार में बड़े बड़े काम सोचने और करने को हैं, बग़ावत के और मामलों को भी दबाना है।"

इस पर सुलेमान शिकोह ने उतावली से कहा—"उसकी फिक्र नहीं, उसके लिए मेरे वालिद नया लश्कर लेकर बरकन्दाज खां को भेज सकते हैं। हमें शुजा का पीछा करना और उसे गिरफ्तार करके उसकी ताकत को हमेशा के लिए खत्म कर देना बहुत ही जरूरी है।"

शाहजादे की यह जिद देख—मिर्जाराजा चुप हो गए। शाही लश्कर आगे बढ़ा। और बंगाल तक बढ़ा ही चला गया।

शुजा की भयभीत सेना स्थल मार्ग से पटने की ओर भागी। और शुजा नावों पर से गोलाबारी करता हुआ नदी के मार्ग से पीछे हटा। मुंगेर में उसने खाइयों और तोपखाने से सारा रास्ता रोक लिया। इस कारण सुलेमान को मुंगेर से पन्द्रह मील दक्षिण पच्छिम में सूरजगढ़ में अटक जाना पड़ा। उसने अपने सेना-पतियों से-मिर्जा राजा और दिलेर खां से सलाह मांगी। इस पर उन्होंने स्पष्ट कह दिया—अब आपही जैसा ठीक समझिए--वह कीजिए। सुलेमान को आगे बढ़ने की राह न मिली। और वह वहीं छावनी डाल कर पड़ गया। अब वापसी पर भी उसे आक्रमण का भय था। उसे अब मिर्जाराजा की नसीहत याद आ रही थी, परन्तु वह किंकर्त्तव्य-विमूढ़ पड़ा था। न आगे जा सकता था न पीछे लौट सकता था।

४२

दरबारे खिलवत

बादशाह को अब विश्वास हो गया कि चारों ओर से विनाश की घटाएं घिरी आ रहीं हैं। कब वे बरस पड़ेंगी, इसका ठिकाना नहीं। उसे प्रत्येक व्यक्ति पर संदेह और अविश्वास था और क्षण क्षण पर उसे यह आशंका हो रही थी कि उसे कहीं कोई ज़हर न दे दे। वह बहुत कमजोर हो गया था और अब ऐसे रोग-समूहों ने उसे घेर लिया था कि जिनसे बचने का कोई रास्ता ही न था। दारा से भी, अब वह उतना ही भय खाता था जितना अपने दूसरे पुत्रों से। दारा अन्धाधुन्ध फौजें भरती कर रहा था। ठठ के ठठ सैनिक नगर में धमाचौकड़ी मचाते फिर रहे थे। राजधानी में अंधेरगर्दी मची हुई थी। भांति भांति की अफवाहें शहर में फैली थीं। इस समय जितनी सेना आगरे में एकत्र हुई थी, उतनी अब से प्रथम मुग़ल राज्य के इतिहास में कभी नहीं हुई थी। एक लाख सवार, बीस हजार पैदल, तोपें और नौकर, घसियारे, मोची सब मिलकर चार लाख का लश्कर आगरे में एकत्र हो गया था। दारा ने सारा ख़जाना अपने हाथ में ले लिया था। दरबार का अजब हाल था। जो दरबारी विश्वासी थे वे सुलेमान शिकोह के साथ चले गए थे। जो लोग रह गए थे उनका कोई भरोसा न था। बादशाह दुःख, निराशा और भय से कांप रहा था। ज़हर के डर से वह दवा भी नहीं खाता था। प्रतिक्षण नई ख़बरें उसे सुनने को मिल रही थीं। उसने सुना—सुलेमान शिकोह ने शुजा की फौज लूटकर कुल सामान और चालीस सेनानायकों को कैद करके आगरे भेजा था। दारा ने उन सब कैदियों के हाथ

कटवा डाले थे। बादशाह यह सुनकर क्रोध से पागल हो रहा था। अब उसने सुना कि शाइस्त खां जो मालवे का सूबेदार था—वहां से उसे वापस बुलाकर कैद कर लिया गया है, और मुहम्मद अमीन—जो मीरजुमला का बेटा था, उसे भी कैद कर लिया है। और शीघ्र ही उनके कत्ल का परवाना जारी होने वाला है। अब बादशाह से न रहा गया। उसने बूढ़े शेर की भांति गर्ज कर कहा—अभी बादशाह हम ही हैं। उसने उसी बीमारी की अवस्था में दरबारे खिलवत का हुक्म दिया। आनन फानन दरबार की सब तैयारियां होने लगीं।

बादशाह अपने शाही कमरे के उस दरीचे में बैठा जो दरिया की तरफ था। और सेना तथा सर्व साधारण को सलाम करने का हुक्म दिया। चुने हुए दरबारी कमरे में हाथ बांधे खड़े थे। दारा चुपचाप तख्त के नीचे बैठा नीची निगाहों से बादशाह के दिली मनसूबों को भांपने की कोशिश कर रहा था। परन्तु उसकी आंखों में दृढ़ता और निर्णय के भाव थे। नजरों में गुस्सा भरा हुआ था। वह पिंजरे में बन्द घायल शेर की भांति लाचार हो रहा था।

थोड़ी देर सन्नाटा रहा। अन्त में बादशाह ने धीमे स्वर से दारा को लक्ष्य करके कहा—"शहर के क्या हाल-चाल हैं?"

दारा ने निर्लेप भाव से कहा—"शहर में तीन दिन से हड़ताल है, खाने पीने की चीजें मिलनी भी दुश्वार हैं, लोग बहुत डर रहे हैं। सबको अपनी अपनी जान के लाले पड़े हैं। साहूकारों ने हुण्डी परची का लेन देन रोक दिया है।"

"तो क्या इन कम्बख्तों ने यह समझ लिया है कि हम मर गए? हनौज हम जिन्दा हैं।"

"हुजूर की उम्र दराज, मगर हरचन्द शाही एलान किए जाते हैं, समझाया जाता है, मगर असर उल्टा होता है।"

"आखिर इसका सबब ?"

"वही, औरंगजेब का हौआ। जो माण्डो तक आ पहुँचा है। मगर हुजूर, मैं कहे देता हूँ कि मैं उसकी कुछ भी परवा नहीं करता, मैं उसे मच्छर की भांति पीस डालूंगा।"

"तुम समझ नहीं सकते। मुराद की जवांमर्दी और औरंगजेब की चालाकी गज़ब ढा देगी। एक ऐसी आग भड़केगी कि कुहराम मच जायगा।" इतना कह कर बादशाह ने व्याकुल होकर दोनों हाथ ऊपर उठाकर कहा—"या खुदा, हमने कभी यह नहीं सोचा था कि जीते जी हमें ये दिन देखने नसीब होंगे।" बादशाह का मुंह लटक गया।

दारा ने तैश में आकर कहा—"यह सब हुजूर की ही गलती का नतीजा है। हुजूर ही ने इस मुसीबत को न्यौता दिया है। अगर आप मीरजुमला को फौज देकर दखन न भेजते तो औरंगजेब की आज यह ताव न होती। खैर, मैं मीरजुमला और उसके लड़के मुहम्मद अमीन से समझ लूंगा और शाइस्त खां से भी, जो औरंगजेब का भेदिया है। मैं इन्हें कत्ल करा डालूंगा। और इनके क़बीले को कैद कर लूंगा और औरतों को बाजार में कसब कमाने के लिए मजबूर करूंगा।" वह क्रोध से दांत पीसने लगा। और सारा ही दरबारी अदब भूल बैठा।

बादशाह ने अपनी पथराई हुई आंखें पुत्र पर डालीं। उसका पीला चेहरा सफेद हो गया। उसने कहा—"तुमने शाइस्त खां को और मुहम्मद अमीन को कैद कर लिया है, इसके लिए हमारा हुक्म लेने और हमें इत्तला तक देने की जरूरत नहीं समझी। तुम जानते हो शाइस्त खां शाही रिश्तेदार है, इज्जतदार है, और जोरावर आदमी है। और मुहम्मद अमीन भी उस आदमी का बेटा है जिसकी ताकतें बहुत हैं। बेटे, इतने उतावले न बनो। समझ से काम लो। सुलेमान शिकोह ने कुछ कैदी भेजे थे ?"

"जी हां।"

"और तुमने उन सबके हाथ कटवा डाले ? पेट के लिए जान झोंकने वाले सिपाहियों पर यह जुल्म ?"

"उन्हें तम्बीह होनी जरूरी थी। जिससे लोग समझें कि तख्त के ख़िलाफ बगावत करने का ननीजा क्या होता है।"

"और तुमने अंधाधुंध फौजें भरती करके शहर के लोगों को डरा दिया है। तुम बगावत को दावत दे रहे हो। दारा-मेरे बेटे, याद रक्खो कि तुम खतरे से खेल रहे हो। तुम्हें यह भी याद रखना चाहिए कि अभी बादशाह हमीं हैं। हम तुम्हें हुक्म देते हैं कि शाइस्त खां और मुहम्मद अमीन को फौरन छोड़ दो। और अपने अमीरों को खुश करो और इन्साफ और दयानतदारी को हाथ से न जाने दो।"

दारा ने होठ काटे। उसने कुछ कहना चाहा—पर बादशाह ने लरज़ती ज़बान से कहा—"खामोश ! सुलेमान शिकोह को जल्द लौट आने का फर्मान भेज दो, याद रखो उसकी फौज की जल्द से जल्द जरूरत पड़ेगी।"

इतना कह कर बादशाह ने दारा के जवाब की अपेक्षा नहीं की। उधर से उन्होंने मुंह फेर लिया। और मारवाड़ के महाराज जसवन्त सिंह की ओर नज़र उठाई। महाराज जसवन्त सिंह, राव सुजान सिंह बुन्देला, अमर सिंह चन्द्रावत, राव रतन सिंह राठौर और राव राय सिंह सीसोदिया चुपचाप बादशाह की आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगे।

बादशाह ने कहा—'महाराज जसवन्त सिंह, आप अच्छी तरह जानते हैं कि हमने हमेशा आप के साथ भलाई की है। और आपके भाई अमर सिंह के हक पर आपको मारवाड़ का राजा तसलीम किया। अब हम आप से उम्मीद करते हैं कि तख्त के लिए आप अपनी ज़िम्मेदारी का खयाल रक्खेंगे।"

महाराज जसवन्त सिंह ने अपने साथियों की ओर छिपी नजर से देखा और कहा—"जहांपनाह, आप हम राजपूतों को तख्त का सच्चा वफादार पाएंगे।"

बादशाह ने अन्य राजपूत सरदारों की ओर नजर उठाई। सबने कहा—

"हम जहांपनाह और तख्त के सेवक हैं।"

"तो आप सब तलवार छू कर क़ौल हारिए।"

सबने तलवार की शपथ ली। इस पर बादशाह को तसल्ली हुई। उसने मन्द स्वर से कहा—"महाराज जसवन्त सिंह, हम इस वक्त आपके और आपके इन साथी राजपूत सरदारों के जिम्मे एक नाजुक और अहम काम सौंपते हैं। आपको मालूम है कि औरंगजेब बुरहान से दरिया पार कर चुका है। और मुराद ने सूरत लूटकर बग़ावत का झंडा बुलंद किया है। वे दोनों आगरे की तरफ बढ़े आ रहे हैं। दारा ने जंग की तैयारियां की हैं, लेकिन महाराज जसवन्त सिंह, अपना ही खून बहाना हमें पसन्द नहीं है। आप जाइए, औरंगजेब को रोकिए, मुराद को भी रोकिए। हमारा मकसद यह नहीं है कि आप उनसे लड़िए। मगर ये लोग शाही हुक्म को न मानकर अगर बढ़ते ही जांय तो फिर आप फौज से काम ले सकते हैं। हमारा पुराना नमकख़ार अमीर क़ासिम खां आपकी मदद पर आपके हमराह मय एक उम्दा तोपखाने के रहेगा।"

बादशाह ने अमीर क़ासिम खां की ओर देखा। उसने बढ़कर जमीन चूमी। और कहा—"जहांपनाह, गुलाम जान देकर भी तख्त की खिदमत करेगा।"

बादशाह संतुष्ट हुए। फिर उन्होंने भरे गले से दारा से कहा—"जाओ बेटे, दोनों सरदारों को मुनासिब लवाजमें और इज्जत के साथ रिहा कर दो।"

दारा चुपचाप आदाब बजा कर चल दिया।

बादशाह कुछ देर चुपचाप सिर नीचा किए बैठे रहे, फिर उन्होंने कहा—"महाराज आप जानते हैं कि हम किस कदर विश्वासघातियों और नमकहरामों से घिर गए हैं। बेटे तख्त के भूखे, बेटियां उनकी मददगार, वजीर खुदगर्ज, और अमीर लालची और दगाबाज़। अब हमें सिर्फ राजपूतों ही का भरोसा है। जिनका खून मेरी नसों में है।"

इतना कह कर बादशाह ने दोनों हाथों से मुंह ढांप लिया और वे बदहवास से मसनद पर लुढ़क गए।

अदब भंग करके महाराज जसवन्त सिंह आगे बढ़े, उन्होंने सहारा देकर बादशाह को सचेत किया और विविध आश्वासन दे बिदा हुए। दीनोदुनिया के बादशाह शाहजहां दुःख और निराशा में डूबे बैठे रहे।

४३

क्षिप्रा के तट पर

महाराज जसवन्त सिंह बहुत धीरे धीरे आगे बढ़े। जसवन्त सिंह की कमान में शाही सेना ने उज्जैन में पड़ाव डाला। औरंगजेब का क्या इरादा है, वह कहां तक आ पहुंचा है, उसकी सेना कैसी और कितनी है इस सम्बन्ध में इस राजपूत योद्धा को कुछ भी खबर न थी, न इसने इन बातों को जानने की चेष्टा ही की।

उज्जैन पहुंचकर उसने सुना—दोनों शाहज़ादे क्षिप्रा के उस पार छावनी डाले पड़े हैं। और उनके साथ चालीस हज़ार सवार और उम्दा तोपखाना भी है।

यह सुनते ही जसवन्त सिंह के हाथ पांव फूल गए। उसने उज्जैन के पन्द्रह मील दक्षिण पच्छिम धरमत के मैदान में पड़ाव

डाला। शाहज़ादों की सेना यहां से केवल एक ही कूच के अन्तर पर थी। जसवन्त सिंह को आशा थी कि शाही सेना की अवाई सुनकर ये बिगड़ैल शाहज़ादे भाग खड़े होंगे। और उसे कुछ भी न करना होगा। परन्तु अब उसे यह स्पष्ट दीख पड़ने लगा कि युद्ध अनिवार्य है। जसवन्त सिंह को बादशाह का यह आदेश था कि बिलकुल विवश होकर ही शाहज़ादों से लड़ाई की जाय। इसलिए वह कुछ भी निर्णय न कर सकता था। परन्तु औरंगजेब एक दृढ़-निश्चयी पुरुष था। शाही सेना में अनेक परस्पर विरोधी दल थे। राजपूतों की विभिन्न विभिन्न शाखाओं के पृथक पृथक दल थे। उनमें अपनी खानदानी वैरभाव की भावना ऐसी थी कि ये दल एक सेनापति की आधीनता में लड़ने को कभी तैयार न होते थे। सभी को अपनी अपनी जाति और वंश का अभिमान था। यह तो हुआ राजपूती सैनिकों का भीतरी हाल। उधर राजपूत और मुग़ल सैनिक भी एक दूसरे को द्वेष और घृणा से देखते थे। हिन्दू और मुसलमान सैनिकों में भी मतैक्य न था, न सारी शाही फौज ही एक सेनापति के आधीन थी। क़ासिम खां को जसवन्त सिंह की सहायता करने का हुक्म था—उसके आधीन लड़ने का नहीं। इन सब बातों के अतिरिक्त अनेक मुसलमान अधिकारी गुप्त रूप से औरंगजेब से मिल गए थे। खासकर क़ासिम खां और उसके साथियों ने तो विश्वासघात करने का पूरा ही इरादा कर लिया था। इसलिए इस युद्ध का पूरा भार राजपूत सेना ही पर पड़ता था।

दुर्भाग्य से महाराज जसवन्त सिंह अच्छे सेनानायक भी न थे। वे केवल एक वीर योद्धा थे। औरंगजेब जैसे विचक्षण पुरुष से उनकी बराबरी ही नहीं हो सकती थी। केवल यही नहीं कि उनकी योजनाएँ दोषपूर्ण थीं उन्हें सेना-संचालन का भी अच्छा अनुभव न था और वे एक असहनशील, जल्दबाज, असावधान और तुनुकमिज़ाज सेनानायक थे।

सबसे भारी भूल उन्होंने यह की थी कि युद्धभूमि का चुनाव उपयुक्त नहीं किया था। एक छोटे से मैदान में उन्होंने सकोड़कर सारी सेना को एकत्र कर लिया था। जहां उनके घुड़सवार न तो स्वतन्त्रतापूर्वक अपना कौशल दिखा सकते थे न तीव्रगति से घूम कर शत्रु पर अक्रमण ही कर सकते थे। साथ ही जिन टुकड़ियों को सहायता की आवश्यकता थी उन्हें समय पर सहायता भी न दे सकते थे। इसी का यह परिणाम हुआ कि युद्ध आरम्भ होने के बाद वह अपनी सेना पर नियन्त्रण न रख सके। केवल एक छोटे से दल ही तक उनका संचालन रह गया।

दूसरी भूल उन्होंने यह की कि उन्होंने अपने तोपखाने की उपयोगिता का विचार ही नहीं किया। यह उनकी भयानक गलती थी। इसके विरुद्ध औरंगजेब की सेना में मंझे हुए फ्रान्सीसी और अंग्रेज तोपची थे। जिन्होंने ऐसी गोलावारी की कि जसवन्त सिंह की सभी सेना की धज्जियां उड़ गईं। महाराज जसवन्त सिंह ने केवल तलवार से तोप का सामना करने का हास्यास्पद साहस किया था। जिसका परिणाम वही होना था जो हुआ।

औरंगजेब की सेना का संगठन और तोपखाना श्रेष्ठ तो था ही, उसकी सैन्य संख्या भी शाही सेना के बराबर थी।

जसवन्त सिंह ने रास्ते ही से बराबर औरंगजेब के पास दूत पर दूत भेजे थे,पर इनमें से एक भी लौट कर नहीं आ रहा था। यहां आकर उन्होंने देखा–दूत भेजना व्यर्थ है। उन्होंने क़ासिम ख़ां से सम्मति मांगी। परन्तु वह विश्वासघाती प्रथम ही औरंगजेब से मिल चुका था। उसने कहा—"महाराज, आप को बादशाह का हुक्म मालूम ही है। बस हमें तो यही उचित है कि चुपचाप बैठकर देखें कि ये बिगड़े दिल शाहज़ादे क्या करते हैं। अल्बत्त हम इन्हें इस पार नदी न उतरने देंगे। शाहजादे यदि ऐसी कोशिश करेंगे तो मेरी तोपें उसकी धज्जियां उड़ा देंगी। आप इत्मीनान

रखिए ।"

गर्मी कड़ी पड़ने लगी थी। अप्रेल का प्रारम्भ था। उज्जैन में क्षिप्रा नदी के किनारे उस पार एक पहाड़ की टेकड़ी पर औरंगजेब और मुराद की संयुक्त सेना ने डेरे डाले हुए थे। अभी उनकी सेना पूरी व्यवस्थित नहीं हो पाई थी। लम्बे पहाड़ी कूंच से थकी मांदी सेना तितर बितर हो गई थी। औरंगजेब ने सब ओर से चौकन्ना हो सेना की व्यवस्था की। उसने मुराद को अत्यन्त निकटता से आंखों में रखने के लिए अपने पुत्र सुलतान मुहम्मद को नियुक्त किया था। इस पर भी वह स्वयं आकर उसके निकट रह कर और बारम्बार जहांपनाह के नाम से पुकार कर तथा अनेक प्रकार से उसकी लल्लो-पत्तो करके उसे भरे पर चढ़ा रहा था।

अभी यह संयुक्त सैन्य पूरा विश्राम न कर पाई थी कि एक दिन सूर्य्योदय के साथ ही नदी के उस पार शाही लश्कर उसे दीख पड़ा। मुराद फ़ौरन घोड़े पर चढ़कर औरंगजेब के ख़ीमे पर आया। मुराद की आवाई सुनते ही औरंगजेब ने तपाक से बाहर निकल कर रक़ाब चूमी और आदर पूर्वक उसे ख़ीमे में ले जाकर ऊंची मसनद पर बैठाया। मुराद ने खुश होकर कहा—"आप देख रहे हैं कि अब जंग का वक्त आ गया। चलिए, दो दो हाथ हो जाय और देखा जाय कि कौन कितने पानी में है।"

औरंगजेब ने मुस्कुराते हुए और हाथ मलते हुए कहा—'अभी नहीं, अभी नहीं, मगर वह वक्त भी अब आ ही गया है, जब जहांपनाह की बहादुरी के जौहर देखने को मिलेंगे। फिलहाल तो हमें चुपचाप ही पड़े रहना चाहिए।'

'चुपचाप पड़े रहने से हासिल!'

'हुजूर, आप देखते ही हैं कि हमारी फौज थकी-मांदी और खस्ता हाल है। फिर तमाम फौज अभी पहुंच भी नहीं पाई। उसने कड़ा पहाड़ी रास्ता पार किया है, इसके सिवा एक और भी

मस्लहत है।'

'वह मस्लहत क्या है ?'

मुराद का प्रश्न सुनकर औरंगजेब ने मुस्कुरा कर कहा—'शाही फौज़ के क़ासिद इस अम्र की चिट्ठी लेकर आए थे कि हज़रत बादशाह सलामत ज़िन्दा हैं और हमें अपने इलाकों को लौट जाना चाहिऐ। इन्हें मैंने कत्ल करा डालना मुनासिब समझा। इसकी वजह यह थी कि यह महज़ दारा की कारस्तानी थी, और चिट्ठियां जाली थीं। जसवन्त सिंह को मैं जानता हूं। वह काबू में आने वाला नहीं। मगर कासिम खां ने हुजूर का खादिम होने का पक्का वादा किया है। उसने मेरी उस एक तरकीब पर भी अमल करने का इरादा ज़ाहिर कर दिया है जो पोशीदा तौर पर मैंने उसे सुझाई है। दरहकीकत बात यह है कि इन बेवकूफ सिपहसालारों को जो सिर्फ लड़ना या हुक्म बजा लाना ही जानते हैं इस बात का शानो गुमान भी नहीं, कि हुजूर इतनी जल्द यहां आ पहुँचेंगे। उन्होंने तो यह मंसूबे गांठ रखे थे कि वे क्षिप्रा के इस पार जहां हमारे खीमें गड़े हैं, शाही छावनी डालकर हमारी नाकेबन्दी कर देंगे। और हमें नदी पार करके आगे बढ़ने से कतई रोक देंगे—मगर बफज्ले खुदा मुझे कासिम खां के भेदियों से महाराज जसवन्त सिंह का यह इरादा मालूम हो गया और मैंने डबल कूच बोल कर इस किनारे पर कब्जा कर लिया।"

"और वह पोशीदा तज़वीज क्या है जिसे आप ने और कासिम खां ने अमल में लाने का इरादा किया है।" मुराद ने मालिकाना रुआब से पूछा। इसपर औरंगजेब ने उसके पास खसक कर धीमे स्वर में कहा—"बहुत मामूली हुजूर, और अभी आप उस तज़वीज की करामत देखेंगे। मुझे सब से ज्यादा डर इस बात का है कि कहीं राजा साहब नदी पार करके इधर हमारे लश्कर पर न आ पड़ें। ऐसा हुआ तो तबाही ही तबाही है, इस

वक्त सिर्फ आपकी जवांमर्दी और बहादुरी के जौहर ही से बेड़ा पार हो सकता है।"

मुराद ने तैश में आकर कहा—"मैं तो कहता हूँ दुश्मन पर टूट पड़ो, और उसके टुकड़े टुकड़े कर डालो।"

औरंगजेब मुस्कुरा दिया। उसने भेदभरी नज़र से मुराद की ओर देखकर कहा—"हरएक काम के तरीके हैं। हुजूर, मैंने जो बात सोची है वह अर्ज करता हूँ। वह देखिए उस पहाड़ी पर मैंने तोपखाना जमा दिया है। आप जानते ही हैं कि हमारे फ्रान्सीसी तोपची कैसे बहादुर गोलन्दाज़ हैं। बस आप अपनी बहादुर फ़ौज को लेकर दरिया अबर कर डालिए। ठीक उस पहाड़ी के नीचे से। मैंने रातों-रात जांच लिया है। दरिया में पानी बहुत कम है, मगर अबर करना आसान न समझिए—दोनों किनारों पर बीहड़ चट्टानें हैं, घुड़सवारों को और भारी तोपों को बहुत दिक्कत होगी। खैर ज्योंही आप दरिया में घोड़ा डालेंगे हमारी फ्रेन्च तोपें आग उगलने लगेंगी। आप देखते ही हैं कि वे बहुत ऊंची जगह पर हैं, वह जगह भी यहां से पौन मील पर है। आप चुपचाप वहां तक दुश्मन की नज़र बचाकर जंगल ही जंगल पहुंच सकते हैं—" यह कहकर औरंगजेब मुराद की ओर देखने लगा कि उसके चेहरे का भाव क्या है।

मुराद ने कहा—"मगर मैंने फ्रेन्च तोपचियों से बात की थी—उनका कहना है कि शाही तोपखाना बहुत मजबूत है और हमारी बनिस्बत उनके पास गोला-बारूद भी बहुत ज्यादा है। हम ज्यादा से ज्यादा आज तोपें चला सकते हैं। इसके बाद जब हमारी तोपों का गोला बारूद खत्म हो जायगा और हमारी सिर्फ आधे से भी कम फौज किसी तरह उसपार पहुंच जायगी जिसमें तोपखाना तो बिल्कुल ही नहीं होगा—तो क्या दुश्मन हमारी धज्जियां नहीं उड़ा देगा?"

"जी नहीं, हमारे फ्रेन्च तोपचियों की मेरी वह पोशीदा तज़वीज तो मालूम ही नहीं है।"

"मगर मैं वह जान लेना चाहता हूं।"

"हुजूर, शाही तोपखाना कासिम खां के हाथ में है, और वह आप का गुलाम है।"

"और राजा जसवन्त सिंह ?"

"तब सुनिए पूरी हकीकत। मेरे हुक्म से तमाम शाही तोपखाने का गोला-बारूद दरिया की रेती में गाड़ दिया गया है। सिर्फ तीन चार फायर करने लायक ही तोपचियों को बांटा गया है, शुरू में ज्योंही हुजूर की फौज दरिया पार करने की कोशिश करेगी, शाही फौज भी आप पर गोलाबारी करेगी, मगर बहुत आहिस्ता। क्योंकि मुझे मालूम हो चुका है कि इस फौज के अफसरों को जहांतक बने लड़ाई का मौका बचा जाने और हमलोगों को डरा धमका कर वापस कर देने का ही हुक्म है। वे सिर्फ सिर पर आ पड़ने पर ही लड़ेंगे। मगर हम लड़ेंगे डट कर। और इस फौज को तहस नहस कर डालेंगे। दरिया में पानी कम है। फाट भी ज्यादा नहीं है। शाही तोपखाना तीन चार फैर करके खामोश हो जायगा। और ज्योंही आप उस पार पहुँच कर तलवारें चमकाएँगे, कासिम खां की फौज भाग खड़ी होगी। अब रह गए जसवन्त सिंह और उनके राजपूत---वे कुल आठ हजार हैं, मगर लोहे के आदमी हैं। उन्हीं पर हुजूर को जवांमर्दी और बहादुरी का जौहर आजमाना है।"

मुराद ने तलवार खींचकर खूब जोश में कहा—"खुदा की कसम, जो एक भी काफिर जिन्दा बचकर मैदान से जा सके।"

"लेकिन हुजूर, वक्त का इन्तजार करना होगा।"

"कब तक ?"

"बस तीन घड़ी रात बीतने तक।"

"अच्छा तो मैं अब चला।" वह अकड़ कर खड़ा हो गया। औरंगजेब ने अदब से सिर झुका कर कहा—"खुदा हाफ़िज !"

मुराद घोड़े को एड़ देकर अपने खीमें की ओर दौड़ा। और औरंगजेब जल्दी जल्दी हाथ मलता और तेजी से कदम बढ़ाता हुआ खीमें में टहलने लगा। फिर उसने तुरन्त कई रुक्के सवारों को देकर उन्हें इधर उधर दौड़ाया।

तीन घड़ी रात बीतते बीतते औरंगजेब का तोपखाना गर्ज उठा। देखते ही देखते क्षिप्रा के दोनों किनारों पर आग ही आग धधक उठी।

४४

धरमत का युद्ध

तीज का चांद आकाश में नीचे को झुक रहा था। तीन पहर रात बीत चुकी थी। ठण्डी हवा के झोंके सोती हुई दुनिया पर प्यार की थपकियां लगा रहे थे। शाही लश्कर चुपचाप मीठी नींद में मस्त था कि एकाएक तोपों की गर्जना से शाही लश्कर उथल-पुथल होने लगा। जो जहां था जिरह वख्तर पहिनने लगा। घोड़े हिनहिनाने और हाथी चिघाड़ने लगे। महाराज जसवन्त सिंह ने खीमें से बाहर आकर देखा— दूर की पहाड़ी पर से चींटी दल की भांति औरंगजेब की सेना रेंगती हुई किनारे पर पानी में पैठ रही थी। कासिम खां भी घोड़ा दौड़ाते हुए वहीं आ पहुँचे। महाराजा ने अधीर होकर कहा—"खां साहेब, अब एक पल की भी देर करना भयानक है। आप फौरन अपनी तोपों पर बत्ती डालने का हुक्म दीजिए, और अपनी तमाम फौज को नदी के किनारे पर फैला दीजिए।" "अभी लीजिए" यह कह कर कासिम खां घोड़ा दौड़ाते हुए चले गए। महाराज ने अपनी तमाम राठौर सेना को सुसज्जित होने का हुक्म दिया। थोड़ी ही देर में शाही तोपें भी

आग उगलने लगीं। दिन निकलते-निकलते लड़ाई का घमासान मच गया। घायलों की चिल्लाहट, मारो-मारो का शब्द, घोड़ों और हाथियों की चिंघाड़ से कान के पर्दे फटने लगे। महाराज बड़ी बेचैनी से एक ऊँचे स्थान पर खड़े होकर लड़ाई का रंगढंग देखने लगे। सूरज की धूप में क्षिप्रा का जल चमक रहा था। एकाएक महाराज ने देखा—कासिम खां की तोपें चुप हो गई हैं और दुश्मन की फौजें निर्बाध इस पार फैलती जा रही हैं। इसी समय महाराज को सूचना मिली कि कासिम खां का गोला-बारूद खत्म हो चुका है। अभी महाराज परिस्थिति पर विचार कर ही रहे थे कि उन्होंने देखा कि शाही तोपें दुश्मनों के हाथ पड़ रही हैं। उनकी आंखों में भय व्याप गया। वे तलवार ऊंची कर अपने राठौरों को लेकर आगे बढ़े।

अपनी सेना का संगठन और व्यवस्था क़ायम रखते हुए औरंगजेब की सेना आगे बढ़ती चली आई थी। राजपूतों का दल एक स्थान पर ही सिमटा खड़ा था। औरंगजेब ने दांए-बांए और सामने—तीनों ओर से उन पर गोली दाग़ना शुरू कर दिया। राजपूतों को हिलने-डुलने की गुंजाइश ही न थी। इसलिए राजपूत पटापट मरने लगे। इसी समय मुकुन्द दास हाड़ा, दयालदास झाला, अर्जुन सिंह गौड़, सुजान सिंह सीसोदिया आदि वीरों की आधीनता में राजपूतों की सेना का अग्रभाग हाथोंहाथ युद्ध के लिए आगे को बढ़ा। इस दल में सरदारों के भिन्न-भिन्न दल सम्मिलित थे। वे सारी युद्ध योजना भूल "हर हर महादेव' कहते हुए वेग से शत्रुओं पर टूट पड़े। इस आक्रमण के वेग को झेला औरंगजेब के तोपख़ाने ने। परन्तु राजपूत जान पर खेल कर तोपख़ाने पर टूट पड़े। तोपख़ाने का प्रधान सरदार मुर्शिदकुली खां वीरतापूर्वक लड़ता हुआ खेत रहा। मुगल पंक्ति में गड़बड़ी फैल गई। राजपूत तोपों में होते हुए औरंगजेब की अगली पंक्ति

पर टूट पड़े। अब यहां बड़ा घमासान हाथोंहाथ युद्ध हुआ। राजपूत बिना कुछ आगा पीछा विचारे औरंगजेब की सेना के मध्य भाग तक घुसे चले गए। यहां औरंगजेब के चुने हुए सवारों ने मोर्चा सम्हाला। वे जम कर युद्ध करने लगे। यह युद्ध बड़ा भयंकर हुआ और इसमें राजपूतों की सारी शक्ति एकबारगी ही नष्ट हो गई।

क़ासिम खां की सेना ने इस समय जसवन्त सिंह की कुछ भी सहायता नहीं दी। राजपूतों के आकस्मिक वेग से जो औरंगजेब की सेना अलग पड़ गई थी उसने अब सुयोग देख कर संगठित हो पीछे से राजपूतों पर आक्रमण कर दिया। अब राजपूतों को अपनी भूल का ख्याल हुआ—उन्हें पीछे लौटना असम्भव हो गया। औरंगजेब ने परिस्थिति को समझ लिया, वह सेना के मध्य भाग में आ आगे को बढ़ा। उसके साथ ही दाएं बाएं पक्षों को लेकर शेख मीर और शफ़शिकन खां ने सामने औरंगजेब से लड़ती हुई राजपूतों की सेना को दोनों बगलों से जा घेरा। तीन ओर से गमकर राजपूत कट कट कर गिरने लगे। मुख्य फौज से उनका सम्बन्ध टूट गया। धीरे धीरे बड़ी वीरता से लड़ते हुए वे सब के सब खेत रहे।

इस समय तक सारे युद्धक्षेत्र में लड़ाई छिड़ चुकी थी। मुकुन्द दास के ये राजपूत जब आगे बढ़ गए और तोपों को पीछे छोड़ दिया तो औरंगजेब के तोपचियों ने ऊंची पहाड़ी पर तोपों को फिर चढ़ा कर जसवन्त सिंह की सेना के मध्य भाग पर गोलों की भारी मार करनी आरम्भ की।

अब शाही फौज एक सकड़े मार्ग पर सिकुड़ गई। इस मैदान के दोनों ओर गहरी खाइयां और दलदल थी। शाही फौज शीघ्रता से पलट भी न सकती थी। अब अपनी सेना के अग्रभाग को नष्ट होते और औरंगजेब को आगे बढ़ते देख जसवन्त सिंह की प्रधान

सेना के दाएं दल से रायसिंह सीसोदिया, सुजान सिंह बुन्देला, और अमरसिंह चन्द्रावत अपनी-अपनी सेना लेकर भाग खड़े हुए। इसी समय मुराद ने सेना लेकर जसवन्त सिंह के पड़ाव पर धावा बोल दिया। पड़ाव रणभूमि के निकट ही था। वहां का रक्षक देवी सिंह बुन्देला औरंगजेब से मिल गया। अब मुराद ने उलट कर राजपूतों के बाएं दल पर जोरदार आक्रमण किया। थोड़ी ही देर में इस भाग का शाही सेनापति इक़्तार खां मारा गया। और वह पक्ष टूट गया।

अब शाही सेना के दोनों ही पक्ष टूट गए। क़ासिम खां अभी तक दूर खड़ा अपनी सेना सहित तमाशा देख रहा था। अब जो औरंगजेब को उसने बढ़ते देखा—तो वह सेना समेत भाग खड़ा हुआ। अब जसवन्त सिंह की सेना को दाहिनी ओर से औरंगजेब, बांई ओर से मुराद और सामने से सफशिकन खां ने दबोच लिया। और राजपूत सेना को इस प्रकार घेर लिया जैसे सांप गेडुली मार कर शिकार को घेर लेता है। यहां राजा जसवन्त सिंह के प्राणत्याग का समय आ उपस्थित हुआ। वे कई घाव खा चुके थे। अब वे समय देख वीरगति पाने को आगे बढ़े। पर उनके साथियों ने घोड़े की लगाम पकड़ ली और उन्हें तलवारों की छांह में युद्ध भूमि से विमुख कर बाग मोड़ी। उन्होंने सीधे जोधपुर की राह ली। और जब वे घावों से भरपूर, भूख-प्यास और थकावट से चूर जोधपुर क़िले के द्वार पर पहुँचे, उनके साथ केवल पन्द्रह योद्धा थे।

महाराज जसवन्त सिंह के युद्धक्षेत्र त्यागने के बाद रतलाम के रतनसिंह राठौर शाही सेना के सेनापति बने। उनका अभिप्राय युद्ध को उलझाए रखना ही था जिससे कि भागने वालों का पीछा न किया जा सके। परन्तु शाही सेना में शीघ्र ही भगदड़ मच गई। और रतन सिंह ने अपने शरीर पर अस्सी घाव खा कर रणक्षेत्र में

प्राण त्यागे।

भागती शाही सेना का किसी ने पीछा नहीं किया। विजयी शाहज़ादों ने शाही पड़ावों पर अधिकार कर लिया। इनके हाथ सारी तोपें, तम्बू, हाथी, ख़ज़ाना, सब हाथ लगा। सैनिकों ने शाही फौज का सब सामान लूट लिया।

धरमत का यह युद्ध औरंगजेब के लिए एक शुभ शकुन हो गया। जसवन्त सिंह और कासिम खां के पीठ फेरते ही औरंगजेब की सेना ने जयनाद किया। औरंगजेब घोड़े से उतर पड़ा। और वहीं रणभूमि में खून से लतपथ लाशों और तड़पते हुए घायलों के बीच घुटनों के बल बैठ कर उसने शुक्राने की नमाज पढ़ी। धरमत का यह युद्ध औरंगजेब के लिए एक शुभ शकुन हो गया। अपनी पहली विजय की स्मृति में औरंगजेब ने उस युद्धस्थली में एक सराय बनवाने और बाग़ लगाने की आज्ञा दी। उसने बार-बार मुराद को बधाइयां देते हुए कहा—"हज़रत, फ़तह आप के क़दमों में है। इतमीनान रखिए कि दारा की फौज में तीस हजार सिपाही ऐसे हैं जो पलक मारते हमारे झंडे के नीचे आ जाएंगे।" मुराद गर्व और आनन्द से पागल हो गया। उसकी इच्छा थी कि वह बिना पलक मारे आगरे पर चढ़ दौड़े। परन्तु औरंगजेब ने कहा—"नहीं, नहीं, हमें यहीं मुकाम करना चाहिए। जिससे हमारी फौज ताज़ा दम हो जाय, और लड़ाई की कमी पूरी हो। इसके अलावा जो ख़त हमने दिल्ली को लिखे हैं उनके जवाब भी आ जांय और हमें मालूम हो जाय कि हमारी तजवीजें ठीक कारगर हो रही हैं फिर हम धीरे-धीरे आगे बढ़ेंगे।"

४५

सफेद-डाकू

पाठक उन दोनों योरोपियन यात्रियों को न भूले होंगे जिन्होंने सूरत की लूट में मुराद के फ्रान्सीसी तोपचियों मे मिल कर सूरत की लूट मे लूटमार करके गहरा माल मारा था। धरमत की लड़ाई में भी ये मुराद के तोपखाने में नौकर थे। परन्तु अब इनका इरादा आगरे पहुँच कर बादशाह की कोई बढ़िया नौकरी करने का हुआ। इन्होने शाही सेना के तोपचियों की अकर्मण्यता देखी थी और उनके संगी योरोपियन तोपचियों ने उनकी खूब खिल्ली उड़ाई थी। मालमत्ता भी इनके पास काफी था। इसलिए इन्होंने इन विद्रोही शाहज़ादों का साथ छोड़ कर शाही नौकरी करने का निर्णय किया था।

धरमत की लड़ाई में हार कर जब शाही सेना भागी तो उसमें बहुत से भगोड़े, चोर, उठाईगीरे और डाकू भी थे—जो केवल लूट के माल में हाथ मारने के लालच में शाही सेना में नौकर हो गए थे। ये दोनों योरोपियन भी इन्हीं डाकू भगोड़ों में मिल गए। और आगरे की राह चले।

गर्मी बहुत सख्त थी। जून का महीना था। आग बरस रही थी। ये योरोपियन उसके अभ्यस्त न थे। रास्ते में पानी का बहुत कष्ट था। मार्ग मे दो तीन अंग्रेज भगोड़े इनके साथ और हो लिए थे। वे शाही तोपचियों में नौकरी करते थे। अभी राजधानी एक दो दिन का मार्ग रह गया था कि गर्मी की भयानकता से लूह लग कर मोशिए क्वाड बीमार हो गया। उसका घोड़ा लटपटा कर मर गया और मोशिए क्वाड बेहोश हो कर गिर गया। उसका

युवक साथी डेविड बड़ा घबराया। वह सहयात्री अंग्रेजों की सहायता से उसे पास की एक सराय में ले आया।

यह एक बहुत बड़ी सराय थी। वह ईंटों और पत्थरों की बनी हुई थी। उसकी बनावट मजबूत—किले के माफ़क थी। सराय का सहन बहुत बड़ा था। उसमें बहुत से छायादार पेड़ थे। खाने-पीने और आवश्यकता की चीजों की अनेक दूकानें थीं। सराय के सहन में यात्रियों के हाथी, घोड़े, पालकी, बहली, ऊंट आदि सैकड़ों की संख्या में एकत्रित थे। एक हजार से भी अधिक यात्री इस समय यहां उपस्थित थे। जिनमें बहुत से धरमत की लड़ाई से भागे हुए भगोड़े थे। इन योरोपियन यात्रियों ने उसी सराय में आकर आश्रय लिया। वे बीमार को सराय में ले आए।

परन्तु सराय का मालिक इन गोरे चोट्टों को खूब जानता था। ये लोग शराब पी कर सारी रात शोर शप्पा मचाते—मार-पीट, गाली-गुफ़्ता करते और अन्त में बिना ही पैसा दिए चल देते थे। अतः उसने इन पर तनिक भी दया न की और स्थान देने से इन्कार कर दिया। इस पर डेविड ने कहा—

"लेकिन हमारे साथ एक मरीज़ है।"

"तो मैं क्या करूं? तुम देखते हो कि सब कोठरी-कमरे भर गए हैं। सब में इज्जतदार रईस और मनसबदार मुसाफिर ठहरे हैं। जगह ही नहीं है।"

"लेकिन हम भी इज्जतदार मुसाफिर हैं दोस्त।"

"पर जगह भी हो। बेहतर है तुम अगले पड़ाव तक चले जाओ, चार-पांच कोस ही तो है।"

"हम जा नहीं सकते, हमारा एक घोड़ा मर गया है। और हमारा आदमी बेहोश है।"

"मेरे पास केवल एक कमरा है, और उसका पेशगी किराया मुझे मिल चुका है।"

"हम भी पेशगी देने को राजी हैं।"

"मगर उस रईस ने एक कमरे की तीन पताका दी है।"

"हम चार पताका देने को राजी हैं, यह लो।"

"ओह, तब तो उसे इन्कार ही करना पड़ेगा, खैर आप अपने साथी को ले आइए—यहां आप को हकीम भी मिल सकता है। पर वह मूजी बड़ा लालची है। बिना दो पताका पेशगी लिए आयगा ही नहीं।"

डेविड ने उसे धन्यवाद दिया और दो पताका उसे और देकर कहा—"खुदा के लिए हकीम को जल्द बुलवा दो।"

सराय वाला बहुत खुश हो गया। पताका टेंट में खोंस वह एक ओर चला गया। और इन योरोपियनों ने सराय की उस गन्दी कोठरी में—जिसे वह अमीरों के ठहरने का कमरा बता रहा था—डेरा डाला।

हकीम बिल्कुल बागड़बिल्ला और बेतुका था. वह बड़ी भारी पगड़ी बांधे और लम्बा लबादा अंग पर डाले हुए था। रोगी की नब्ज पकड़ कर वह बड़ी देर तक अरबी फारसी में कुछ बड़बड़ाता रहा—फिर उसने एक दवा रोगी को खिलाई। और इत्मीनान से कहा कि सुबह तक इन्शा अल्ला ताला यह ठीक हो जायगा।

पर हकीम के जाते ही दवा के असर से रोगी को दस्त लगने लगे। डेविड ने घबरा कर हकीम से कहलवाया कि अब क्या करें, हकीम ने कहा—सब बीमारी निकल रही है। फिक्र न करो। सुबह तक सब ठीक ठीक हो जायगा।

लाचार बेचारा डेविड बैठा रहा। शाम को सराय के अफसर ने सराय के सब फाटक बन्द कर लिए। और सिपाहियों ने पुकार कर आवाज लगाई कि सब लोग अपना अपना सामान देख सम्हाल लें—और होशियार हो जांय। इन योरोपियन यात्रियों ने

रात काटने का प्रबन्ध किया। परन्तु अभी आधी रात भी नहीं हुई थी कि रोगी मर गया। अब तो डेविड बड़ा घबराया। उसके साथी अंग्रेज भी एक दूसरे का मुंह ताकने लगे। और सुबह दिन निकलने से प्रथम ही बेचारे डेविड को अकेला छोड़ कर चल खड़े हुए।

परन्तु फाटक खोलने से पहिले सिपाहियों ने फिर आवाज लगाई—कि फाटक खोला जा रहा है। अपना अपना सामान सम्हाल लेना। डेविड ने देखा तो उसका बहुत सा सामान उसके वे अंग्रेज सहयात्री ले गए थे। उसने दौड़ कर सराय के अफसर से कहा। अंग्रेज अभी सराय के फाटक ही पर थे—पकड़ लिए गए। और रस्सियों से बांध कर सहन में ला खड़े किए गए। सराय के अफसर ने शहर के हाकिम को इत्तला दी। हाकिम सिपाहियों का एक आधा दस्ता लेकर सराय में आ पहुँचा।

अभी डेविड अपने साथी को दफन करने की खटपट ही में पड़ा था, कि हाकिम के सिपाहियों ने उसका सब माल असबाब उठा कर उस पर सरकारी सील मुहर करना शुरू कर दिया। डेविड ने घबरा कर कहा—'इसके क्या माने ?'

"माने क्या ? सब माल बादशाह सलामत का।"

"यह कैसे ?"

"कानून है। जो आदमी लावारिस मर जाता है—उसके माल असबाब का मालिक बादशाह होता है।"

"लेकिन इस मरे हुए का वारिस तो मैं हूँ।"

"यह काज़ी के सामने साबित करो।"

"फिर, यह सारा सामान केवल मोशिए का ही नहीं है। मेरा भी है।"

"यह भी क़ाज़ी के सामने साबित करना पड़ेगा।"

"लेकिन भाई, हमें अभी लाश का भी तो इन्तजाम करना है।"

"लाश पर तो हमने सील मुहर नहीं लगाई है ?"

इतना कह कर हाकिम हंसता हुआ चला गया। और सिपाहियों ने उनका सारा माल उठा कर सराय की एक कोठरी में भर दिया और ताला लगा कर उस पर सील मुहर लगा दी, और चल दिए। यह देख रस्सियों से बंधे वे अंग्रेज चोर खिलखिला कर हंसने लगे।

बेचारा डेविड परेशान और हक्का बक्का खड़ा रह गया। अब न तो उसे कोई तसल्ली देने वाला था—न मददगार। उसने किसी तरह साथी को मिट्टी दी और अपने सामान की चिन्ता में दौड़-धूप करने लगा। वह कभी क़ाजी के पास जाता, कभी अफसर के। कभी किसी की ख़ुशामद करता, कभी किसी की।

वे चोर अंग्रेज भी अफसर की मुट्ठी गर्म करने से छूट गए। और उसी वक्त कहीं चले गए। इस घटना के तीसरे ही दिन वे दोनों अंग्रेज एक और अंग्रेज तोपची को लेकर सराय में आए। उनके साथ वह हाकिम और उसके सिपाही थे। आकर उन्होंने डेविड से साहेब सलामत की, और हंस हंस कर बातें करने लगे। इस समय वह देशी लिबास पहने हुए थे। डेविड ने पूछा—"अब आप के यहां आने का क्या मतलब है ?"

"हम लोग अपने मृत रिश्तेदार का माल असबाब लेने आए हैं।"

"वह तुम्हारा रिश्तेदार कब था ?"

"लेकिन तुम कौन हो ?"

"मैं मोशिए का वारिस हूँ।"

"यानी लड़के," वह अंग्रेज मुंह चिढ़ा कर हंसने लगा।

डेविड ने कहा—"क्या तुम्हारे पास कोई लिखित सबूत है।"

"तुम क्या क़ाजी हो कि हम तुम्हें सबूत दिखाएं ।" उन्होंने उसकी तरफ से मुंह फेर लिया और हाकिम ने सब सामान उनके हवाले कर दिया ।

"लेकिन मैं अपना माल इतनी आसानी से तुम्हें नहीं ले जाने दूँगा ।" यह कह कर डेविड ने पिस्तौल निकाल ली । इस पर हाकिम ने कहा—"झगड़ा करने से कोई लाभ नहीं । इनके पास शाही हुक्मनामा है । ये उसे आगरे ले जाएंगे । तुम भी चले जाओ और अपना हक साबित करो ।"

डेविड ने देखा कि इन बदमाशों से कोई चारा नहीं चलेगा । वह उन्हीं के साथ साथ चला। उसने कहा—"यह अच्छी धींगामुस्ती है कि जबर्दस्ती दूसरे का माल छीना जाता है ।"

इस पर एक अंग्रेज ने तलवार निकाल कर कहा—"चुपचाप चला जा लड़के, वरना हम तेरा यह घोड़ा भी छीन लेंगे ।"

लाचार डेविड चुपचाप उनके साथ चलता गया । तीन दिन बाद ये आगरे पहुँचे । और उन्होंने सब माल एक सराय में रख कर ताला लगा दिया । और हंसते हुए एक ओर को चल दिए । निरुपाय डेविड ने भी उसी की बराबर की कोठरी में डेरा जमाया ।

४६

पान का खर्चा

इन दोनों अंग्रेजों का नाम टामस और स्मिथ था । वास्तव में ये पूरे चोट्टे थे । ये दारा के तोपखाने में तोपची थे । लड़ाई के समय खूब शराब पीकर तोप चलाना और बाकी दिनों में शराब पीकर जुआ खेलना या जुआ चोरी, लूट-खसोट करना यही

इनका धन्धा था। ये वास्तव में क़ासिम खां के भगोड़े और बेईमान तोपची थे। परन्तु स्मिथ दारा का मुंहलगा था। दारा के पास ऐसे खुशामदी लोफरों की आवा जाही खूब रहती थी। वह विलायती शराब की बोतलें चुरा चुरा कर दारा की खिदमत में पेश किया करता था। इसी की मार्फत वह जार्जियाना लौंडी भी दारा ने खरीदी थी, जिसकी बराबर हसीन स्त्री शाही हरम में न थी। और जिसे बेगम बनाने पर दारा आमादा था और बादशाह से भी लड़ बैठा था। आप समझ सकते हैं कि शराब और औरत की रिश्वत जहां चल जाती है, वहां उचित अनुचित और छोटे बड़े का भेद नहीं रहता।

धरमत की लड़ाई के बाद भागते भागते जब उन्हें डेविड और उसके साथी के मालदार होने का पता लगा तभी वे लल्लो-पत्तो करके उसके दोस्त बन गए थे। अब, जब दैव योग से मोशिए मर गया—और चोरी करने में उन्हें सफलता नहीं मिली तो उन्होंने झटपट आगरा आकर दारा से अर्ज की कि मेरा एक रिश्तेदार हुजूर के दरबार में नौकरी करने के विचार से आ रहा था। दुर्भाग्य से उसे यह प्रतिष्ठा प्राप्त न हो सकी और एक सराय में पहुँच कर वह मर गया। वहां के हाकिम ने उसका सब माल असबाब रोक रखा है वह मुझे दिलाया जाय।

दारा ने कोई खोज जांच नहीं की और हुक्म दे दिया। जब टामस को स्मिथ की चालाकी का पता चला तो वह झगड़ने लगा कि आधा माल मुझे दो—वरना मैं भण्डा फोड़ दूँगा। लाचार स्मिथ को उसका मुंह बन्द करने के लिए उसे भी आधा हिस्सा देना पड़ा।

दैवयोग से यहां सराय में ही डेविड की मुलाकात एक फ्रान्सीसी सुनार से हो गई। यह सुनार भी दारा का सेवक था। और उसकी बेगमात के लिए जेवर बनाया करता था। इसका नाम

मेरियर था, और वह एक भला आदमी था। इसी ने उसे उन अंग्रेज चोरों का सारा हाल बता दिया। उन दिनों भी फ्रान्सीसी लोग अंग्रेज मात्र को अपना दुश्मन समझते—और जहां तक बनता उनका काट करते रहते थे। उसी ने डेविड को सलाह दी कि वह वजीरे आजम की खिदमत में जाकर अर्ज करे।

डेविड को तुर्की और अरबी भाषा का कुछ ज्ञान था। उसने अपना वेश तुर्कों जैसा बनाया। सर पर सुर्ख मखमल की पगड़ी पहनी, जिस पर नीले रंग का रेशमी फीता बांधा। हरे रंग की साटन गले में बांधी, शरीर पर सुर्ख जमीन की सुनहरी फूलदार जाकट पहनी। और वह निर्भय मुगल सल्तनत के वजीर के सामने जा पहुंचा। और संक्षेप से उसने सारा किस्सा बयान कर दिया।

सुन कर वजीरे आजम ने उस युवक को ऊपर से नीचे तक देखा—फिर कहा—"क्या वजह है कि तुमने यह पोशाक पहनी है। मुगलिया ढंग के कपड़े क्यों नहीं पहने?"

युवक ने कहा—"हुजूर, मैं तो रूस, फारस आदि देशों से यात्रा करता हुआ आ रहा हूँ। इसलिए मैं यही पोशाक पहनता हूँ। आगरे में अभी आया हूँ।"

वजीर ने फिर पूछा—"क्या तुम जानते हो कि शहनशाह के रूबरू हाजिर होने पर किस तरह कोर्निश बजा लाई जाती है।"

इस पर डेविड ने सीधे खड़े होकर अपने सिर को इतना झुकाया कि वह जमीन से छू गया। इसके बाद अपने दाहिने हाथ की पीठ को जमीन की तरफ कर के अपना सिर उठा लिया। और सीधा खड़ा हो गया। ऐसा ही उसने तीन बार किया। वजीर साहेब यह देख कर मुस्कुराने लगे। उन्होंने कहा—"दिल्ली में तुम नए आए हो मगर बादशाह सलामत को आदाब

बजा लाना ठीक तरीके पर जानते हो।"

वे शीघ्र ही शाही दरबार को चल दिए। साथ में डेविड को भी ले लिया। और उसे हिदायत की कि खबरदार रहना—जब बादशाह के सामने पहुँचो—इसी तरह आदाब बजाना।

उन्होंने अपने दो अमीरों को इस सम्बन्ध में समझा दिया कि वे संकेत पाने पर किस तरह उसे बादशाह के सम्मुख पेश करें।

यह लोग दरबार में पहुँचे। वजीरे आजम बादशाह के सामने चले गए। और गुलामों ने उसे बादशाह से पचास क़दम के फासले खड़ा कर दिया। और धीरे से कान में कहा—कि ज्योंही बादशाह सलामत तुम्हारी ओर देखें। उसी तरह आदाब बजा लाना।

डेविड ने देखा—कि वज़ीरे आजम ने जंगले के पास पहुँच कर उसी तरह बादशाह को सलाम किया—फिर तख्त के निकट पहुँच कर उसी भांति सलाम कर बादशाह से बात करने लगा। बात करते करते उसने हाथ उठा कर डेविड की ओर संकेत किया। बादशाह ने आंख उठा कर डेविड की तरफ देखा। और डेविड के साथ वाले अमीर ने उसे आदाब बजा लाने का संकेत किया। डेविड ने उसी भांति आदाब अर्ज किया। उस समय दरबार में बहुत अमीर उमरा खड़े थे। वजीर धीरे धीरे बादशाह से बात कर रहा था। तख्त के पास ही नीचे दारा एक सुनहरी चौकी पर बैठा था। बादशाह का तख्त जनाने महल के सामने था। तख्त अनेक प्रकार के रत्नों से जड़ा था। उसी पर बादशाह मसनद पर बैठा था। तख्त पर एक ज़रबफ्त का शामियाना सुनहरी स्तूनों पर तना था।

थोड़ी देर में अमीरों ने उसे चलने का संकेत किया। वे अमीर भी उसके साथ ही दरबार से बाहर आए, और सराय तक गए। डेविड ने वह कोठरी बताई जिसमें वह असबाब बन्द था। उन्होंने

उसकी मुहर-ताले तोड़ सब असबाब निकाल लिया। और अपने साथ उठा ले गए।

दूसरे दिन डेविड को वजीर साहेब ने अपने सामने हाजिर होने का हुक्म दिया। डेविड ने जाकर देखा – वह सारा माल असबाब वहां पड़ा है और वे दोनों चोर अंग्रेज हाथ पैर बंधे, हथकड़ी बेड़ी पहने वहीं खड़े हैं।

डेविड ने वजीर को उसी भांति सलाम किया जैसे बादशाह को सलाम किया था। वजीर ने मुस्कुरा कर कहा – "क्या यही तुम्हारा सामान है ?"

"जी हां हुजूर।"

"और तुम उन दोनों चोरों को भी पहचानते हो ?"

डेविड ने दोनों चोरों की ओर देखा और कहा—"यही दोनों हैं हुजूर।"

"देखो, इस सामान से कोई चीज गायब तो नहीं है ?"

डेविड ने देख कर कहा—"जी, सब ठीक है।"

वजीर ने तब डेविड को अपने पुत्र के पास बैठने का इशारा किया। कैदियों को वहां से ले जाने का संकेत किया। फिर डेविड से कहा—"क्या तुम मेरे यहां नौकरी करोगे ?"

"जी, मैं सोच कर अर्ज करूंगा।"

"खैर, तो तुम अपना सामान ले जाओ।" यह कह कर अपने गुलाम को इशारा किया। उन्होंने दस मुहर उसे देक कहा—'यह हुजूर वजीर साहेब ने तुम्हें पानों के खर्चे के लि इनायत की है।'

डेविड मुहर और सामान ले खुश खुश सराय में आया।

४७

वालिऐ अहद की सेवा में

मोशिए मौलियर बहुत खुश मिजाज आदमी थे। उनसे डेविड की शीघ्र ही गहरी दोस्ती हो गई। दोनों दोस्त साथ साथ शराब पीते और मजे उड़ाते थे। यद्यपि दोनों की उम्र में बहुत अन्तर था। परन्तु उनका सारा ही व्यवहार दोस्तों के समान था। मौलियर उसे अपने घर ले गया। और जब उसने पूछा कि क्या उसे वज़ीर की नौकरी करनी चाहिए। तो उसने कहा—'नहीं, मैं तुम्हें मौका पाते ही वालिऐ अहद दारा शिकोह के हुजूर में पेश करूंगा।'

यह अवसर शीघ्र ही मिल गया। तीन दिन के बाद ही दारा ने मोशिए मौलियर से पूछा—"क्या तुम जानते हो—वह फिरंगी नौजवान कुछ दिन हुए शाही तोपखाने के कप्तान और एक दूसरे अंग्रेज के विरुद्ध शिकायत लेकर दरबार में हाजिर हुआ था—कहां है ?"

"हुजूर, उसे नौजवान, और मददगारों से रहित समझ कर यह गुलाम अपने घर ले गया है। लड़का होनहार और भला मालूम होता है। वह चाहता है कि आगरे से जाने से पेश्तर मुगल शहनशाह और शाहज़ादा की----दौलतमन्दी और रुतबे को देख ले जिससे योरोप लौट कर वह उनकी शान-शौकत का ज़िक्र अपने देशवासियों से कर सके।"

"हम उसे देखना चाहते हैं, उसे अपने हमराह हमारे हुजूर में ले आओ।"

मोशिए ने जब यह सुसमाचार डेविड को दिया और कहा—"मजा करो दोस्त, हुजूर शाहजादा दारा शिकोह की खिदमत में जो योरोपियन रहते हैं वे खूब तनखाह पाते हैं। बस, देर न करो—

क्योंकि बादशाहों के इरादे पक्षियों के समान होते हैं कि जिन्हें यदि एक बार भी जाल से निकल जाने दिया जाय तो फिर काबू आना मुश्किल है।"

दूसरे ही दिन वह डेविड को लेकर शाहज़ादे की सेवा में पहुंचा। दारा को डेविड ने उसी भांति सलाम किया जिस भांति बादशाह को किया था। अठारह वर्ष के इस फिरंगी छोकड़े को निर्भय कोर्निश करते देख दारा ने मुस्कुरा कर कहा—'क्या तुम फारसी बोल सकते हो ?'

डेविड ने फारसी में जवाब दिया—"हुजूरे आला, मैं फारिस और तुर्किस्तान की भी सैर करके आ रहा हूँ।"

दारा ने एक खत निकाल कर उसे दिया और कहा—'क्या तुम इस खत का तर्जुमा फारसी में कर सकते हो ?'

खत, इंग्लेण्ड के बादशाह का एक खरीता था जो सुनहरी अक्षरों में लिखा था। डेविड ने उसका अभिप्राय फारसी में सुना दिया। सुनकर दारा संतुष्ट हुआ। उसने प्रसन्न मुद्रा से कहा—"यह खत किस चीज पर लिखा गया है, क्या यह कागज है ?"

"नहीं हुजूर, यह बछड़े का खास तौर पर बना हुआ चमड़ा है। योरोप के बादशाह ऐसे ही चमड़े पर शाही खत लिखते हैं। जिससे मौसम और सर्दी गर्मी का उस पर असर न हो।"

"क्या तुम अभी कुछ दिन दरबारे मुगलिया में रहना चाहते हो।"

"खुशी से", डेविड ने निर्भयता से कहा।

"क्या तुम हमारी खिदमत में रहना पसंद करोगे ?"

"पनाहे आलम, आप जैसे प्रसिद्ध मुगल तख्त के वालिऐ अहद की सेवा में रहना मेरा सौभाग्य होगा।"

इस जवाब से दारा खुश हो गया और उसे अपनी खास सेना में भरती कर लिया।

४८

बुरी खबर

धरमत की हार की ख़बर पहुंचते ही, आगरे में एकदम बदअमनी फैल गई। दरबार का रंग बिगड़ गया। बादशाह भय से पीला पड़ गया और दारा क्रोध से बौखला उठा। यद्यपि इस समय दारा ने बहुत भारी सेना का संग्रह कर लिया था। लड़ाई यदि सच्चे और ईमानदार सेनापतियों के हाथ में होती तो विजय निश्चय दारा की होती क्योंकि इस समय भी औरंगजेब के साथ चालीस हज़ार से ज्यादा फौज न थी। वह भी थकी-मांदी थी। परन्तु शोक की बात तो यह है कि सारे सरदार दारा से बदजन थे, कुछ औरंगजेब से मिल गए थे। किसी पर भी भरोसा नहीं किया जा सकता था। दारा के दोस्तों ने सलाह दी कि सुलेमान शिकोह के लौटने तक ठहरना चाहिए। पर जिद्दी दारा ने यह क़ीमती सलाह भी नहीं मानी। सुलेमान के साथ न केवल एक अच्छी सेना ही थी विश्वासी और वीर सरदार तथा सेनापति भी थे जिनसे बहुत लाभ उठाया जा सकता था। बादशाह ने यह भी चाहा था कि वह स्वयं युद्ध क्षेत्र में चले और सेना की कमान अपने हाथ में ले, यदि यह बात भी दारा स्वीकार कर लेता तो विजय की बहुत आशा थी, क्योंकि चाहे जो भी हो बादशाह के खिलाफ कोई अमीर तलवार न उठाता और सेना भी, जिसे यह विश्वास दिलाया गया था कि बादशाह सलामत मर गए हैं, बादशाह के खिलाफ नहीं लड़ती। परन्तु अदूरदर्शी दारा को उसे नष्ट करने वालों ने यह पट्टी पढ़ाई थी कि वह फौज की कमान अपने ही हाथ में रखे, जिस से फतह का सेहरा उसी के सिर बंधे। बादशाह यदि युद्ध

में गए तो उन्हीं का नाम होगा। यह बात दारा की समझ में आ गई। और जब बादशाह ने युद्ध में स्वयं चलने का विचार प्रगट किया तो दारा ने कहा—कि हुजूर ने यदि यह इरादा किया तो मैं यहीं गला काट कर जान दे दूंगा। बादशाह लाचार हो गया। उसने दोनों हाथ ऊपर उठाकर कहा—'या खुदा तेरी रज़ा।' और सेना तथा खजाने के सारे अख्तियार दारा को सौंप दिए।

दारा ने, जो किसी की सलाह नहीं मानी इसके भी कुछ कारण थे। वह जल्द से जल्द औरंगजेब से भिड़ जाना ही पसन्द करता था। पहिला कारण तो यह था कि वह सोचता था कि अभी तक बादशाह मेरी मुट्ठी में है, उस पर पूरा मेरा अधिकार है। दूसरे इस समय तक तमाम खजाने और आमदनी पर भी उसी का कब्जा था। तीसरे शाही सेना भी उस समय तक उसी के हाथ में थी। चौथे वह समझता था कि शुजा एकदम नष्ट हो चुका है और औरंगजेब तथा मुराद की हारी थकी सेना को तुरन्त दबोच डालना अब बहुत आसान है। उसका विश्वास था कि वे एक बार हारकर फिर किसी काम के न रहेंगे। और वह एकदम निष्कण्टक बन जायगा। बादशाह पर उसे विश्वास न था। उसे यह खटका था कि यदि बादशाह युद्धक्षेत्र में गए तो कौन जाने युद्ध हो ही नहीं और सन्धि हो जाय। और औरंगजेब तथा मुराद अपने अपने सूबों में लौटा दिए जायं। बादशाह तन्दुरुस्त हो जाय और सब राज काज अपने हाथ में ले ले। अपने बेटे सुलतान शिकोह की फतह से प्रसन्न होने के स्थान पर वह भयभीत हो गया था। वह सोचने लगा कि यदि उसके आने के बाद उसकी मदद से जीत हुई, तो न जाने बादशाह और दरबारियों की तारीफ से उसके हौसले किस क़दर बढ़ जायँ। और फिर उसके दिल में अपने बाप की प्रतिष्ठा और प्रेम स्थिर रहे या न रहे। उन दिनों मुगलों के शाही रक्त का ऐसा ही दौर-दौरा था।

इन सब बातों को विचार कर के उसने सेना को तुरन्त कूच करने की आज्ञा दे दी। जब वह बिदा होने की आज्ञा लेने बादशाह की सेवा में उपस्थित हुआ तो बूढ़ा बादशाह बेटे को गले लगाकर रोने लगा। उसने कहा—"खैर बेटा, तुमने अपनी मरज़ी का काम किया, खुदा इसमें तुम्हें सुर्खरू और कामियाब करे, परन्तु याद रखो कि यदि लड़ाई बिगड़ गई तो मुंह दिखाने योग्य न रहोगे।" दारा ने बादशाह की बातों का कोई जवाब नहीं दिया। और बादशाह को सलाम करके वह चुपचाप बाहर चला गया, और कूच बोल दिया। इस समय दारा के पास एक लाख सवार, बीस हज़ार पैदल, एक सौ मैदानी तोपें, जिनमें आठ से बारह पौन्ड का गोला पड़ता था और एक बीस पौन्ड के गोले वाली विलायती तोप भी थी। दो सौ उम्दा फरंगी तोपची उसके पास थे। इसके सिवा सजे हुए पांच सौ हाथी, और बहुत से ऊंट भी थे। इन ऊंटों पर कडाबीन लिए एक एक सवार था जिनमें डेढ़ दो छटाक तक की गोली पड़ती थी। पांच सौ हौदों वाले हाथी अलग थे। जिन पर दो दो बन्दूकची थे। इनके पास देसी बन्दूकें थीं। फौज में भीड़ भाड़ बहुत थी। बनिए जो रसद देते थे, सराफ जो रुपए पैसे देते तथा सिक्कों की अदल बदल करते थे, तथा अन्य बहुत से लोग-नौकर, चाकर, रंडी, भडुए थे जो लश्कर के साथ चल रहे थे।

१४ मई १६५८ को जब यह फौज आगरे से चली तो मीलों तक फौज ही फौज ही दीखती थी। छोटा बड़ा जो देखता उसीका कलेजा दहल जाता था। परन्तु यह आश्चर्य की बात थी कि किसी के मुंह से यह नहीं निकलता था कि दारा की फ़तह होगी। इसके भी कारण थे। जिन अमीरों की स्त्रियों की बादशाह ने बेहुर्मती की थी और दारा ने जिनका समय समय पर अपमान किया था वे सब मन में ख़ार खाए बैठे थे। और वे इस समय दिल से उसकी दुर्दशा देखकर खुश होना चाहते थे। सुलेमान शिकोह और

राजा जय सिंह उससे दूर थे, जो उसकी समय पर बड़ी मदद कर सकते थे। वीर महाराज जसवन्त सिंह की दुर्दशा हो ही चुकी थी। जो नई भरती की गई थी उसमें कसाई, नाई, लुहार, बढ़ई, दर्जी, और आवारे ही अधिक थे। जिन्होंने न कभी हाथियार देखे थे न लड़ाई का मैदान। इस प्रकार यह फौज दुश्मन पर रुआब तो डालती थी परन्तु वह एक मुस्तैद और उम्दा फौज न थी। इसके सिवा तीस हज़ार चुनी हुई सेना बादशाह ने किले की रक्षा के लिए अपने आधीन रख ली थी।

जब दारा अपने सजे हुए विशाल हाथी पर सवार होने लगा तो उसने अमीरों की ओर देखकर कहा—'गरीब माफ़-मगरूर मर्ग।"

इस पर उसके साथ के सरदारों ने कहा—"इन्शा अल्ला-ताला।"

दारा के हाथी की सुनहरी अम्बारी धूप में सूर्य की भांति चमक रही थी। उसके चारों ओर राजपूत वीरों के रिसाले थे। इसके बाद वे मस्त हाथी थे जिनकी सूंड़ों में जंजीरें और दांतों पर सोने चांदी के हल्के जड़े थे, जिनके सामने छल्लों में नंगी तलवारें लटक रही थीं।

सबसे आगे इलम बरदार हाथी था। जिसका महाबत ढाल तलवार से सुसज्जित था।

चार दिन कूच करने के बाद दारा ने धौलपुर के निकट पहुँच कर पड़ाव डाला। यहां जासूसों ने खबर दी कि अब दुश्मन नज़-दीक ही है। इसलिए अपने सरदारों और सिपहसालारों से सलाह करके उसने चम्बल नदी के सारे काम लायक घाटों को रोक कर अपने अधिकार में कर लिया और मुनासिब जगहों पर तोपें लगा दीं।

४६
चम्बल के तीर पर

औरंगजेब का लश्कर भी कूच पर कूच करता हुआ उज्जैन और ग्वालियर उलाँघ कर चम्बल के उस ओर आ धमका। लश्कर में उत्साह फैला हुआ था। वह एक विजय प्राप्त कर चुका था। औरंगजेब ने उसे बहुत से सब्ज़ बाग़ दिखाए थे। और छोटे से बड़े तक प्रत्येक सैनिक को पुरस्कृत किया था। उसकी सेना का प्रत्येक सिपाही लड़ने के लिए उतावला हो रहा था। अपने जासूसों के द्वारा उसे दारा की सेना का राई रत्ती हाल मालूम होता जाता था। उसने अपने तमाम जनरलों को बुला कर एक छोटी सी युद्ध-सभा की, उसमें उसने अपने सेनानायकों को सम्बोधन करके कहा—"अब आप को वह शानदार फ़तह हासिल करने का समय आ गया है जो तवारीख में अमर रहेगी। आप अब जंग के लिए तैयार रहिए। हम जितनी जल्दी करेंगे उतनी हमें सफलता मिलेगी। हमें आप की बहादुरी, दिलेरी, ईमानदारी और धीरज पर भरोसा है! दोस्तों, यकीनन फ़तह आप के क़दम चूमेगी।"

इसके बाद उसने प्रत्येक अफसर को उसके काम बताए। और बिदा किया। फिर वह बड़ी बेचैनी से अपने खीमें में टहलने लगा। मुराद ने उसे विचलित देख कर पूछा—"क्या कोई दिक्कत दर पेश है?"

"जी नहीं, मगर मैं एक ख़त के जवाब का मुन्तजिर हूँ, मुझे अचरज…"

औरंगजेब पूरी बात नहीं कर पाया कि उसे उसके दूध-भाई मीरबाबा के आने की इत्तला मिली। वह लपक कर खीमें के

दरवाजे तक गया। उतावली से कहा—"भाई जान, एक एक लहमा बड़ा कीमती है। कहो क्या ख़बर लाए।"

मीरबाबा ने मुस्कुरा कर ख़त औरंगजेब के आगे बढ़ा दिया। औरंगजेब मोमबत्ती के पास जाकर ख़त पढ़ने लगा। ख़त पढ़ते पढ़ते इसका चेहरा खिल उठा। उसने मुराद से कहा—"मुबारक हज़रत, हमारी सबसे बड़ी मुश्किल हल हो गई। यहां से १२ फर्लांग के फासले पर एक घाट है जहां दारा का पहरा नहीं है। वहां पानी भी घुटनों तक है। वहाँ के जमींदार ने हमारी मदद करना कबूल कर लिया है। रास्ता बीहड़ और विकट है। हमें बज़ाहिरा छावनी यहीं बनी रहने देनी होगी और आप अपनी उसी बहादुरी और दिलेरी से ८ हजार चुनीन्दा सवारों को ले जाकर इस तरह चुपचाप नदी पार उतर जाइए कि किसी को कानों-कान ख़बर न हो। बस, आप जिस घड़ी नदी के उस पार क़दम रखेंगे उसी घड़ी दारा की तक़दीर का सितारा डूब जायगा। जाइए जहांपनाह, आज रात ही हुजूर की और दारा की किस्मत का फैसला होना है।"

मुराद कुछ देर सक्ते की हालत में खड़ा रहा। औरंगजेब ने उसे आलिंगन किया—पेशानी चूमी और कहा—"खुदा हाफ़िज!"

मुराद चुपचाप खेमें से निकल गया। औरंगजेब देर तक उसकी ओर देखता रहा। फिर उसने एकदम उलट कर मीरबाबा की ओर देखा—लपक कर उसके दोनों कन्धे पकड़ उन्हें हिलाते हुए कहा—"जरूर तुम बहुत थक गए होगे—मगर भाई जान, आज तुम कतई आराम न करने पाओगे। जाओ, छावनी में जगह जगह आग जलवा दो, सिपाहियों से कह दो—रंगरेलियां मनाएं, गाएं, बजाएं मौज करें।" फिर धीरे से उसका हाथ दबा कर कहा—"जिससे दुश्मन समझें, कि हमारा लश्कर मौज बहार में मस्त है। जाओ भाईजान, अपना काम करो।"

मीरबाबा ने कहा—'जाता हूँ, मगर आप अब तो आराम कीजिए।"

"आराम, नहीं, नहीं, मुझे आज रात भर बहुत सी चिट्ठियां लिखनी हैं।"

और वह फिर अपने खीमें में इधर से उधर तेजी से टहलने लगा। मीरबाबा कुछ देर उसे देखता रहा फिर धीरे से चल दिया। औरंगजेब ने अपने खीमें में मुस्तैद पहरे बैठा दिए और जरूरी खत लिखने लगा।

५०

चम्बल के पार

धौलपुर पहुंच कर, चम्बल के सारे राह-घाट रोक कर तथा उनपर मजबूत चौकी बैठा कर दारा बहुत संतुष्ट हुआ। उसका उद्देश्य बिना लड़े औरंगजेब को चम्बल के उस पार रोक देने का था, जिससे सुलेमान शिकोह की सेना को आने का अवसर मिल जाय। पर औरंगजेब ने निर्बाध रूप से नदी पार कर ली।

औरंगजेब की सेना के नदी पार उतरने की खबर पाते ही दारा क्रोध से लरजने लगा। उसने तुरन्त स्वयं उसे रोकने जाने का इरादा किया। इस पर फौजदार इब्राहीम खां क़ज़फ़ मरदान ने आगे बढ़कर निवेदन किया "आलमपनाह, आप का खुद इस वक्त दुश्मन के सामने जाना मुनासिब नहीं। सिर्फ बारह हजार फौज का एक दस्ता इस गुलाम के साथ भेजना काफी है। जो औरंगजेब की थकी और बे तरतीब फौज को आनन फानन तबाह कर देगा।" परन्तु विश्वासघाती खलील खां ने फौरन मुंह बिचका कर कहा—"हुजूर, यह तो कुछ अच्छी तजवीज नहीं है, इससे वह इज्जत और नामवरी जो हुजूर को मिलनी चाहिए सिर्फ उस अफसर को

मिलेगी जो इस मुहिम पर जायगा। इसके अलावा फौज से इस वक्त बारह हज़ार सवारों का दस्ता अलग कर देना भी कुछ ठीक नहीं मालूम देता। गुलाम का ख्याल है कि अगर ऐसा किया गया तो जो फतह अब यक़ीनन समझी जाती है, घपले में पड़ जाएगी।"

इस पर दारा कुछ भी निर्णय न कर सका। और दूसरे दिन जब शाही सेना ने औरंगजेब के मुकाबिले कूच किया—तबतक उसकी लगभग सारी ही सेना इस पार उतर चुकी थी, और वह तेज़ी से जमुना के किनारे की ओर बढ़ रही थी।

मुराद की रक़ाब के साथ औरंगजेब के तीन मजबूत दस्ते सुयोग्य सेनानायकों की आधीनता में एक उम्दा तोपखाने सहित नदी के इस पार उतर गए। उसके बाद ही खूब सावधानी से औरंगजेब भी अपनी समूची सेना के साथ पार उतर आया। रास्ता बहुत खराब था। गर्मी बेहद थी। जानवर और सैनिक प्यास से तड़प रहे थे। घोड़े कदम कदम पर ठोकरें खाते थे। सिर्फ प्यास से तड़प कर पन्द्रह हज़ार आदमी राह में मर गए। पर चम्बल के इस पार उतरना बड़ी भारी सैनिक सफलता थी। औरंगजेब की इस एक ही चाल ने दारा के सारे मोर्चों को विफल बना दिया था—राह-घाट पर दारा ने जो बड़े बड़े मोर्चे बनाए थे, चौकियां बैठाई थीं, लम्बी चौड़ी खाई खोदकर तोपें जमाई थीं—वह सारी कारस्तानी कुछ भी काम न आई। आगरे को राह अब औरंगजेब के लिए खुली पड़ी थी।

दारा ने यह देखा तो क्रोध से पागल हो गया। वह क्या करे यह कुछ भी निर्णय न कर सका। कोई अच्छा सेनापति सलाहकार और विश्वासी युद्ध-कला विशारद आदमी उसके पास न था। वह बौखला कर चम्बल का किनारा छोड़ पीछे लौटा। भारी तोपें जो नदी पार लगाई थीं—वहीं छोड़ देनी पड़ीं। अब उसे

राजधानी की रक्षा की चिन्ता व्याकुल कर गई थी। पानी की बेहद कमी से जानवर और सैनिक बीच राह तड़प तड़प कर मर रहे थे, पर वह मरतों और सिसकतों को पीछे छोड़ ताबड़ तोड़ भागा जा रहा था। राह में जो गढ़े-तालाब मिल जाते—सिपाही और जानवर उन पर टूट पड़ते। आखिर वह समूमगढ़ के मैदान में आ पहुँचा, यहां से आगरा केवल दस मील रह गया था। वहां उसने औरंगजेब को पहिले ही से सामने डटे हुए देखा। दारा ने आगरे और औरंगजेब के बीच में जमुना किनारे अपना लश्कर डाला।

दारा अपनी सारी सेना को सम्हाल पड़ाव से निकला। लोगों ने समझा वह युद्ध करने जा रहा है। परन्तु शत्रु सेना को देखकर वह रुक गया। और यह जानने की चेष्टा करने लगा कि शत्रु का इरादा क्या है। दिन भर सेना को व्यर्थ घुमाकर वह सायंकाल में लौट आया। यह उसकी सबसे भयानक भूल थी। औरंगजेब अभी व्यवस्थित नहीं था, सेना उसकी बहुत कम थी। कड़ी धूप थी। भूखे प्यासे सैनिक परेशान हो रहे थे। दारा ने दिन भर अपने सैनिकों को कड़ी धूप में खड़े रख कर थका डाला। गर्मी में बेकार घन्टों खड़े खड़े सैनिक और हाथी घोड़े बेचैन हो गए। औरंगजेब को आराम करने को पूरी रात और समूचा दिन मिल गया।

इसी समय उसे बादशाह का पैग़ाम मिला। उसमें लिखा था "मेरे प्यारे फर्जन्द, मैं हमेशा तुम्हें प्यार करता रहा हूं, क्योंकि तुम मेरे सबसे बड़े और सबसे अधिक आज्ञाकारी पुत्र हो। मैं चाहता था कि तुम बिना किसी दिक्कत के बादशाह बन जाते, मगर न जाने खुदा को क्या मंजूर है। मैं चाहता था कि तुम्हें किले में छोड़ कर मैं मैदाने जंग में आता और देखता कि मेरे ही नमकहराम नौकर और सुयोग्य पुत्र कैसे मेरा मुकाबिला करते हैं। मगर तुमने मेरे बुढ़ापे और कमजोरी पर तरस खाकर खुद लड़ाई का खतरा

मोल लिया—और दिल न तोड़ने के लिए मैंने तुम्हारी मर्जी के मुताबिक ही किया। परन्तु बेटे, मैं तुम से फिर कहता हूं कि जब तक सुलेमान शिकोह न आ जाय---लड़ाई मत करना। अब चूंकि मैं कुछ नहीं कर सकता, सिर्फ खुदा से दुआ करता हूं कि ये आंखें तुम्हें शहनशाहे हिन्द होता देखें। खुदा हाफिज !"

परन्तु दारा की हालत बड़ी द्विविधा में थी। उसे सूचना मिली थी कि अभी औरंगजेब का तोपखाना नहीं आ पाया है, इसलिए वह चाहता था कि तुरन्त उस पर टूट पड़े। मगर विश्वासघाती सरदारों ने औरंगजेब से यह तय कर लिया था कि जब तक उसकी तैयारी पूरी नहीं हो जाती, वे दारा को लड़ने से रोकते रहेंगे। यह भी संकेत तय हो चुका था कि ज्योंही औरंगजेब की तैयारी मुकम्मिल हो जायगी तो औरंगजेब तीन फायर करेगा। जो रणभेरी का संकेत होगा। इसलिए सलाहकारों ने कहा—"हुजूर, अभी शुभ मुहूर्त में तीन दिन है, आज से चौथे दिन आपके सितारे इतने बुलन्द हैं कि आपकी फतह को दुनियां में कोई नहीं रोक सकता।" दारा भी मन में सुलेमान शिकोह के आने की प्रतीक्षा कर रहा था। इस प्रकार दारा लश्कर लिए चुपचाप और दो दिन तक दुश्मन के सामने पड़ा रहा। शोक की बात तो यह थी कि दारा ने आजतक कभी युद्ध की सूरत नहीं देखी थी। वह आगरे की कंचनियों और भांडों की सोहबत में, या खुशामदियों अथवा निरर्थक मज़हबी बकवाद बहस करने वाले पंडितों-मौलवियों और पादरियों के फेर में समय नष्ट करता रहा था, जो इतने बड़े राज्य के भावी अधिपति के लिए किसी काम के न थे। इन तीन मूल्यवान दिनों को उसने खो दिया और सेना का कोई भी प्रबन्ध न किया।

इस बीच दारा को फिर बादशाह का एक पत्र मिला। उसमें लिखा था—"सुलेमान शिकोह का इन्तजार करो और उसके आने

से पहिले लड़ाई मत छेड़ो, इसके सिवा जितना मुमकिन हो आगरे के और नजदीक आ जाओ।"

परन्तु अब यह सब असम्भव था। अब यदि वह पीछे हटता तो निश्चय औरंगजेब का लश्कर उसका पीछा करता और फौज को अपने सेनापतियों पर विश्वास न रहता। जिसका परिणाम यह होता कि उसकी सेना का बहुत सा भाग दुश्मन से मिल जाता। इसलिए सब बातों पर विचार कर उसने दिन निकलते ही शत्रु पर धावा बोल देने का निर्णय कर लिया। और बादशाह को जवाब दे दिया कि "इतमीनान रखिए, तीन दिन के भीतर गद्दारों को बांध कर हुजूर के रूबरू हाज़िर करूंगा। फिर जैसा मुनासिब समझिए उन्हें सज़ा तजवीज़ कीजिए।"

दूसरे दिन सूर्योदय होने से पूर्व ही दारा ने सेना को तैयार होने का आज्ञा दी। तमाम सेनापति सज-धज कर एकत्रित हो गए। परन्तु अभी तक औरंगजेब का संकेत प्राप्त नहीं हुआ था। दैवयोग से उस दिन सूर्योदय के साथ ही बूंदाबादी भी हो गई। बस विश्वासघातियों ने दारा से कह दिया कि "हुजूर, यह तो बड़ी बदशुगनी हो गई। गोया आसमान रो दिया। बेहतर है कि इस बुरी साइत को टाल दिया जाय और जंग कल शुरू हो। कल का दिन वह मुबारक़ दिन है जिस दिन खुदा ने रोशनी पैदा की थी। खुदा ने चाहा तो हुजूर के इकबाल का सितारा भी कल रोशन होगा।" और वहमी दारा ने फिर कमर खोल दी। वह दिन भी दारा ने नष्ट कर दिया। उसी दिन आधी रात को औरंगजेब के लश्कर ने तीनबार तोप दागी। जो उसकी जंग की मुकम्मिल तैयारी की सूचना थी। इस संकेत के साथ ही दारा की फौज में भी तैयारियां होने लगीं—और लोग कहने लगे—देखें, कल कैसा सूरज उगता है।

५१

समूम गढ़ का युद्ध

उस दिन २६ मई थी। सूर्योदय से प्रथम ही औरंगजेब अपने पूरे लश्कर के साथ धीरे-धीरे आगे को बढ़ा। उसने रातोंरात अपने लश्कर को व्यूह-बद्ध कर लिया था। अपनी सारी सेना के उसने पांच भाग किए। वह सेना के मध्य भाग में एक ऊंचे हाथी पर बैठा था। उसके गिर्द पन्द्रह हजार चुने हुए शरीर रक्षक सवार थे, जो सब तेगों, तीरकमान, बन्दूक और तलवारों से सुसज्जित थे। दाहिनी ओर उसके बेटे सुलतान मुहम्मद की कमान में पन्द्रह हजार वैसे ही जवांमर्द सवार थे, तथा उसकी सहायतार्थ औरंगजेब का दूधभाई मीरबाबा भी था, जो बड़ा साहसी, विश्वासी और मुस्तैद सिपाही था। और जिसे उसी समय खां बहादुर का खिताब दिया गया था। मुहम्मद सुलतान के दाहिनी ओर नजावत खां और दूसरे सरदारों के आधीन पन्द्रह हजार फौज का एक तीसरा दस्ता था। औरंगजेब के बाईं ओर मुराद बख्स पन्द्रह हजार वीर और सुसज्जित सवारों सहित मुक़ीम था। वह एक ऊंचे हाथी पर, जिसकी सोने की अम्बारी धूप में सूर्य की भांति चमचमा रही थी, बैठा था। उसकी बगल में उसका छै साल का छोटा बेटा भी था। पांचवां दस्ता मुराद के बाईं ओर पन्द्रह हजार सिपाहियों का सुयोग्य सेनापतियों की आधीनता मे था। इसके बाद मुराद के बाईं ओर खजाने से भरे हाथी, माल असबाब, गाड़ी, ऊंट, बैल आदि थे। और सबके पीछे तोपखाना था।

कोई पौन मील धीरे-धीरे चलने के बाद एक उजड़े हुए गांव के पास यह लश्कर पहुँचा। यह जगह जरा ऊंची थी। यहां औरंगजेब

ने सेना को रोक दिया और तोपखाना आगे लाने का हुक्म दिया। ऊंचे टीलों पर तोपें सजा दी गईं, उनके पीछे बन्दूकची और उनके पीछे ऊंट खड़े किए गए। इन ऊंटों पर चक्करदार तोपें थीं। इसके पीछे पूर्वोक्त व्यूहबद्ध सेना खड़ी हुई। सेना के दाएं बाएं कुछ हल्की तोपें गुप्त रीति से लगाई हुई थीं।

दारा ने अपना तमाम तोपखाना सामने एक पंक्ति में सुसज्जित किया था। उसने तोपों की गाड़ियों के पहियों में जंजीरें डलवा दी थीं कि जिससे दुश्मन उनका उल्लंघन कर के भीतर फौज में न घुस सके। इनके पीछे पचीस हजार पैदल बन्दूकचियों की एक क़तार खड़ी थी, जिनके लिए यह तोपखाना एक अच्छी खासी दीवार थी। इन बन्दूकचियों के साथ पांच सौ ऊंटों पर चक्करदार तोपें थीं, और इनके पीछे सशस्त्र हाथियों की पंक्ति थी। हाथियों के पीछे अट्ठाइस हजार सवार खड़े थे। सब से पीछे दारा एक बहुमूल्य सिंहल द्वीप के हाथी पर सवार था। उसके पीछे अनगिनत हाथी थे जिन पर नक्कारे, निशान और गाजे-बाजे के सामान थे। दारा के दाहिनी ओर राम सिंह राठौर अपने पन्द्रह हजार वीर सवारों के साथ था। उसके दाहिनी ओर खलीलुल्ला खां तीस हजार शाही सेना की कमान लिए मुस्तैद था। दारा के बाईं ओर वीर रुस्तम खां दकनी अपनी पन्द्रह हजार सेना के साथ था। और उसके बाईं ओर राव छत्रसाल पन्द्रह हजार राजपूत बुन्देलों के साथ था। सारी सेना की धज, प्रातःकाल की धूप में चमचमाते हथियारों, रंगबिरंगे झण्डों और निशानों से अत्यन्त शोभनीय मालूम पड़ रही थी।

इस प्रकार सेना का यह व्यूह आधुनिक रण-विद्या से बिल्कुल ही भिन्न एक ऐसे तरीके से रचा गया था कि एक दस्ते से दूसरा दस्ता सटा हुआ था। जैसे जंगल में वृक्ष एक पंक्ति में खड़े हों। इस समय दारा के पास पचास हजार सवार थे। राजपूत सैनिकों

और दारा के ईमानदार पक्षपातियों पर ही इस सेना की पूरी शक्ति निर्भर थी। पर दुर्भाग्य से उसकी आधी सेना ऐसी थी जिसपर बिल्कुल भरोसा नहीं किया जा सकता था। उसके अनेक मुखियों को औरंगजेब ने फोड़ लिया था, जिनमें खलीलुल्ला खां प्रमुख था, जिसकी कमान में तीस हजार सेना थी। उसके तोपची भी भरोसे के न थे और घोड़े और सामान ढोने वाले जानवर भी बेकार से थे।

परन्तु औरंगजेब के साथ अनुभवी साहसी वीरों का एक अच्छा जमाव था। उसके श्रेष्ठ तोपखाने को मीरजुमला के योरोपियन तोपची संचालन कर रहे थे। गोलाबारूद भी उसके पास काफी था। अनुशासन और संगठन भी उसका अपूर्व था।

औरंगजेब के आगे बढ़ते हुए लश्कर को देख कर भी दारा ने सेना को आगे नहीं बढ़ाया। और जब औरंगजेब ने सेना को एक जगह सुसज्जित करके खड़ा कर दिया—तब भी दारा आगे नहीं बढ़ा। दोनों सेनाएं अभी भी काफी फासले पर थीं और तोप की मार से परे थीं।

आठ बजे दारा ने तोपों पर बत्ती देने का हुक्म दिया और उसकी सारी तोपें एकदम आग उगलने लगीं—परन्तु यह भारी मूर्खता थी। तोपों की यह बाढ़ व्यर्थ जा रही थी। गोले दुश्मन तक न पहुँच कर खेतों में गिर रहे थे। गोला-बारूद व्यर्थ नष्ट हो रहा था। परन्तु तोपों की बाढ़ जारी थी। उनकी गर्जना से कानों के पर्दे फटे पड़ते थे। परन्तु उनसे क्या लाभ हो रहा है यह देखने वाला कोई न था।

इसके जवाब में औरंगजेब ने थोड़े से बमदार बम चलाए और चुप हो रहा। जब पहला फायर खतम हो गया तो औरंगजेब की सेना से एक तोप छोड़ी गई। यह विश्वासघातियों के लिए संकेत था। दारा ने फिर फायर की आज्ञा दी। उसकी समाप्ति पर औरंग-

जेब ने दो फायर किए, परन्तु जब दारा की तोपें दस निरर्थक फायर कर चुकीं तो औरंगजेब ने तीन तोपें एक दम चलाईं।

यह सकेत इस बात का था कि वह वहां से आगे बढ़ कर दारा पर आक्रमण नहीं करेगा—प्रत्युत वहीं जम कर मुक़ाबिला करेगा।

संकेत समझते ही विश्वासघातियों का सरदार खलीलुल्ला खां घोड़ा दौड़ाता हुआ दारा के सामने आया और बारंबार कोर्निश करता हुआ बोला—"हज़रत, फ़तह मुबारक, हमने बिना एक बूंद अपने सिपाहियों का खून बहाए अपनी तोपों से दुश्मन के एक भारी हिस्से को मिट्टी और खून के नीचे सुला दिया है। दुश्मन में मुक़ाबिले का दम नहीं है। अब तो हुजूर बस ज़रा सी हिम्मत और दिलेरी दरकार है। तोपखाने के फायर जारी रखने की अब कुछ जरूरत नहीं। अब तो हमें आगे बढ़ कर दुश्मन पर एकदम हमला बोल देना चाहिए।"

अफसोस, दारा इस विश्वासघाती के दावपेंच समझने की योग्यता नहीं रखता था। उसने अब से प्रथम कभी युद्ध का मैदान भी नहीं देखा था।

उसने तुरन्त तोपों का फ़ायर बन्द कर देने की आज्ञा दी और सेनापति रुस्तम को बुलाकर उसकी राय मांगी।

रुस्तम खां एक वीर और सच्चा सेनापति था। उसने कहा—"हुजूर, यह तजवीज़ निहायत खतरनाक है। बेहतर यही है कि हम इस बात की बाट देखें कि दुश्मन हम पर हमला करे। हमारी फौज मुस्तैद और मुसल्लिल है। जब दुश्मन चढ़ कर आएगा, हम पूरी ताक़त से उसका मुकाबिला करेंगे और उसे तहस नहस कर डालेंगे।"

परन्तु इस सही और बहुमूल्य सम्मति का मज़ाक उड़ाते हुए खलीलुल्ला खां ने कहा—"मुझे रुस्तम खां जैसे बहादुर सिपहसा-

लार से यह उम्मीद न थी कि वह अपने मालिक को ठीक उस वक़्त—जब कि फ़तह उसके नजदीक है, ऐसी बुज़दिलाना राय देगा। मैंने सैकड़ों लड़ाइयां देखी हैं। हमले की इन्तज़ारी करना क्या माने ? अजी, जब हमारी तोपों ने दुश्मन की फौज को पायमाल कर दिया है तो फिर क्या वजह कि हम डटे हुए यहां खड़े रहें और आगे बढ़ कर उसे न खदेड़ें।"

दारा ने फिर रुस्तम का एक शब्द भी नहीं सुना। उसने उसे अपने दस्ते को लेकर आक्रमण का हुक्म दिया और तोपों की जंजीरें खोल दीं। स्वामी की आज्ञा पाकर रुस्तम खां बाएं पक्ष पर खड़ी अपनी सेना को लेकर नंगी तलवारें लेकर शत्रु पर टूट पड़ा। इस आक्रमण का करारा मुक़ाबिला औरंगजेब की बन्दूकची सेना ने, जिसका सरदार शफ़शिकन खां था, किया। यह अवरोध ऐसा करारा था कि रुस्तम बहुत कोशिश करने पर भी औरंगजेब की तोपों तक न पहुंच सका। अब अवसर देख साहसी रुस्तम खां दाहिनी ओर को मुड़ा और मध्य भाग में अवस्थित औरंगजेब पर झपटा। यह देख औरंगजेब की दाहिनी बाजू के रक्षक बहादुर खां ने रुस्तम की राह रोक ली। बहुत घमासान द्वन्द्व युद्ध हुआ और बहादुर खां घायल होकर गिरा। इसपर इस्लाम खां और शेख मीर उसकी सहायता को दौड़ पड़े। अब रुस्तम खां भारी विरोध में घिर गया। वह घायल भी हो गया था, थक भी गया था। फिर भी वह अपने दस बारह वीरों के साथ तलवार से राह बनाता दुश्मन की सेना के मध्य भाग में घुसता चला गया और वहीं खेत रहा। बचे हुए घायल और थके हुए सैनिक सिपर शिकोह के साथ पीछे लौटे।

इस समय औरंगजेब के बाएं पक्ष में घनघोर युद्ध मचा हुआ था। वहां छत्रसाल हाड़ा के नेतृत्व में शाही सेना पूरी ताकत से मुराद को दबोच रही थी। राव छत्रसाल चाहते थे कि मुराद और औरंगजेब की सेना में दरार पड़ जाय।

वह चुने हुए राजपूतों को ले तलवारें चमकाता हुआ तीर की भांति दुश्मन की फौज के मध्य भाग तक धंसता चला गया और औरंगजेब पर टूट पड़ा। मुराद और औरंगजेब के बीच दरार पड़ गई। परन्तु औरंगजेब के शरीर रक्षकों ने छाती की दीवार अड़ा कर राजपूतों को रोका। राजपूतों की उन वीरों के सामने एक न चली। छत्रसाल हाड़ा अपने चिर शत्रु नजावत खां की छाती चीरने के लिए उसे ढूंढ़ रहा था। नजावत खां भी पास ही था—वह खून भरी तलवार लिए वीरों के दल बादल चीरता, छत्रसाल की आंखें निकालने को छटपटा रहा था। छत्रसाल का घोड़ा औरंगजेब के हाथी के पास पहुँचा ही था कि नजावत खां ने ललकार मारी। छत्रसाल ने उलट कर घोड़ा फेरा, इसी क्षण नजावत खां की आधी तलवार छत्रसाल की आंख में घुस गई। साथ ही छत्रसाल की तलवार नजावत खां की छाती में। दोनों वीर एक साथ ही खून में लतपथ गिरे और रेलपेल मचाते हुए हाथियों के पैरों तथा घोड़ों की टापों में कुचल कर चटनी हो गए। शेष राजपूत भी तिल तिल कट मरे।

५२

घमासान युद्ध

युद्ध के आरंभ ही में दारा सेना के मध्य में अपनी जगह छोड़कर रुस्तम खां की मदद के लिए औरंगजेब की सेना के दाहिने पक्ष में घुस गया था। इससे भयानक गलती और क्या हो सकती थी। वह प्रधान सेनापति था और उसे समूची सेना पर संचालन और नियन्त्रण कायम रखना अवश्यक था—जिसका उसने तनिक विचार नहीं किया।

वह नक्कारे पर डंका बजाता हुआ दुश्मन के सामने बढ़ता चला गया, जहां तोपें विकराल मुँह किए उसके स्वागत की प्रतीक्षा

कर रही थीं। वह क्षण भर बाद ही आने वाले खतरे से बिलकुल ही अज्ञात था। वह सेना को बढ़ावा देता हुआ और सेनापतियों से वीरता की बातें करता हुआ बढ़ा चला जा रहा था। इस मूर्ख ने स्वयं आगे आकर अपने तोपखाने को गोलाबारी करने से रोक दिया था। यह साधारण हानि न थी।

दुश्मन की तोपें चुप थीं। परन्तु ज्योंही दारा की सेना उनकी मार में पहुँची वे एक साथ गर्ज उठीं। उनके साथ ही बन्दूकचियों की बन्दूकों और चक्करदार तोपों की बाढ़ ने दारा की बढ़ती हुई सेना को एकाएक ही भून डाला। सारी फ़ौज में एकदम भगदड़ मच गई। दारा ने अब अपने संकट को समझा। उसने तुरन्त तोपों को सामने लाने और बन्दूकचियों तथा फरंगियों को आगे आकर लड़ने का आदेश दिया, परन्तु अब समय चूक चुका था। और उसकी सारी सेना की तरतीब बिगड़ चुकी थी। सिपाही जिधर उनका मुँह उठे उधर ही भाग रहे थे। परन्तु दारा ने हिम्मत नहीं हारी। वह बड़ी बहादुरी से आगे बढ़ता गया। उसने हाथ का संकेत करके सेना को आगे बढ़ने को कहा—तोपें तो आग बरसा रही थीं, बन्दूक की गोलियां भून डाल रही थीं, और तीरों से आसमान पटा जा रहा था, परन्तु दारा हिम्मत करके अपने वीर साथियों के साथ आगे बढ़ता ही गया। उसने कहा—"बहादुरो, दुश्मन की तोपें छीन लो।" और वह अपने वीरों के साथ औरंगजेब की तोपों तक जा पहुँचा। अन्त में उसने तोपों पर कब्जा कर लिया और जबरदस्ती दुश्मन की फौज में घुस पड़ा। और ऊँटों, प्यादों तथा बन्दूकचियों को काटता मारता औरंगजेब के सामने तक जा पहुँचा।

खतरा सिर पर देखकर औरंगजेब घबराया नहीं। उसने अपने उस्ताद शेखमीर और दूसरे सेनापतियों को नई सेना देकर उस पर बगल से आक्रमण करने की आज्ञा दी। अब हाथा पाई,

तलवार और बर्छे चलने लगे। मरने वालों की चीख़-पुकार, जानवरों का चिंघाड़ना, घायलों का तड़पना, ग़र्दगुबार, गर्मी सबने मिलकर घनघोर युद्ध का भयानक रूप धारण कर लिया। दारा सब्र से अपने हाथी पर डटा निरन्तर हाथ से इशारा करके सेनापतियों को बढ़ावा दे रहा था। दुश्मन पीछे हटता जा रहा था और लाशों के ढेर लग रहे थे।

परन्तु इस युद्ध में भी एक बेतरतीबी थी। सिर्फ वे ही सिपाही लड़ पाते थे जो आगे होते थे। यद्यपि तीरंदाज़ बड़ी फुर्ती से तीर फेंक रहे थे, और आसमान तीरों से पटा हुआ था परन्तु ये तीर सब व्यर्थ जाते थे, शायद दस तीरों में एक तीर शत्रु को घायल करता था। दारा ने स्वयं इतने तीर बरसाए थे कि उसका तरकस खाली हो गया था।

औरंगजेब दूर नहीं था। वह हाथी पर बैठा अपने लोगों को उत्साहित कर रहा था। पर इसका कुछ भी परिणाम नहीं हो रहा था, लोग भाग रहे थे। अब उसके पास सिर्फ पांच छै सौ सिपाही बचे थे। पर उसने निर्भय होकर प्रत्येक सरदार का नाम ले लेकर पुकारा–"भाइयों, खुदा पर भरोसा करो, दकन यहां से बहुत दूर है--मरो या फ़तह हासिल करो," इसके बाद उसने आज्ञा दी कि इसके हाथी के पैरों में जंजीर डाल दी जाय। और ऊँचे स्वर से बोल उठा कि या तो यहीं जान दूंगा या फ़तह हासिल करूंगा।

दारा ने सोचा कि अब औरंगजेब पर छापा मारा जाय। वास्तव में वह उसके लिए अलभ्य अवसर था। परन्तु भूमि पथरीली और ऊबड़ खाबड़ थी। शत्रु के सवार टीलों और मैदानों में गिरोह बांधे तीर बरसा रहे थे और उनके कारण तेजी से दारा बढ़ नहीं पा रहा था। उसकी सेना भी पंक्तिबद्ध नहीं थी। वास्तव में औरंगजेब लड़ने के योग्य नहीं रह गया था। परन्तु दुर्भाग्य दारा के साथ था। उसने सोचा ज़रा फौज को सुस्ताने का अवसर दे

दिया जाय और सेना को व्यवस्थित कर लिया जाय। इसलिए उसने सेना को रुकने की आज्ञा दे दी। उसकी यह आज्ञा ही उसके सर्वनाश का कारण बन गई। विजय के मद में मत्त उसके सैनिक एकाएक रुकने की आज्ञा सुनते ही हाथ रोककर आश्चर्य से परस्पर देखने लगे। और विजय का वह बड़ा भारी मुहूर्त टल गया।

५३

मुराद का संकट

दारा जब फिर से औरंगजेब पर आक्रमण करने का इरादा कर रहा था,तभी उसने देखा कि सेना के वाम पार्श्व में भारी हलचल मची है, अभी वह कुछ सोच भी न पाया था कि एक मुसाहिब हांफता हुआ यह सम्वाद लाया कि नजावत खां के हाथ से राव छत्रसाल मारे गए और उनकी फौज घिर गई है। दारा इस खबर को पूरी सुन भी न पाया था कि एक दूसरा सम्बाद मिला कि बहादुर रुस्तम खां, मुहम्मद सुलतान और मीरबाबा बहादुर खां के हाथों मारे गए, और उसकी सारी फौज भी भाग खड़ी हुई है।

दारा ने औरंगजेब पर छापा मारने का विचार त्याग दिया और बाईं ओर को रुख किया। भारी मार-काट करके मुहम्मद सुलतान और मीरबाबा ने बहादुर खां को अपने पीछे धकेल दिया। उनकी सेना मैदान छोड़ भाग खड़ी हुई। दारा ने इन शत्रुओं को पछाड़ कर पीठ फेरी ही थी कि उसे सूचना मिली, कि रामसिंह राठौर बड़ी वीरता से शत्रु सेना में घुस गया है और बुरी तरह घिर गया है। वह उधर बढ़ा। रामसिंह मुराद बख्स से लोहा ले रहा था। मुराद बख्स एक वीर योद्धा था—परन्तु रामसिंह भी एक बांका वीर था। दोनों वीर बढ़ बढ़ कर हाथ मार रहे थे। जिस रास्ते रामसिंह ने शत्रु की सेना को भंग कर प्रवेश किया था,

उस रास्ते लाशों के तूमार लगे थे। मुराद की जान उसके हाथों खतरे में आ गई थी। उसने मुराद की हरावल को तोड़ डाला था। तोपखाना छीन लिया था। और ललकारता तथा हवा में खून से भरी तलवार हिलाता वह मुराद के हाथी पर जा धमका था। एक ही वार में उसने महावत को मार गिराया था। और शाहजादे के चेहरे पर तीन घाव कर दिए थे। यदि मुराद बख्स फौलाद की अम्बारी में न होता तो उसके टुकड़े टुकड़े हो गए होते। मुराद यद्यपि वीर था, परन्तु इस समय वह बड़े दबाव में फंस गया था। उसके पास बहुत कम सेना बच रही थी और महावत मर चुका था। वह स्वयं ही अपने हाथी को रेल रहा था। साथ ही अपने छः वर्ष के नन्हें बालक की रक्षा भी कर रहा था, जिसे उसने इस युद्ध के मैदान में साथ रखने का खतरा उठाया था। बालक युद्ध को एक मनोरंजक खेल समझ रहा था, वह बारंबार हौदे से मुंह निकाल कर झांकता था। मुराद ने अपनी टांगों में उसकी गर्दन दबा ली और अपनी ढाल उसकी पीठ पर ढांप दी। फिर वह अपने भयानक शत्रु राम सिंह का विकट मुकाबिला करने लगा। जो उसके हौदे की रस्सियां काटने की चेष्टा कर रहा था। वीर राम सिंह अपने राजपूत योद्धाओं के साथ घोड़े से कूद पड़ा, और अपनी तलवारों और भालों से अम्बारी की रस्सियों को काटने लगा। हाथी घायल होकर चिंघाड़ने लगा। और मुराद को अब जीवन की कुछ भी आशा न रही। परन्तु उसने उसी समय साहस करके एक तीर मारा जो राम सिंह की छाती को चीर कर पार निकल गया। राम सिंह तुरन्त बेदम होकर हाथी के पैरों में लुढ़क गया, जिसे बौखलाए हुए हाथी ने कुचल डाला।

अपने वीर स्वामी को इस प्रकार मरते देख राजपूत बौखला उठे। वे जीने मरने की चिन्ता छोड़ मरने मारने लगे। दारा अभी वहां पहुँच भी न पाया था कि इस वीर के मरने की सूचना

मिली। वह तेजी से मुराद के हाथी की ओर लपका। यद्यपि वह औरंगजेब को पकड़ लेना चाहता था पर मुराद की गिरफ्तारी भी वह कम महत्व की नहीं समझता था। मुराद अभी भी राजपूतों से घिरा था और उसके बचने की कोई आशा न थी। उसकी सेना छिन्न-भिन्न हो चुकी थी।

परन्तु होनहार कुछ और ही था। इस समय खलीलुल्लाह खां, जो तीस हजार ताज़ा और उत्तम सवारों का नायक था और जो यदि ईमानदारी दिखाता तो हिन्दुस्तान की बादशाहत का नकशा ही कुछ और होता। परन्तु उसने अपनी सेना को बिल्कुल लड़ाई से अलग रखा। सेना लड़ने के लिए उतावली हो रही थी परन्तु वह उसे यही दम दिलासा दे रहा था कि अभी नहीं। अभी वक्त नहीं आया है। वह चुपचाप निकट ही खड़ा तमाशा देखता रहा।

अब ज्योंही उसने दारा को इस प्रकार मुराद पर घसारा करते देखा, वह विश्वासघाती घोड़ा दौड़ाता हुआ दारा के सामने आया और दस्तबस्ता होकर बोला—"मुबारकबाद हज़रत सलामत, अलहम्दुलिल्लाह, हुजूर को बखैर बसलामती फ़तह मुबारक हो। लेकिन हुजूर, यह तो फर्माएं कि ऐसे खतरनाक मौके पर, जब अम्बारी के सायबान से गोलियां और तीर पार हो रहे हैं, इतने बड़े हाथी पर क्यों सवार हैं। अगर खुदा न ख्वास्ता बेशुमार तीरों और गोलियों से कोई जिस्मे मुबारक को छू जाय तो हम लोगों को तो मुंह दिखाने का कहीं ठिकाना न रहेगा। खुदा के वास्ते जल्द उतरिए और घोड़े पर सवार हो लीजिए। अब रहा ही क्या है, सिर्फ चन्द भगोड़ों को चुस्ती और मुस्तैदी से सीधा करना और औरंगजेब को गिरफ्तार करना। मैं जानता हूं कि हुजूर इस वक्त थक चुके हैं मगर यही मौका है। वह औरंगजेब थोड़े से साथियों के साथ खड़ा है। आइए और मेरे ताज़ा दम रिसाले के दस्ते को लेकर, जिसे मैंने अभी तक लड़ने से रोक रखा है, धावा बोल

दीजिए ।"

गरीब दारा बिना सोचे समझे यह भारी भूल कर बैठा और हाथी से उतर कर घोड़े पर सवार हो गया। वह नहीं जानता था कि मैं हाथी से नहीं उतर रहा हूँ बल्के हिन्दुस्तान के तख्त को हाथ से गंवा रहा हूं।

५४

दारा का पलायन

छत्रसाल हाड़ा और रामसिंह राठौर की सहायता के लिए दारा की सारी सेना को दाहिनी ओर मुड़ना और भारी अवरोध का सामना करना पड़ा था। इस लम्बी और थकाने वाली आवा-जाही से सैनिक थक गए थे। तेज धूप में दम घोटने वाली आंधियां आ रही थीं और जलती हुई रेत उनके मुंह और आंखों में भर रही थी। प्यास बुझाने के लिए एक बूंद भी पानी उनके पास न था। इसी समय शाहज़ादा मुहम्मद सुलतान एक मज़बूत दस्ता लिए दारा पर आक्रमण करने के लिए आगे बढ़ा। इसके साथ ही दाहिनी ओर की विजयिनी सेना भी बढ़ी। सामने औरंगजेब की तोपें मुंह बाए तैयार खड़ी थीं। वास्तव में लड़ाई का अन्त आ ही चुका था। इसी समय दारा हाथी से उतर कर घोड़े पर सवार हुआ। परन्तु, हाथी के हौदे से दारा के उतरते ही फौज में कुहराम मच गया। पहले से लगे बंधे गद्दारों ने चिल्लाना शुरू कर दिया कि दारा मारा गया। दारा के हाथी के हौदे को सूना देख कर फौज को भी यही विश्वास हो गया। सारा लश्कर, आंधी में जैसे बादल भागते हैं, इधर उधर भागने लगा। बहुत लोग जिन्हें प्रथम ही से इस काम के लिए तैयार रखा हुआ था, चिल्ला चिल्ला कर यह कहते हुए भाग चले कि भागो भागो, औरंगजेब

नई फौज लिए आ रहा है।

दारा लश्कर को इस तरह भागते देख हैरान हो गया। अब उसे अपनी पहाड़ सी भूल समझ पड़ी और खलीलुल्लाह पर संदेह हुआ। उसने हड़बड़ा कर इधर उधर देखा और पूछा—'खलीलुल्लाह कहां है?'

परन्तु खलीलुल्लाह अब वहां कहां था! वह तो अपने लश्कर के साथ दौड़ा हुआ औरंगजेब की ओर जा रहा था। दारा अब सब समझ गया। वह क्रोध में पागल हो कर उस विश्वासघाती को गालियां देने लगा। वह बारंबार कहने लगा—'अब मैं उस कमीने कुत्ते और उसके बाल बच्चों को जीता न छोड़ूंगा।' परन्तु शोक, वह सब गुस्सा व्यर्थ था। सेना में अब पूरे तौर पर उसके मर जाने की अफ़वाह फैल चुकी थी और सारी ही फौज में भगदड़ मची हुई थी। लड़ाई शुरू हुए अभी सिर्फ तीन ही घंटे हुए थे, इतने ही में इतने बड़े महासाम्राज्य के भाग्य का फैसला हो गया। देखते ही देखते इतनी बड़ी बादशाहत उलट गई। यह मुगलों की मूर्खतापूर्ण अव्यवस्थित रणनीति का परिणाम था। चारों ओर घायल और मुर्दे सिपाही और हाथी, घोड़े, ऊंट पड़े थे। धूप चमक रही थी। दारा के मित्रों, सेनानायकों में बहुत कम ऐसे थे जो लड़ रहे थे। बड़े बड़े सरदार मारे जा चुके थे। बहुत भाग भूग चुके थे।

अब क्षण क्षण में उसके बन्दी हो जाने का भय था। इसलिए उसने बचे हुए शुभचिन्तक सरदारों की सम्मति से अविलम्ब युद्धस्थल को त्याग कर पलायन किया।

५५

भाग्य का हेर फेर

औरंगजेब को अपनी विजय की कुछ भी आशा नहीं रही थी। उसकी सारी सेना भाग चुकी थी। कठिनाई से सिर्फ पांच सौ आदमी उसके इर्दगिर्द रह गए थे। परन्तु वह जीवन-मरण की बाजी लगा चुका था। उसने खड़े खड़े मर जाने का निर्णय किया था। अब उसकी आशा खलीलुल्लाह पर निर्भर थी, जिसकी उसे क्षण क्षण प्रतीक्षा हो रही थी। वह दूर तक आंखें फाड़ फाड़ कर शत्रु की सेना की गतिविधि देख रहा था। चारों ओर तीर बरस रहे थे—गोलियां सनसनाती हुई उसके कान के पास से गुजर रही थीं, परन्तु उसको इन सब की कुछ भी परवा न थी।

एकाएक उसे शत्रु सेना में परिवर्त्तन के चिन्ह देख पड़े। उसने क्षणभर ही में देखा कि दारा का विशाल हाथी सूना है और क्षण भर बाद ही देखा कि शत्रु सेना में भगदड़ मच गई है, साथ ही उसने अकस्मात् अपने वाम पार्श्व में गर्द का एक बादल उठता देखा। पहले तो उसे भय हुआ कि उसे गिरफ्तार करने को शत्रु की सेना आ रही है। वह सिहर उठा। परन्तु वह अपने चारों ओर शत्रुओं को भागते देख रहा था। भय और आश्चर्य से उसकी आंखें फटी पड़ रही थीं।

उसने दोनों हाथ आकाश की ओर उठा कर अपनी सेना को ललकारना प्रारम्भ किया—उसके आस पास के वीर भी तलवारें ऊंची करके 'अल्ला हो अकबर' का नाद कर उठे। इसके क्षणभर बाद ही उसने खलीलुल्लाह खां को सेना के आगे आगे आते देखा,

वह हर्ष से चिल्ला उठा।

खलीलुल्लाह खां केआधीन जो तीस हजार सेना थी उसमें से इस समय केवल पांच हजार सेना इस विश्वासघात में उसका साथ दे सकी। अपने पांच हजार गद्दार साथियों को लेकर उसने औरंगजेब को आकर मुबारकबादी दी। औरंगजेब ने तुरन्त विजय के नक्कारे पर डंका पड़ने की आज्ञा दे दी। दिशाएं गूंज उठीं और औरंगजेब की भागती हुई सेना लौट पड़ी, मुराद भी आगे बढ़ कर औरंगजेब से आ मिला। मुबारकबादी की झड़ी लग गई और सेना जयजय नाद कर उठी।

खलीलुल्लाह खां ने अदब से आगे बढ़ कर औरंगजेब से कहा—"हज़रत सलामत को फ़तह मुबारक।" औरंगजेब ने मुस्कुरा कर मुराद की ओर देखा और कहा—"यह सब आला हज़रत की जवांमर्दी और दिलेरी का बाइस है जो तवारीख में हमेशा कायम रहेगा।" इसके बाद उसने खलीलुल्लाह खां को मुराद के सामने पेश करते हुए कहा—" यह अमीर तख्त का वह वफ़ादार खादिम है जिसकी सानी का जांनिसार शख्स मुगलिया सल्तनत में मिलना नामुमकिन है। आला हज़रत की फैयाजियों से भी यह पूरे तौर पर परिचित है। और बखूबी जानता है कि अपने बादशाह की खिदमत कैसे की जा सकती है।"

मुराद इन सब बातों को सुन कर खुश हो गया, फिर उसने खलीलुल्लाह खां की और खलीलुल्लाह खां ने मुराद की तारीफों के पुल बांधे। परन्तु औरंगजेब ने बीच ही में बात काट कर कहा—"हज़रत, अब सबसे जरूरी काम जो हमें करना है, वह दारा की गिरफ्तारी और उसकी छावनी पर कब्जा करना है।" उसने तुरन्त अपनी सेना को सुसज्जित किया। लड़ाई खत्म हो चुकी थी और वह अपनी विजयिनी (?) सेना को धीरे धीरे आगे बढ़ाता हुआ

दारा के खीमों तक जा पहुँचा। यहां आकर उसने आज्ञा दी कि खीमें चारों ओर से घेर लिए जांय और उनके गिर्दागिर्द की जमीन खुदवाकर देखी जाय कि कहीं उनके नीचे बारूद न भरा हो। अब जब उसे अच्छी तरह तसल्ली हो गई तो वह मुराद बख्स के साथ हाथियों से उतर कर दारा के खीमों में प्रविष्ट हुआ।

औरंगजेब ने मुराद को दारा की मसनद पर बैठाया और सामने खड़े होकर मुस्कुराते हुए कहा—"मुबारक जहांपनाह, यह हुजूर की बादशाहत का पहला दिन है।" इसके बाद उसने तीन बार कोर्निश की और हाथ बांधे अदब से एक तरफ खड़ा हो गया।

इसके बाद खलीलुल्लाह खां की बारी आई और उसे बहुत कुछ इनाम इक़राम के बाद वजीरे आज़म बना दिया गया।

इसके बाद औरंगजेब चुने हुए विश्वस्त सेवकों और सरदारों के साथ उस घमण्डी और मूर्ख भाई को मनसूबे बनाने और खुशामदियों की बातों में उलझने को छोड़ कर स्वयं आवश्यक व्यवस्था करने को अपनी छावनी में चला। सच पूछा जाय तो अभी उसपर भारी जिम्मेदारियां थीं। उसने कुछ अफसरों को दारा की छावनी और मालटाल, तोप, खीमें, खज़ाना, गोलाबारूद सब कुछ लूट पाट कर कब्जे में करने को नियत कर दिया। और बाकी सेना को उसने वहीं विश्राम करने और जश्न मनाने की आज्ञा दी। फिर वह अपने खीमें पर पूरे पहरे का प्रबन्ध करके अकेला उसमें चला गया। उसे अब बहुत से महत्त्वपूर्ण खत लिखने थे। और बहुत नाजुक मसलों पर ग़ौर करना था।

यह बादशाहों के भाग्य परिवर्त्तन करने वाली लड़ाई सिर्फ तीन घंटे ही में खत्म हो गई। शाही सेना की ओर के नौ राजपूत और उन्नीस मुसलमान उच्च पदाधिकारी मारे गए। बावन लड़ाइयों के विजेता बूंदी के छत्रसाल भी अपने भाई बन्दों समेत यहीं खेत रहे।

ईरानियों और उजबकों के विरुद्ध लड़े जाने वाले युद्धों का विजेता रुस्तम खां उर्फ फिरोज़ जंग भी इस युद्ध में काम आया। औरंगजेब की सेना का केवल एक उच्चाधिकारी मरा—आज़म खां—वह भी केवल गर्मी से बेहोश होकर। शाही फौज पूरी तरह बर्बाद हो गई। दारा के पास केवल कुछ खानदानी सेवक ही रह गए। वे उसे रणक्षेत्र से आगरे ले चले।

५६

आगरे में बदहवासी

उसी दिन तीसरे पहर एक फरंगी सवार बिल्कुल बदहवासी की हालत में आगरे में दाखिल हुआ। इसके तमाम कपड़े फट गए थे, और मुँह और बदन में कारिख और धूल भर गई थी, वह थकान, गर्मी, गर्द गुब्बार और भूख प्यास से अधमरा हो रहा रहा था, शहर के बीच में पहुँचते ही उसका घोड़ा बेदम होकर गिर पड़ा। घोड़े को गिरता देखते ही चारों ओर से ठठ के ठठ आदमी उसे घेर कर इकट्ठे हो गए। बाज़ार में भारी गुल गपाड़ा मच गया और आनन फानन बाज़ार में यह बात फैल गई कि दारा की हार हो गई। थोड़ी ही देर में लूट खसोट करने वाले धुनिये, जुलाहे, कसाई और भगोड़ों ने नगर में आग की भांति यह समाचार फैला दिया। देखते ही देखते बाज़ार बन्द हो गया। जिसका जिधर मुंह उठा वह उधर ही भाग निकला। प्रत्येक आदमी के चेहरे पर बदहवासी छाई थी और प्रत्येक व्यक्ति लड़ाई के हालात जानने को बेचैन था।

रात को नौ बजे दारा ने नगर में प्रवेश किया। जिससे सभी भयभीत हो गए। जो लोग लड़ाई से लौटे थे—थके हुए और पस्त

हाल थे। दारा भी विश्राम चाहता था। वह अपने महल में जाकर ज़मीन पर पड़ रहा। उसने एक शब्द भी किसी से नहीं कहा। वह किले में बादशाह के निकट भी नहीं जाना चाहता था। क्यों कि उसे बादशाह के वे तीखे शब्द याद थे जो उन्होंने दारा से युद्ध को चलते समय कहे थे।

परन्तु बादशाह का हृदय दारा की दुरवस्था की बात सुनकर द्रवित हो गया। उन्होंने अपने ख़ास ख्वाजासरा फहीम को उसके पास तसल्ली देने को भेजा और यह कहलाया—

"हम तुमको अब भी वैसा ही चाहते हैं। तुम्हारी मुसीबत ने हमारा दिल तोड़ दिया है। मगर नाउम्मीद मत हो, क्योंकि सुलेमान की फौज अभी तक ज्यों की त्यों बनी हुई है। हमारी राय है कि तुम फौरन देहली चले जाओ। और वहां अस्तबल से दो हजार घोड़े और हाथी-तथा ख़जाना अपने काबू कर लो, जिसका आज्ञा-पत्र हमने वहां के हाकिम के नाम भेज दिया है। मगर तुम्हें आगरे से दूर जाना मुनासिब नहीं है। तुम्हें ऐसी जगह मुक़ीम होना चाहिए, जहां हमारे पैग़ाम तुम्हें सहूलियत से मिलते रहें। हमें अब भी उम्मीद कामिल है कि औरंगजेब को काबू करके हम उसे सज़ा दे सकेंगे।"

ख्वाजासरा ने दारा को यह शाही पैग़ाम दिया तो भी दारा ने एक शब्द भी मुंह से नहीं कहा—वह चुपचाप धरती में पड़ा रहा। इसी बीच में बादशाह की तरफ से कई अमीर भी तसल्ली देने को आ पहुँचे।

बेगम जहांआरा ने भी दारा को अपनी तरफ़ से तसल्ली के पैग़ाम भेजे और कहलाया 'नाउम्मीद मत हो—तुम ज़रूर एक दिन तख्त पर बैठोगे।'

कुछ देर दारा चुपचाप जमीन में पड़ा रहकर सोचता रहा। वह शरीर और मन से मृतप्राय हो रहा था। उसने बादशाह को

पैग़ाम भेजा—'मैं अपना काला मुंह हुजूर को कैसे दिखा सकता हूँ। मेरे सामने लम्बा सफर है उसके लिए बिदाई की दुआ दीजिए। और इजाजत दीजिए कि यहां से मैं अपने सफर पर चल पड़ूं।" फिर उसने हुक्म दिया कि तमाम क़ीमती सामान बांध लिया जाय—और लाद लिया जाय। उसने जाने की तैयारी की। और तीन बेगमों, शाहज़ादी जानी बेगम और छोटे लड़के सिपह शिकोह तथा कुछ चुनी हुई बांदियों को साथ लेकर आधी रात के समय आगरे से दिल्ली की ओर कूच किया। इस समय उसके साथ सिर्फ पांच सौ सवार थे जिनमें बहुत से तो उसके घर के गुलाम और सेवक ही थे। बादशाह ने जो शाही ख़जाने से सोने की मुहरें लादकर उसके साथ भेजी थीं वह तथा अपने पास के हीरे जवाहरात और नगद रुपए आदि जो कुछ इस जल्दी में वह साथ ले सकता था ले लिए।

वह प्रतापी राजकुमार, आज सूर्योदय के समय तमाम भारतवर्ष का शहनशाह होने का स्वप्न देख रहा था और आज सुबह तक बड़े बड़े राजपुरुष जिसकी कृपाकोर के भिखारी थे—आज इस दीन दशा में घर से जा रहा था कि शत्रु को भी उस पर दया आ रही थी।

५७

आगरे में

आगरे पहुंचकर—नगर से दो मील दूर नूरमंजिल नामक एक बड़े बाग में औरंगजेब ने पड़ाव डाला। पहरे और जासूसों का पूरा प्रबन्ध करके उसने एक बार लश्कर पर गहरी दृष्टि डाली। और उसे जशन मनाने की आज्ञा देकर अपने फैलाए हुए जालों के ताने बाने पर विचार करने लगा।

सबसे पहिले—ज्योंही औरंगजेब को यह सूचना मिली कि दारा ने दिल्ली की ओर कूच किया है, उसने तुरन्त अपने साहसी और विश्वासी सरदार बहादुर खां की आधीनता में एक मजबूत फौज का दस्ता देकर उसके पीछे भेज दिया। और आज्ञा जारी कर दी कि दिल्ली आगरे के सब रास्तों पर चौकियां बैठा दो और कि कोई आदमी या कुछ भी सामान किसी भी रास्ते से दारा को न मिल पाए।

इसके बाद उसने बादशाह को एक खत लिखा—उसमें लिखा था—

"दारा शिकोह की कजराई और बेजा खयालात के बाइस ये जो वाक़यात पेश आए, उनके लिए औरंगजेब को बहुत ही रंज और अफसोस है। हुजूर की तबियत अब अच्छी होती जाती है, इसके लिए हुजूर की खिदमत में मुबारकवाद अर्ज करने और महज इस गरज से कि जो कुछ इर्शाद हो उसकी तामील की जाय, यह दास आगरे में आया है।"

यह खत उसने अपने खास ख्वाजासरा के द्वारा बादशाह के पास उसी समय रवाना कर दिया, साथ ही प्रेम और सम्मान सूचक सैकड़ों निशानात भी भेज दिए।

दूसरा पत्र उसने शाइस्त खां को लिखा। जो बादशाह का साला और उसका मामा तथा आगरे में उसका सबसे बड़ा भेदिया और शुभचिन्तक मित्र था। वह एक अत्यन्त चतुर, बुद्धिमान और शक्तिशाली दरबारी व्यक्ति था। उसे औरंगजेब ने लिखा—

"मुझे यह जानकर निहायत खुशी हो रही है जिस दारा ने आपके साथ हर दर्जे की कमीनी हरकतें की थीं और जिसे आप दिल से नफरत करते थे, उससे आप के इस सेवक ने पूरा बदला ले लिया है। अब आप उन सब जरूरी मसलों पर तैयारी

कर लीजिए जो आपको पोशीदा तौर पर पहिले ही बता दिए गए हैं। इसके बाद आप आगरे के कर्त्ता-धर्त्ता और मालिक हैं।"

यह खत रवाना कर देने के बाद वह कुछ देर तक चुपचाप कुछ सोचता रहा, फिर उसने एक और ख़त लिखा। यह खत उसने मीरजुमला को लिखा था—उसमें लिखा था "आपका मनचीता हो गया, दुश्मन पामाल हो गए। अब आपको मूंठ मूंठ कैद रहने की कोई जरूरत नहीं है। आपके बाल बच्चे दुश्मनों के हाथ से अब आजाद हैं। हमारे सच्चे खैरख्वाह शाइस्त खां और प्यारी बहिन रोशनआरा ने उन्हें बखूबी आराम और हिफाज़त से रखा है। वल्लाह, अब आप फौरन ही आगरे आकर मुझसे मिलिए, ताकि बहुत ही जरूरी मसलों पर ग़ौर किया जाय—क्योंकि आप बखूबी जानते हैं कि आपही मुझ अन्धे की लकड़ी हैं और आपकी आंख औरंगजेब की आंख है।"

यह खत उसने अपने दूधभाई मीरबाबा को देकर कहा—"इसे जितना जल्द मुमकिन हो किसी अपने खास आदमी के हाथों औरंगाबाद अभी रवाना कर दो और ताकीद कर दो कि जितनी जल्द मुमकिन हो वह खत को ठिकाने पहुंचा दे। मैं चाहता था कि यह खत तुम खुद ले जाओ मगर मैं तुम्हें दूर नहीं कर सकता—तुम्हारी मदद की मुझे और भी सख्त जरूरत है।"

मीरबाबा खत लेकर हंसता हुआ और सिर हिलाता हुआ चला गया।

औरंगजेब कुछ देर उसकी ओर देखता रहा—और मन ही मन वह बड़बड़ाया। इसके बाद उसने और एक खत लिखा—यह खत उसने मिर्जाराजा जयसिंह को लिखा—उसमें लिखा था—

"दारा बिल्कुल तबाह हो गया—और वह बड़ा लश्कर भी जिसका उसे भरोसा था—शिकश्त फाश खा कर हमारे कब्जे में आ गया। अब वह ऐसा बेसरो सामानी से भागा जा रहा है

कि सवारों का एक रिसाला भी उसके साथ नहीं है। उम्मीद है हम बहुत जल्द उसे गिरफ्तार कर लेंगे। इधर हज़रत बादशाह सलामत इस क़दर अलील हैं कि सिर्फ चन्द रोज़ के मिहमान हैं। इसलिए अगर आप हमारा मुक़ाबिला इस हालत में करेंगे तो नतीजा बजुज़ खराबी के और हलाकत के कुछ न होगा। इसके सिवा—इस अबतर हालत में दारा की तरफदारी करना निहायत नादानी है। आपके हक में अब यही बेहतर है कि हमारे पास हाजिर हों और सुलेमान शिकोह को—जो बआसानी गिरफ्तार हो सकता है पकड़ कर हमारे हुजूर में पेश करें।" यह खत रवाना करके उसने अपनी कमर खोली और आराम किया।

दूसरा दिन निकला। एक एक करके अनेक अमीर उमरा आकर नज़र गुज़ारने लगे। सबसे प्रथम शाइस्त खां ने आकर मुबारकबादी दी और बहुमूल्य भेंट पेश की। इसके बाद मुहम्मद अमीन खां ने जो कि मीरजुमला का बेटा था आकर क़दमबोसी हासिल की। फिर और भी अमीर उमराओं का तांता बंध गया। इन सबको पहिले ही ठीक कर लिया गया था। और अब, जब औरंगजेब ने उनका स्वागत सत्कार किया और उन्हें खिताब और जागीर बख्सी तो सब खुश हो गए। सिर्फ तीन अमीर ही बच रहे थे जो औरंगजेब से मिलने नहीं आए। एक दानिशमन्द खां जो एक विख्यात विद्वान था—दूसरा मुक़र्रम खां जो शाही हकीम था और तीसरा असद खां जो शाहजहां का विश्वासी वजीर था।

इन तीनों के नाम औरंगजेब की दृष्टि में चढ़ गए। परन्तु उसने प्रकट में अपने भावों को ज़ाहिर नहीं होने दिया।

भेंट मुलाक़ातों के खतम होने पर सब सरदारों को मुराद की मुसाहिबी में छोड़कर वह अपने एकान्त खीमें में चला गया। वहां सबसे पहिले उसे बादशाह का खरीता मिला। उसमें लिखा था—

"बेशक दारा ने जो कुछ किया, नालायकी और बेसमझी से पुर

था। तुम पर तो हम इब्तदा ही से शफक्कत रखते हैं। बस तुमको हमारे पास जल्द आना चाहिए, ताकि तुम्हारे मश्विरे से उन उमूर का इन्तजाम किया जाय जो इस गड़बड़ के बाइस खराब और अबतर पड़े हैं।"

इस खत को पढ़कर औरंगजेब मुस्कुरा दिया और उसे एक ओर फेंक कर उसने दूसरा खत पढ़ा।

वह उसकी बहन रोशनआरा का था, उसमें लिखा था कि "खबरदार किले में आने का क़स्द न करना, तुम्हें मार डालने के तमाम जाल बिछे हुए हैं। बेगम ने खूंखार तातारी बांदियां जहां तहां छिपा रखीं हैं, जो तुम पर अपनी बड़ी बड़ी तलवारें लेकर टूट पड़ेंगी। और वे उज़बक गुलाम भी जो अपने हथियारों को बखूबी इस्तेमाल करना जानते हैं तुम्हारी घात में हैं।"

इस खत को पढ़कर उसके होठ सिकुड़ गए। और उसने उसे मोड़कर आस्तीन में छिपा लिया। कुछ देर तक वह किसी गहरे विचार में रहा। फिर उसने अत्यन्त गुप्त रीति से शाइस्त खां को बुला भेजा। जब दोनों खीमें में बैठे—बाहर कड़ा पहरा लगा दिया। एकान्त होने पर शाइस्त खां खिलखिला कर हँस पड़ा।

औरंगजेब ने मुस्कुरा कर उसके दोनों हाथ पकड़ लिए और कहा—"मैं समझता हूँ—नये जहांपनाह बिल्कुल मौज में हैं।"

"जी हां, खूब ढाल रहे हैं, मुजरे हो रहे हैं।"

"बादशाह हैं, वे जो चाहें कर सकते हैं" औरंगजेब ने एक भेदभरी नजर से शाइस्त खां की ओर देखा फिर कहा—

"वे खतूत तैयार हैं।"

"ये हाज़िर हैं।"

"सील मुहर और दस्तखत सब ठीक हैं?"

"देख लीजिए।"

उसने कुछ खत निकाल कर औरंगजेब के सामने पेश किये।

और उसने खूब गौर से देखकर कर कहा—

'सुभान अल्लाह, बखूबी काम हो जायगा। तो भरे दरबार में आप खुद ये खत पढ़कर सुनाएंगे। मैंने हुक्म दे दिया है। मैं अभी दरबार किया चाहता हूँ।"

शाइस्त खां ने स्वीकार किया। औरंगजेब ने एक कीमती मोतियों की माला गले से उतार कर शाइस्त खां के गले में डालते हुए कहा—

"आप यह न समझें कि आपकी खिदमत का यह नाचीज बदला है, बदला तो मैं आपको दे ही नहीं सकता। मगर हां जब आप आगरे के हाकिम हो जाएंगे तो ज़रा मुझे तसल्ली होगी। मगर इसके लिए आपको दो चार दिन अभी सब्र करना होगा।"

शाइस्त खां ने हंसकर उठते उठते कहा—"सब्र जितना कहिए मैं कर लूंगा—फिलहाल खुदा हाफिज।"

दोनों मामा भान्जे गले मिले। औरंगजेब इस वक्त अपनी बादशाही शान भी भूल गया।

नकीब ने खबर दी कि दरबार की तमाम तैयारियां हो गई हैं और दरबारी अमीर उमरा हाजिर हैं। औरंगजेब धीरे धीरे उठकर दरबार वाले खीमें में गया। मुराद वहां पहिले ही मसनद पर बैठा था। औरंगजेब ने उसका आदाब बजाया और उसके इशारे करने पर बगल में अदब से बैठ गया। दरबार की कार्यवाही प्रारम्भ हुई।

औरंगजेब ने तमाम दरबारियों और अमीरों को सम्बोधन करके कहा—"आज आपको यहां देखकर हमें बहुत खुशी हुई है, और हम इज़हार करते हैं कि हमें जो कुछ कामयाबी हुई है वह आप-लोगों की मदद और आक़िलाना मश्वरे से ही हुई है। जिसके लिए हम आपके बहुत बहुत ममनून हैं। और आपको इत्मीनान दिलाते हैं कि ज्योंही सब गड़बड़ मिट जायगी आपलोगों के रुतबे और वजीफे दुचन्द कर दिए जाएंगे। और मुनासिब तौर पर शुक्रिया अदा किया जायगा। अब बिलफैल सोचना यह है कि सल्तनत का इन्त-जाम कैसे किया जाय। और हज़रत सलामत जो बहुत जईफ और

बीमार होने से सल्तनत का बोझ उठा नहीं सकते, उनका क्या बन्दोबस्त किया जाय। हज़रत ने हमें दर्गाह में तलब फर्माया है। आपलोग मुनासिब समझें तो क़िले में चलकर हुजूर की कदमबोसी हासिल करें और उनका हुक्म बसरोचश्म बजा लाएं।"

इतने ही में एक कासिद ने आकर जमीन चूमी। और अर्ज की—"हुजूर, खुदावंद,बहादुर खां ने एक जासूस को कुछ चिट्ठियों के साथ गिरफ्तार किया है, जो किले से दिल्ली जा रहा था। हुक्म हो तो वह खिदमत में हाजिर किया जाय।"

औरंगजेब ने चकित होकर अपने चारों ओर देखा और कहा—"क्या उसे यहां बुलवाया जाय, या तख्लिए में उसकी जांच की जाय।"

शाइस्त खां ने कहा—

"उसे यहीं जहांपनाह के रूबरू हाजिर किया जाना चाहिए और भरे दरबार में वे चिट्ठियां खोली जानी चाहिए। जिससे उनकी असलियत सबको मालूम हो जाय।"

अब लाचारी का भाव प्रगट करते हुए औरंगजेब ने मुराद की तरफ देखा। मुराद ने कहा—

"उसे इसी वक्त हमारे रूबरू हाजिर किया जाय।"

कासिद हाथ बांधकर लाया गया। वह ख़त जो उसके पास बरामद हुआ था पेश किया गया। उसने तस्लीम किया कि हज़रत बादशाह सलामत और बेगम साहिबा ने वह ख़त उसे देकर दारा के पास भेजा था। मुराद के हुक्म से शाइस्त खां ने खोलकर ख़त पढ़ा। उसमें लिखा था—"मेरे प्यारे बेटे, तुम आगरे से दूर न जाना, क्योंकि वह वक्त करीब है जब तुम देखोगे कि तुम्हारे बाग़ी और स्याह दिल भाई उसी आदमी के हाथों अपनी करनी को पहुंचेंगे, जो बदकिस्मती से उनका बाप है। कमीनी और जंगली हरकत करने वाले मुराद और औरंगजेब जल्द किले में आएंगे मगर

एकबार अन्दर दाखिल होने के बाद वे जिन्दा हो जाएंगे। और दूसरे लोग उन्हें कन्धों पर उठाकर ले जाएंगे। उस वक्त मेरे प्यारे बेटे, तुम आगरे पहुंचकर आराम से हिन्दुस्तान पर हुकूमत करना।"

खत का मजमून सुनते ही औरंगजेब के चेहरे का रंग फ़क हो गया। वह अपने पांव पटकने लगा और हाथ मसनद पर मारने लगा। उसकी आंखों में भय और विस्मय का जैसे तूफान आ गया हो। मुराद गुस्से से होठ चबाने लगा। दरबारी दंग रह गए।

औरंगजेब ने इस तरह अपना सिर लटका लिया कि जैसे वह बहुत सोच में पड़ गया हो। फिर एकाएक उत्तेजित होकर बोला—"नहीं, नहीं, हम यक़ीन नहीं कर सकते। यह खत जाली है, इसे दुबारा पढ़ा जाय। दुश्मन चाहते हैं कि हम अपने प्यारे बुजुर्गवार से दूर रहें। नहीं, नहीं, यह नहीं हो सकता, हम उनसे मिलने को जरूर जरूर जाएंगे।"

इस पर शाइस्त खां ने आंखें कपार पर चढ़ाकर कहा—

"हुजूर को इस तरह अपनी जान जोखिम में नहीं डालनी चाहिए। इसमें जो कुछ लिखा है नामुमकिन नहीं है।"

इसपर औरंगजेब ने कहा—"मैं चाहता हूँ कि सब उमरा इस खत की लिखावट पर गौर करें। और देखें कि कहीं यह खत जाली तो नहीं है।"

तमाम अमीरों ने खत को उलट पलट कर देखा और एक राय होकर कहा—

"खत असली है, और आपको किले में जाने का खतरा नहीं उठाना चाहिए।" इससे औरंगजेब ने बहुत रंज प्रगट किया और लाचारी का भाव प्रगट करके दरबार बर्खास्त किया। इसके बाद अपने बेटे मुहम्मद सुलतान को चुपचाप शहर पर दखल करके किला घेर लेने रातों रात रवाना कर दिया।

५८

क़ैद में

बादशाह ने जब यह सुना तो वह गुस्से से थर थर कांपने लगा। परन्तु उसका क्रोध निरर्थक था। उसकी हालत उस शेर के समान थी जो बूढ़ा और घायल हो और पिंजरे में बन्द हो। उसके पास न सेना थी—न सहायक। सारे दरबारी अमीर, जिन्हें उसने बड़ी बड़ी जागीरें दी थीं और जिन्हें उसने भिखारी से अमीर बनाया था, उसे छोड़ गए थे। सिर्फ वज़ीर असद खां अकेला बादशाह के पास था। क़िले की रक्षा के लिए जो सेना नियत थी, उसके भी बहुत से सिपाही भागभूग गए थे।

बादशाह की उम्र अब अड़सठ साल की थी और वह बत्तीस वर्ष राज कर चुका था। वह अपनी बांदियों और महल की औरतों से घिरा था, जिनकी संख्या अब भी दो हजार के लगभग थी।

उसने वज़ीर असद खां से सलाह की। असद खां ही अब उसका सहारा था। उसकी औरंगजेब को फंसाने की सारी तदबीरें खाली जा चुकी थीं। असद खां ने सारे क़िले का एक चक्कर लगाया। क़िले के सब फाटक बन्द करा दिए और जो सिपाही मिले सबको एकत्र कर एक छोटी सी सेना उसने सज्जित कर ली। फिरंगी तोपची अभी तक क़िले में मौजूद थे। उन्हें बुला कर उसने तोपें तैयार कर उनसे औरंगजेब की फौज पर गोलाबारी करने का हुक्म दे दिया, जो अब क़िले के चारों तरफ घेरा डाले पड़ी थी और शहर पर जिसने अधिकार कर लिया था।

मुहम्मद सुलतान ने इन तोपों की कुछ भी परवाह न की। उसने उनका जवाब भी न दिया। उसकी फौज शहर के घरों की

आड़ में आराम से अपना बचाव कर रही थी। परन्तु देर तक घेरा डाले पड़ा रहना औरंगजेब को पसंद न था। गोलाबारी से भी क़िला तोड़ना संभव न था। वर्षों घेरा डालने पर भी नतीजा कुछ न होता। दूसरे,यदि ये दोनों विजयी भाई आगरे ही में रुके रह जाते तो उधर दारा को नई सेना भरती करने का अवसर मिल जाता। इसलिए औरंगजेब ने जमुना की ओर खुलने वाली खिड़की के पास की बाहर वाली सब जमीन अधिकृत कर ली। इससे क़िले में जल जाने के साधन रुक गए और क़िले के सब स्त्री पुरुष प्यास से तड़पने लगे। अब बाहर से क़िले में रसद भी नहीं पहुंच सकती थी और खाने पीने की चीजों की वहां बेहद तंगी हो रही थी। मुगल हरम जो केवल ऐश आराम का अभ्यस्त था, इस कष्ट और दिक्कत से सिर्फ दो ही दिनों में बेचैन हो उठा। क़िले में कुहराम मच गया। सब भूख प्यास से घबरा उठे।

बादशाह ने बड़े दर्दभरे लहजे में औरंगजेब को लिखा कि वह बूढ़े बाप को प्यासा न मारे। परन्तु औरंगजेब ने कोई जवाब न दिया। परन्तु बात केवल यहीं तक न थी। वे फिरंगी तोपची भी जो केवल पेट का धन्धा करते थे, औरंगजेब के जादू से न बच सके। तीन दिन-रात निरर्थक गोलाबारूद खराब करके एक दिन आधी रात के समय प्रधान तोपची कमन्द के सहारे क़िले के बाहर कूद गया और उसके बाद उसके अन्य साथी भी। यह ख़बर जब बादशाह के अन्य ख़िदमतगारों और सिपाहियों को लगी तो वे भी एक एक करके खिसक चले। प्रत्येक को अपनी जान के लाले लगे थे। अब तो जो कुछ जिसके हाथ लगा वही लेकर वह भाग निकला। खास ख़िदमतगार और खोजे—जो दीवाने खास और महलसरा पर मुक़र्रर थे—वे भी भाग चले। इस प्रकार अपने समय का सब से बड़ा और सबसे अमीर बादशाह शाहजहां इस समय अत्यन्त तुच्छ कैदी रह गया, जो अपनी ही परछांई से डरता

था और जिसे अपने प्राणों की अब बड़ी चिन्ता थी। तीन दिन उसने बड़ी कठिनाई से काटे।

इसी समय उसे औरंगजेब का एक अरीजा मिला। उसमें लिखा था—

"मुझे अफसोस है कि हुजूर के क़दमों में मेरी तरफ से ताख़ीर हुई है। जिसकी वजह इसके सिवा कुछ नहीं कि मैं बीमार था। और इसी वजह से हाज़िरी से माजूर। इस अस्नाह में मेरे मन-चले सिपाहियों ने कुछ ज्यादतियां की हैं। जिनके लिए मैं माफी का ख़ास्तगार हूं। और अर्ज करता हूँ कि हुजूर मेरे बेटे मुहम्मद सुल्तान को हुजूर मे हाजिर होने और आदाब बजा लाने की इज़ाज़त बख्शें। सेहत ठीक होने पर जिसमें ब फ़ज़्ले खुदा अब देर नहीं है—मैं खुद बारयाबी का फ़ख्र हासिल करूंगा।"

शाहजहां को, डूबते को तिनके का सहारा मिला। और उसे इसमें अपनी तज़वीज़ की सफलता की कुछ आशा बंधी। उसने इस दर्खास्त को स्वीकार कर लिया और बड़े ठाठ बाठ से मुहम्मद सुल्तान की अगवानी की तैयारी की गई तथा उसे भेंट देने को मूल्यवान किमख़ाब के थान भी सजवा लिए।

बादशाह का विचार था कि इसी के बेटे को बरग़ला कर औरंगजेब को ख़त्म कर दिया जाय। मगर वह नहीं जानता था कि उसे अपने उस बेटे से वास्ता पड़ा है जिसकी तक़दीर में पचास साल हिन्दुस्तान की बादशाहत भोगनी और पृथ्वी के अमूल्य तख्ते ताऊस पर बैठना बदा था। औरंगजेब ने अपने बेटे मुहम्मद सुलतान को समझा दिया कि क़िले में दाख़िल होते ही फ़ौरन पहरेदारों को क़त्ल कर देना और जल्द मे जल्द भीतर दाख़िल हो कर तमाम नाके कब्जे में कर डालना। इसके बाद क़िले में जो भी हथियार बन्द आदमी मिले, बिना ताअम्मुल क़त्ल किए जाना।

मुहम्मद सुलतान ने यही किया भी। क़िले का द्वार खुलते ही

आनन फानन क़िले पर पूरी तौर पर क़ब्ज़ा कर लिया और क़िले के सब सिपाहियों को मौत के घाट उतार बादशाह के रंगमहल पर अपने विश्वस्त जनों का मुस्तैद पहरा बैठा दिया।

बादशाह को इस धोखेधड़ी की बिल्कुल आशा ही न थी। वह एक प्रकार से बेहोश होकर गिर गया। इसी समय मुहम्मद सुलतान ने एक विश्वस्त अफसर के हाथ औरंगजेब का सन्देश बादशाह के पास भिजवा दिया। जिसमें लिखा था—

"हुजूर, अब अपने रंगमहल में इतमीनान और आराम से रहें। और सब किस्म की फिक्र और परेशानियों से अपने तईं को बरी समझें। क्योंकि अब आप सल्तनत का बोझा उठाने के काबिल नहीं रहे और मैंने सल्तनत का तमाम बोझ अपने कन्धों पर उठा लिया है।"

बादशाह बदहवास थे। परन्तु बेगम जहांआरा और वज़ीर असद खां ने बादशाह को एक परामर्श दिया। और कहा कि यदि यह योजना सफल हो जाय तो औरंगजेब का खात्मा ही है। डूबते को तिनके का सहारा। बादशाह ने एक विश्वस्त खोजे के द्वारा मुहम्मद सुलतान से कहलाया—

"तुम जानते हो कि तुम्हें हम कितनी मुहब्बत करते हैं। और हम जानते हैं कि तुम कितने लायक हो। पस, हमने इरादा कर लिया है कि हम तुम्हीं को ताजोतख्त दें और हिन्दुस्तान का बादशाह बनाएं। जिसकी तमाम तैयारियां मौजूद हैं। लिल्लाह तुम फौरन हमारे पास आ जाओ।"

परन्तु बेचारा बूढ़ा बादशाह अपनी इस चाल में भी असफल रहा। मुहम्मद सुलतान नवयुवक तो था—परन्तु अत्यन्त बुद्धिमान और विचारशील था। वह दादाजान की चिकनी चुपड़ी बातों में नहीं आया। वह तो जानता था कि जब तमाम नगर, और दरबारी उसके बाप ने वश में कर लिए हैं इसलिए बूढ़े

बादशाह की बात में कोई दम नहीं है। वह इसके योग्य नहीं। इसके सिवा वह कच्ची समझ का नवयुवक था, इसलिए साहस भी न कर सका। इसमें सन्देह नहीं कि बूढ़े बादशाह के प्रति लोगों में इतनी श्रद्धा अभी भी थी कि यदि मुहम्मद सुलतान अपने आधीन सेना के साथ बूढ़े बादशाह को लेकर क़िले से बाहर होता और बादशाह की भी कुछ सेना जो तितर बितर हो गई थी, एकत्रित हो जाती और वे औरंगजेब पर आक्रमण कर देते तो सम्भव था कि औरंगजेब की सेना में विद्रोह फैल जाता। और औरंगजेब भी पिता के सामने जाने का साहस न करता। यह संभव हो सकता था कि दादा को कैद से छुड़ाने की प्रतिष्ठा के साथ तख्त भी मुहम्मद सुलतान को प्राप्त हो जाता। परन्तु उसके भाग्य में ग्वालियर के क़िले में कैदी होकर जीवन बिताना लिखा था। तख्ते-ताऊस पर बैठकर हिन्दुस्तान का राज्य करना नहीं।

उसने जवाब दिया—

"अब्बा की जानिब से मुझे हुजूर में हाज़िर होने की इजाज़त नहीं। बल्के ताकीद हुक्म यह है कि क़िले के कुल दरवाजों और ख़जानों की कुंजियां खुद अपनी सुपुर्दगी में लेकर मैं यहां से बहुत जल्द वापस जाऊँ—क्योंकि वे हुजूर की क़दमबोसी के निहायत मुश्ताक़ हो रहे हैं और सिर्फ इतनी ही देर है कि इस तरफ से इतमीनान हो जाय तो फौरन आ जायं।"

बादशाह तावपेंच खाकर रह गया। परन्तु उसने एकबार फिर कहला कर भेजा—

"हम तुमसे तख्त की क़सम खाकर कहते हैं और कुरान मजीद हमारे तुम्हारे दर्म्यान है कि अगर तुम इस वक्त ईमानदारी से पेश आओगे तो हम तुम्हीं को बादशाह बना देंगे। इस मौके को ग़नीमत जानो और फौरन चले आओ और दादा जान को कैद से छुड़ा लो। और याद रक्खो कि इस शबाबे आक़वत के अलावा दुनिया

में भी तुम्हें नेकनामी हासिल होगी। हम तुम्हें क़िले में पूरी तौर पर आने जाने की आजादी देते हैं।"

परन्तु मुहम्मद सुलतान पर इस करुण पुकार का भी कुछ असर नहीं हुआ। उसने कहला भेजा—

"ये सारी बातें बेकार हैं। हुजूर चाबियां भेज दें, वरना मुझे ज़बर्दस्ती उन्हें लेना होगा।"

बादशाह ने सब ओर से निराश होकर चाबियां अन्ततः मुहम्मद सुलतान के सुपुर्द करदीं। और यह इरादा प्रकट किया कि यदि उसपर हमला किया गया तो वह अपने ख्वाजासरा और लौंडियों और असद खां के साथ लड़ता हुआ अपनी जान दे देगा। अब असद खां ही उसका अकेला साथी रह गया था जो बादशाह की बेबसी पर आंसू बहाता हुआ नंगी तलवार हाथ में लिए बादशाह के कमरे के बाहर एक गुलाम की भांति पहरा दे रहा था।

चाबियां भेजने के साथ बादशाह ने यह कहलाया कि—"अब औरंगजेब को यहां जरूर ही आना चाहिए और समझदारी भी इसी में है कि वह जल्द आकर हमसे मिले क्योंकि सल्तनत के बाज जरूरी इसरार हम उसे समझाना चाहते हैं।"

५६

शह-मात

औरंगजेब बड़ी ही बेचैनी से मुहम्मद सुलतान के क़िले से लौटने की प्रतीक्षा कर रहा था। रह रह कर उसके मन में संदेह हो रहा था कि कहीं यह नवयुवक शाहज़ादा अपने दादा से मिल जाय, दग़ा न करे। वह क्षण क्षण पर क़िले की ओर देखता और बड़बड़ा रहा था। उसका विश्वस्त अमीर एतबार खां हाथ बांधे चुपचाप उसकी यह हरकतें देख रहा था। औरंगजेब ने अधीर

होकर पूछा—"क्या वजह है कि मुहम्मद सुलतान के आने में देर हो रही है। दो दिन हो गए। क्या क़िले में कोई हंगामा हो गया है, या मुहम्मद सुलतान ने दग़ा की है।"

"दोनों ही बातें नामुमकिन हैं।" एतबार खां ने धीरे से कहा। औरंगजेब ने उसे घूर कर देखा और बेचैनी से खीमे में टहलने लगा।

इसी समय एक गुलाम ने मुहम्मद सुलतान के आने की इत्तला दी। उसने कहा—

"खुदावन्द, शाहज़ादा मुहम्मद सुलतान क़िले से लौट आए हैं।"

"तो उन्हें यहां ले आ।"

गुलाम चला गया। और मुहम्मद सुलतान ने आकर सलाम किया।

"चाबियां मिलीं ?"

"जी हां," उसने चाबियां औरंगजेब के पैरों में डाल दीं।

"ख़जाना ?"

"हुक्म के मुताबिक परताल करके उसपर अपनी सील मुहर लगा दी है।"

"ठीक है। क़िले में अब कौन कौन हैं ?"

"सिर्फ हरम, औरतें, बच्चे, दादा जान और असद खां, कुछ ख्वाजासरा।"

"असद खां अभी है ? खैर, ऐं, तुम रोते हो ?"

युवक शाहज़ादे ने आँखें पोंछी। उसने कहा—'दादा जान की आप से एक आरजू है।"

"कैसी आरजू ?"

"यह ख़त है।" उसने ख़त औरंगजेब के हाथ में दिया और पीछे हट गया।

"हुजूर का मिज़ाज कैसा है ?"

"सुना है—वे बच्चों की तरह ज़ोर ज़ोर से रो रहे हैं।"

औरंगजेब ने बादशाह के ख़त पर दृष्टि डाली। और कहा—"आह, अभी चन्द ज़रूरी मसले ग़ौर करने को रह गए हैं।" उसने आस्तीन से एक कागज़ निकाल कर कहा—"यह फर्मान लो और अभी जाकर आगरे के कोतवाल का चार्ज ले लो। और शहर के तमाम दरवाजों पर मुस्तैद पहरा बैठा दो। बग़ैर तुम्हारे दस्ती पर्वाने के कोई शख्स या माल असबाब शहर से बाहर न जाने पाएं न आने पाएं। जाओ।"

मुहम्मद सुल्तान ने चुपचाप कागज लिया और सलाम करके चला गया। अब उसने एतबार खां की ओर रुख किया। उसने कहा—"एतबार खां, मैं तुम पर सबसे ज्यादा जोखिम काभारी काम सौंपना चाहता हूँ।"

"गुलाम को जो ख़िदमत सौंपी जायगी उसे वह जान देकर भी पूरी करेगा।" एतबार खां ने कहा। औरंगजेब ने कहा—'हमें तुमसे ऐसी ही उम्मीद है। तुम्हें मैं तमाम क़िला सौंपता हूँ। खबर्दार रहो—हज़रत आला को बाआराम महलसरा में रहने में कोई तकलीफ न हो। लेकिन फालतू आदमियों को बाहर निकाल दो। और नज़र रखो कि बाहर का कोई आदमी या पैगाम किसी किस्म का भीतर न पहुँचने पाए।"

"ऐसा ही होगा, हुजूर इतमीनान रखें।"

"बेगम रोशनआरा को यहां हमारे हुजूर में भेज दो। और वे जिस कदर लवाजमात साथ लाना चाहें, ले आने दो।"

"जो हुक्म।"

"अपनी जरूरत के लिए जैसा मुनासिब समझो, नए फाटक और दरवाजे तैयार करा लो। जिनके हालात पोशीदा हों, और नज़र रखो कि हज़रत सलामत अपनी ख़िलवतगाह से बाहर न

आने पाएं।"

"जो इर्शाद।"

"जाओ, जितना मुनासिब समझो फौज ले जाओ। और मामू शाइस्त खां को अभी यहां भेज दो।"

एतबार खां ने तीन बार सलाम किया। और खीमें से बाहर चल दिया।

औरंगजेब बड़ी देर तक हाथ मलता हुआ अकेला टहलता रहा। उसने अपने होठों ही में कहा—सिर्फ यह तलवार ही की लड़ाई नहीं है, दिमाग की भी है।

अब बादशाह के तमाम अधिकार छिन गए। वह शाही बन्दी हो गया। आगरे का वह अटूट खजाना, भारत के महाशक्तिशाली बादशाहों का तीन पुश्तों का धन औरंगजेब के हाथ आ गया।

६०

बेअदबी

कैद होने के दूसरे दिन बादशाह को औरंगजेब का एक और खत मिला, उसमें लिखा था—

"यह बेअदबी मुझ से इसलिए सरजद हुई है कि हुजूर जाहिरा मेरी निस्बत इज़हारे उल्फत वो मेहरबानी फर्माते थे और यह इर्शाद होता था कि दारा शिकोह के तौर व तरीके से हम सख्त नाराज़ हैं। मगर मुझे पुख्ता खबर मिली है कि हुजूर ने अशर्फियों से लदे हुए दो हाथी उसके पास भेजे हैं, जिनसे वह नई फौज तैयार करके इस खूंरेज लड़ाई को तबालत दे। पर हुजूर ही गौर फर्माएँ, कि मुझसे इन हरकतों के—जो फर्जन्दों के मामूली तरीके के खिलाफ और सख्त मालूम होती हैं—सरजद हो जाने का बाइस क्या दारा शिकोह की खुदसरी नहीं है? इन बातों का सबब—कि

हुजूर कैद किए गए और फर्जन्दाना खिदमत बजा लाने के लिए मैं इतनी देर तक हुजूर की खिदमत में हाजिर नहीं हो सका? हुजूर से बकमाल माजरत इल्तजा करता हूं कि मेरी इस हरकत की ताज्जुबअंगेज जाहिरी सूरत पर खयाल न फर्माकर सिर्फ चन्द रोज के लिए सब्र के साथ इसे बर्दाश्त करें। फिर ज्योंही दारा शिकोह चैन व अमन में खलल अन्दाज होने और हुजूर को और मुझको तकलीफ पहुंचाने के काबिल न रहेगा, त्योंही मैं खुद बखुद किले की तरफ दौड़ा चला आऊंगा। और हुजूर के कैद-खाने का दरवाजा अपने हाथ से खोलकर हाथ जोड़ अर्ज करूंगा कि अब कुछ रोक टोक नहीं है।"

खत को पढ़कर बूढ़े बादशाह ने दोनों हाथों से अपनी आंखें ढाप लीं और उनकी कांपती हुई उंगलियों के बीच से आंसुओं की धार बहने लगी। बड़ी देर तक रो लेने के बाद उनका मन कुछ हल्का हुआ तो उन्होंने दूर पर चांदनी में बिखरे हुए ताज की ओर दृष्टि की। फिर एक ठण्डी सांस खींचकर वे मसनद पर लुढ़क गए।

६१

अगला-कदम

बूढ़े बाप को कैद कर, किले की नाकेबन्दी मजबूत कर, चारों ओर जासूसों का जाल बिछा, आगरे की सूबेदारी शाइस्त खां को सौंप, आगरे का तमाम खजाना साथ लाद, औरंगजेब ने मुराद को संग ले दारा के पीछे दिल्ली की राह पकड़ी। आगरे में उसने केवल दस दिन मुकाम किया था। इसी बीच में आगरे का उसने सारा बन्दोबस्त ठीक ठीक कर लिया था—और अब वह अपने शिकार के पीछे था। उसने तीस मील चल कर मथुरा में मुकाम किया।

मथुरा में रुकने के उसके दो उद्देश्य थे। एक यह—कि वह, दिल्ली को जो संदेश भेजे गए थे उनके जवाब की प्रतीक्षा में था, दूसरे, वह मुराद से भी अब निबट लेना चाहता था। क्योंकि प्रथम तो अब मुराद की कोई आवश्यकता ही न रह गई थी, दूसरे लश्कर में भांति भांति की अफवाहें फैल रही थीं। अत्यन्त गुप्त रखने पर भी औरंगजेब के इरादों को लोग भांप गए थे। और लश्कर में छोटे बड़े इशारे से अपने मनोभावों को प्रगट करने लगे थे। इसके अतिरिक्त मुराद के भी कान नित्य भरे जाते थे। वह मूर्ख, अविचारी, ईर्ष्यालु और हठी तो था ही, अब अपने को बादशाह मानकर मनमानी कार्यवाही करने लगा था। वह औरंगजेब को कभी कभी बहुत तुच्छ दृष्टि से देखता, बहुधा उसकी इच्छाओं का निरादर कर देता। उसके दरबारी अमीरों ने उसे यह कहकर भड़का दिया था कि धीरे धीरे सारी हुकूमत उसके हाथ से निकल कर औरंगजेब के हाथ चली जा रही है। और वही सर्वेसर्वा बनता जा रहा है। इन सरदारों के भबके पर चढ़कर वह एक दो बार खुल्लम खुल्ला औरंगजेब का विरोध कर चुका था। उसने अपनी सेना भी बढ़ा ली थी और बहुधा सब काम बिना औरंगजेब से पूछे कर डालता था। परिस्थिति नाजुक होती जाती थी इसलिए उसने अब मुराद के झमेले को तुरन्त ही तय कर डालने का ही निर्णय कर डाला था। औरंगजेब की तीखी नजर में भूत भविष्य सभी उपस्थित था और इसीलिए अब अविलम्ब उसने भयंकर साहस कर गुजरने का निश्चय दृढ़ कर लिया।

आगरे से चलने के समय भी मुराद ने कुछ हुज्जत की थी। उसके दरबारी अमीरों ने कहा था—"आपको अब दारा के पीछे जाने की क्या जरूरत है। आगरे में ही रहिए, औरंगजेब को जाने दीजिए।" औरंगजेब बहुत ऊंच नीच समझा कर उसे साथ ले आया था। परन्तु उसने अपना लश्कर और छावनी औरंगजेब से

अलहदा रक्खी थी। औरंगजेब आगरे से मथुरा तक मुराद की खुशामद में लगा रहा। कभी फलफूल भेजता, कभी कोई सौग़ात। वह बारंबार मिज़ाज पुछवाता। इन सब बातों का यह असर पड़ा कि मुराद औरंगजेब पर प्रसन्न हो गया।

ख्वाजा शहवाज़ खां, जो मुराद का गुलाम और एक वीर पुरुष था, औरंगजेब के सब इरादे जान गया था। उसने भी अपने जासूस लगा रखे थे और ऐसा बन्दोवस्त कर लिया था कि मथुरा पहुंच कर ज्योंही औरंगजेब मुराद के खीमें में पहुँचे—उसे कत्ल कर डाला जाय। परन्तु औरंगजेब इससे असावधान न था। शहवाज़ खां की मर्मभेदिनी दृष्टि को वह समझ गया था। इसी से उसने निश्चय कर लिया था कि अब देर करना निरापद नहीं है।

उस दिन पन्द्रह जून थी। गर्मी बेहद थी, दिन छिपने में अभी देर थी मगर सूरज की चमक और लूओं की भयानकता में कुछ भी कमी न आई थी। परन्तु औरंगजेब को इन सब प्राकृत आपदाओं की ज़रा भी परवाह न थी।

लश्कर की व्यवस्था से अवकाश पाते ही उसने मीर अतिश-कुली खां को बुला भेजा। खीमें पर कड़ा पहरा लगा था। कुछ देर वह चुपचाप टहलता रहा और मीर हाथ बांधे त्रस्त भाव से खीमें के एक कोने में खड़ा उसकी भावभंगी देखता रहा। एकाएक औरंगजेब ने रुक कर तेज़ आंखों से उसे घूरकर कहा—

"तो तुम हर तरह तैयार हो?"

"क्या आज ही?" मीर ने कम्पित कंठ से पूछा।

"हां" औरंगजेब ने धीर स्थिर स्वर से कहा, और गले से एक अत्यन्त कीमती हीरों का हार उतार कर उसके हाथ में पकड़ा दिया। फिर कहा—"इन पत्थरों की क़ीमत तीन लाख रुपया है। जो आज की

कारस्तानी की सिर्फ पेशगी किस्त है। इसके बाद जैसा कि मैं कह चुका हूँ तुम्हें गुजरात की सूबेदारी और पांच हजारी जात···"

"मगर जहांपनाह··· ···"

"हुक्म उदूली और नमकहरामी की सजा जो मैं देता हूँ उसे दुनियां जानती है।" औरंगजेब ने आग के शोले आंखों से बरसाते हुए मीर की ओर देखा। मीर जमीन तक झुक गया और तब उसने धीरे से कहा—

"जो हुक्म," इसके बाद वह तेजी से चला गया।

औरंगजेब ने दस्तक दी। एक ख्वाजासरा ने भीतर आकर सिर झुकाया। औरंगजेब ने कहा—"मीर खां को भेज दें।"

ख्वाजासरा सिर झुकाकर चला गया—और एक भीमकाय अमीर ने खीमे में प्रवेश किया। उसका रंग काला, आखें लाल और मुजदण्ड बलिष्ठ थे। वह बहुत भारी तलवार बांधे था। वह चुपचाप औरंगजेब की आज्ञा की प्रतीक्षा में खड़ा हो गया।

"कुबूल ?"

"जी हां, हुजूर,।"

"याद रखो यह आखरी मुहिम है।"

"जहांपनाह, यहां भी सब इन्तजाम चाक चौबन्द है।"

"तो बस, तुम खुद जाओ, साथ में मुहम्मद सुलतान और अपने साथी अमीरों को ले जाओ और उसे साथ ले आओ। मगर निहायत होशियारी और समझदारी से।"

"हुजूर, इतमीनान रखें।"

एक बहुमूल्य मोतियों की माला उसकी ओर फेंक कर औरंग-

जेब ने उसे उंगली से खीमे से बाहर जाने का संकेत किया।

फिर वह हाथ मलता हुआ इधर उधर टहलता रहा। उसके हृदय में तूफान उठ रहा था—और उसने सबसे बड़ा साहस कर डालने का इरादा कर लिया था। वह नहीं जानता था कि किसी गुप्त कान ने उसकी बातें सुन ली हैं।

उसने अपनी सारी योजनाएँ अत्यन्त गोपनीय रख छोड़ी थीं। परन्तु शहबाज खां से वह न छिपा सका था। जब वह अपनी गुप्त आज्ञाएँ दे रहा था, शहबाज खां खीमें के बाहर छेद पर कान दिए सुन रहा था। और अब वह कीड़े की भांति रेंगता हुआ वहां से निकल रहा था।

परन्तु एक बात रह गई जो शहबाज खां न जान सका। औरंगजेब ने कुछ देर चुप रहकर अपने बेटे मुहम्मद सुलतान को बुलवाया और कहा—"तुम, प्यारे फ़र्जन्द अमीरों के साथ मुराद के खीमें में जाओ और अपनी हमराह दो सौ तैंतीस घोड़े जो हमने छाँट कर तैयार रख छोड़े हैं और बीस लाख रुपए नक़द ले जाओ और हमारी ओर से यह नजराना पेश करके उसे ममनून करो और हमारी ओर से अर्ज करो—कि यह दावते-शाही हुजूर की तन्दुरुस्ती और उन जख्मों के अच्छा हो जाने की खुशी में है जो हुजूर को मैदाने जंग में लगे थे। मासिवा इसके भागते हुए बद-नसीब दारा की गिरफ्तारी की पोशीदा तजवीजें भी हैं जिन पर गौर करना है।"

शाहजादे ने पिता का वास्तविक संकेत भी समझ लिया और वह सिर झुका कर चला गया।

६२

सुनहरा-जाल

उस दिन दिन भर मुराद ने शिकार में बिताया था। जिसका प्रबन्ध खास तौर पर औरंगजेब ने किया था। उसका अभिप्राय केवल इतना ही था—कि मुराद खूब थक जाय और कान भरने वालों की बातों पर वह विचार न कर सके। अधिकांश में औरंगजेब की यह अभिसंधि पूरी हुई थी।

और अब इस समय मुराद के खीमें में कुछ अजब समा बंधा था। कुछ कंचनियां ग्वालियर से आई थीं और उनका नाच गाना हो रहा था। काफूरी बत्तियों की धीमी रोशनी हो रही थी। गुलाब छिड़का जा रहा था। खुशामदी और ऐय्याश मुसाहिब उसे घेरे बैठे थे। रंडियां नाच रही थीं। तबला खड़क रहा था। सारंगी सिसकारी भर रही थी। मुराद मसनद पर पड़ा जाम पर जाम चढ़ा रहा था। लोग बढ़ बढ़ कर उसकी जवांमर्दी और दिलेरी की तारीफ कर रहे थे। और वह सुन सुन कर फूलकर कुप्पा हो रहा था।

इसी समय उसे मुहम्मद सुलतान और अमीर मीर खां के आने की इत्तला मिली। हुक्म होते ही मुहम्मद सुलतान ने नज़राना पेश किया। नज़राने के घोड़ों और नकद रुपयों के साथ बहुत से कमख्वाब के थान, जड़ाऊ जेवरात से भरी चांदी सोने की किश्तियां, इत्र—गुलाब जल और वेदमुश्क की बोतलें, खुशबूदार तेल और अनेक प्रकार की मिठाइयां और तर मेवे चांदी और हाथी दांत के मूल्यवान बर्तन, और सामान थे। ये सब चीजें जब उसके सामने पेश की गईं और अमीरों के साथ शाहज़ादा मुहम्मद

सुलतान ने सामने आकर आदाब बजाया तो मुराद 'खुशआमद' कह कर दोनों हाथ फैलाकर चिल्ला उठा।

प्रत्येक अमीर ने आगे बढ़कर तीन बार शाहाना आदाब बजाया और हुक्म पाकर बैठ गए। मुहम्मद सुलतान ने हाथ बांधकर कहा—"हुजूर, अब्बा जान ने हुजूरकी गुस्ल सेहत और तख्तपोशी के सिले में दावत दी है और अर्ज किया है कि तशरीफ लाकर जहांपनाह ममनून करें—मासिवा इसके दारा की गिरफ्तारी के लिए, जो दिल्ली में फौजकशी कर रहा है, चन्द पोशीदा तजवीजों पर भी मश्विरा करना है, जिसके लिए सभी उमरा और मशीर हाजिर हैं।"

अमीर मीर खां ने बीच ही में हाथ जोड़कर कहा—"जहांपनाह की तख्त नशीनी का एक छोटा सा जल्सा भी इस मौके पर करने का बन्दोवस्त हज़रत शाहज़ादा औरंगजेब ने किया है। जल्दी में जो सामान मुहैया हो सका, किया गया है। हज़रत शाहज़ादा औरंगजेब ने हतुल इमकान कोई कसर नहीं बाकी रखी है। अब हुजूर चलकर तख्तनशीनी की रस्म पूरी कर लीजिए—जिससे हम लोगों की मुरादें बर आएँ।"

दूसरे अमीर ने कहा-"हुजूर के जुलूस की खबर सुन कर दूर दूर से मशहूर तवायफों और गुनी लोगों का ठठ जमा हो गया है, जो हुजूर की फैयाज़ी और दरियादिली से वाक़िफ हैं, वे बड़ी बड़ी उम्मीदें लगाए बैठे हैं। और हमलोग—जो हुजूर के जांनिसार गुलाम हैं—आज ही के मुबारक दिन की आस में हैं। आज हम निहाल होंगे हुजूर, हमारी सालहा साल की मुरादें बर आएंगी।"

चापलूसी की इन बातों को सुनकर मुराद बहुत खुश हुआ। वह उन सबसे अनेक वादे करने लगा। एक मुसाहिब ने कहा—

'वह नया खीमा जो जहांपनाह की ताजपोशी के लिए तैयार कराया गया है, गुलाम अभी देख कर आया है। मुझे हैरत है कि

ऐसी भगादौड़ी में कैसे वह बेशक़ीमती ख़ीमा तैयार करा लिया गया। नीचे से ऊपर तक सुनहरी काम से सजा हुआ—चांदी की चोबों पर खड़ा जैसे पुकार पुकार कर जहांपनाह का इस्तक़बाल कर रहा है।"

दूसरे मुसाहिब ने कहा—

"और वे बारह हाथी जिनकी जोड़ का हाथी हमने आज तक नहीं देखा, न जाने कहां से लाए गए हैं। उनकी-सी सजधज तो आला हज़रत के ज़माने में भी नहीं देखी गई थी।"

तीसरे ने कहा—

"मैं तो उन घोड़ों पर फिदा हूं, जिनकी जोड़ का प्यारा जानवर इन आंखों ने नहीं देखा। हुजूर की सवारी के लिए जो घोड़ा आया है उसी को देखिए किसी ने देखा था ऐसा ज़ानवर ?"

मुराद ने सुन कर कहा—

"वाकई हमारे भाई ने जो मिहनत, मुहब्बत और सचाई ज़ाहिर की है और आपलोगों ने जो फर्मांबर्दारी दिखाई है उसका बयान करना मुमकिन नहीं है। बस, ज्योंही हम मौका पाएंगे-आप सबको आपकी कीमती खिदमात का इनाम देंगे।"

मुहम्मद सुलतान ने अब खड़े होकर दस्तबस्ता अर्ज की—"हज़रत, अब चलना चाहिए। अच्छी साइत जो नजूमियों ने बताई है उसमें अब देर नहीं है। इसके सिवा इस भारी काम को अंजाम देकर अपने सिर का बोझ हल्का करने और दिल की आरजू पूरा करने को अब्बाजान बहुत बेताब हो रहे हैं।"

मुराद ने प्रशंसा की दृष्टि से मुहम्मद सुलतान को देखा और कहा—"दुनियां देखे कि भाई की मुहब्बत कैसी होती है।" और फिर वह चलने के इरादे से उठ खड़ा हुआ।

मुराद ज्योंही घोड़े पर सवार हुआ कि अब्बास बदहवास दौड़ता हुआ आया और मालिक की रकाब पकड़कर बोला—

"मालिक।"

"क्या तुम इस वक्त फिर अपना चर्खा चलाओगे ?

"मगर साहबे आलम ?···आप·····।"

मुराद की त्योरियों में बल पड़ गए, उसने कहा—

"फिर साहबे आलम, जब कि अब सब लोग हमें जहाँपनाह कहते हैं यहां तक कि औरंगजेब भी।"

शाहनवाज ने मुराद के बिल्कुल पास आकर उसके कान में फुसफुसाते हुए कहा—"वह सब मक्कारी है शाहजादा, कहा मानिए आज वहां मत जाइए। गजब हो जायगा। मुझे सब कुछ मालूम है। बीमारी का बहाना करके रह जाइए। फिर वह खुद सब हाल चाल दर्याफ़ करने आयगा। तो मैं कपड़ा फाड़ डालूंगा।" उसने आंखों में ही संकेत करके कहा—"सब बन्दोवस्त तैयार है हुजूर।"

इसी समय ढोल दमामे और नक्कारे बज उठे। नकीबों ने नए बादशाह का जय जयकार किया।

मुराद ने क्रुद्ध होकर शाहनवाज से कहा—"हमेशा ही तुम ऐसा ही डर जाहिर करते रहते हो—हम जानते हैं कि ये सब बे बुनियाद बातें हैं। भाई औरंगजेब किस क़दर हमसे मुहब्बत करते हैं और हमारी इज्जत करते हैं। क्या तुम नहीं देखते कि वह हमें ही बादशाह मानते हैं। फिर तुम क्यों उनसे जलते हो। बस, हम नहीं चाहते कि तुम हमारे मुआमलात में हारिज हो।"

परन्तु शाहनवाज ने शाहजादा के गुस्से की परवा न की। वह कहता ही गया—"हजरत, ये सब अदब की मीठी मीठी बातें और चापलूसियां दगाबाजी की निशानी हैं। आपको मुनासिब है कि आगरे लौट चलें।"

परन्तु मुराद ने त्योरियों पर बल डालकर कहा—"शाहनवाज़, तुम बादशाहों को मश्विरा देने की जुरत न करो। अभी तुम्हें हमने वजीरे आजम नहीं बना दिया है। सल्तनत के मामलात में

मश्विरा करने के लिए हमारे पास चन्द तुमसे ज्यादा लायक मशीर हैं।" यह कह उसने घोड़े को एड़ लगाई।

पर शाहनवाज़ ने फिर उसकी राह रोककर और घोड़े की रास पकड़ कर कहा—"हुजूर, उस बाघ के मुंह में मत जाइए।" मगर मुराद ने अपनी तलवार हिला कर कहा—'जबतक यह मेरी बगल में है मुझे किसी का गम नहीं।" उसने घोड़ा बढ़ाया। शाहनवाज ने भी झटपट अपने भरोसे के आदमी इकट्ठे किए और हथियार बांध मालिक के पीछे दौड़ चला।

मुराद धीरे धीरे घोड़े पर सवार अमीरों से घिरा जा रहा था—सामने से इब्राहीम घोड़े पर सवार आता मिला। वह एक बहादुर ईमानदार सरदार था। उसने शाही अदब कायदे के अनुसार एक ओर होने की अपेक्षा आगे बढ़कर मुराद के घोड़े की रास पकड़ ली और मुराद के चेहरे पर करुण दृष्टि डालकर कहा—"आप किधर जा रहे हैं हजरत ?"

"हम ताजपोशी के लिए जा रहे हैं।"

"सुनकर खुशी हुई। मगर क्या जरूरत है कि ताजपोशी के लिए बादशाह दूसरे के घर जाय, जब कि अपने घर में हिफाजत का सब समान मुहैया है।"

यह कहकर उसने मुराद के घोड़े की बाग मोड़नी चाही। मगर मुराद ने जोश में आकर घोड़े को एड़ मारी और आगे बढ़ गया। इसपर इब्राहीम ने चिल्लाकर कहा—

"आप जेलखाने जा रहे हैं।"

शाहनवाज खां ने यह आवाज सुनी। वह घोड़े को एड़ देकर आगे बढ़ा। और मुराद के सामने जाकर बोला—'खुदा और रसूल की खातिर, हुजूर, इस दाना अमीर की बात मान लीजिए। और पीछे लौटिए।"

मुराद ने जोश में आकर तलवार की मूठ पर हाथ रखा और

कहा—

"अज़मन कसे बहादुर नेश्त।"

और काल प्रेरित की भांति घोड़ा दौड़ाता औरंगजेब की छावनी में घुस गया।

६३

पहिला शिकार

ज्योंही मुराद औरंगजेब के खीमें के पास पहुंचा—औरंगजेब ने अपने सब अमीरों सहित बाहर आकर उसका अभिनन्दन किया। औरंगजेब ने उसके मुंह की गर्द और पसीना पोंछा। और मसनद पर बैठाकर स्वयं उसके बगल में बैठा।

औपचारिक शिष्टाचार के बाद औरंगजेब ने नम्रतापूर्वक कहा—"यद्यपि आपने पहिले ही अपने को हिन्दुस्तान का बादशाह घोषित कर दिया है मगर आज के मुबारक दिन—जब दुश्मन पामाल हो गए, और हुजूर की शोहरत और नाम कमाल को पहुंच गया—हम आप के जांनिसार और हमदर्द अमीर इस मौके पर हुजूर की ताजपोशी का यह छोटा सा जल्सा करके अपने दिल की खुशी ज़ाहिर करना चाहते हैं।"

इसके बाद उसने इशारा किया और मुराद के सिर पर नई पगड़ी बांधी गई। औरंगजेब ने एक कीमती हीरों की कलंगी बांध दी। और सलाम किया। मुजरा हुआ—इसके बाद सब अमीरों ने नजराने पेश किए और सलाम की। मुराद ने शाहाने रुआब से सबकी सलाम कबूल की। और मन माने अलकाब-दर्जे और इनामात सबको देने की इच्छा प्रकट की।

इस पर औरंगजेब ने अर्ज की—"वह सब सोच समझकर होता रहेगा। फिलहाल हुक्म हो कि दस्तरख्वान निकाला जाय। हुजूर

दिन भर के थके मांदे हैं।"

मुराद ने हुक्म दिया। और आनन फानन एक से बढ़ कर एक दस्तरखान चुने गए। सब अमीर खाने बैठ गए। औरंगजेब भी मुराद के नजदीक बैठा। वह धीरे धीरे खाता और बातचीत करता जाता था। मुराद इत्मीनान से खा रहा था। वह बहुत खुश था और अमीरों से गप्पें भी मारता जाता था। हँसी मज़ाक जोरों पर चल रहा था। खाना खत्म होने पर जब काबुली और शीराजी शराब के पात्र और सुन्दरी कंचनियां उपास्थित किए गए—तो औरंगजेब ने मुस्कुरा कर मुराद से कहा—'इस मुबारक दिन की खुशी में जहांपनाह अपने जांनिसार इन अमीरों के साथ शग़ल कीजिए। मेरी बाबत तो हज़रत को मालूम ही है कि मैं अपने मज़हबी ख़यालात के बाइस इस ऐशो इश्रत की सोहबत में मौजूद नहीं रह सकता। ताहम जो लोग इस पुरलुत्फ जल्से में शरीक हैं मीर साहब और दीगर मुसाहिब आपकी खिदमत गुज़ारी के लिए हाज़िर रहेंगे।"

इतना कह कर औरंगजेब वहां से चला गया। फिर यह जल्सा और जोश में आया। शराब के दौर पर दौर चलने लगे। संगीत का दरिया बह चला और रूप का बाज़ार लग गया।

मुराद तो शराब और औरतों का प्रेमी था ही। अब उसने इतनी शराब पी कि तन बदन की कुछ भी खबर नहीं रही। वह बदहवासी में आंय बांय बकने और हँसने लगा। अन्त में बिल्कुल बेहोश होकर मसनद पर लेट गया। जल्सा बर्खास्त कर दिया गया। मीर खां ने उसके तलवार-खंजर खोल कर अपने कब्जे में कर लिए। और बाहर चला गया।

इसी समय औरंगजेब पांच छै गुलामों के साथ खीमें में आया। इस समय आदर सम्मान की कोई भावना उसके मुख पर न थी। उसके होठों और नेत्रों में कठोरता थी। उसने दो तीन

ठोकरें उसे मार कर कहा—"शर्म की बात है कि तुम बादशाह होकर इस कदर ग़ाफिल और बेखबर हो। अब दुनिया तुम्हें और मुझे क्या कहेगी।"

परन्तु ठोकर खाकर भी मुराद उसी भांति पड़ा रहा। इसपर औरंगजेब ने अपने गुलामों से जो प्रथम ही से मुस्तैद थे, कहा—'इस बदवख्त के हाथ-पांव बांध कर खिलवतखाने में ले चलो, ताकि नशा उतरने तक यह बेशर्मी का सोना वहीं सोए।' कहाबर गुलामों ने आनन फानन उसे दबोच लिया और उसके हाथ पैरों की मुश्कें कस लीं। आसन्न विपत्ति को उस बदहोशी में भी समझकर मुराद खूब चीखा-चिल्लाया—परन्तु उसके हाथों और पैरों में तुरन्त हथकड़ियां और बेड़ियां डाल दी गईं। और उसे भीतरी खीमें में पहुंचा दिया गया।

मुराद के नौकर, चाकर, सिपाही सब दूसरे खीमें में खा पी रहे थे। सभी ने डटकर शराब पी थी। और उनमें एक भी इस क़ाबिल न था—जिसके होश हवास दुरुस्त हों। फिर भी शाहनवाज ने मुराद का चिल्लाना सुना—और वह दो चार आदमियों के साथ तलवार लेकर दौड़ा। पर मीर आतिशकुली खां ने जो मुराद का ही अमीर था—उसे समझा बुझाकर ठण्डा कर दिया और उसे दूसरी ओर ले गया। उसने कहा—"कुछ नहीं जहांपनाह जरा ज्यादा पी गए हैं। फिर भी और मांग रहे हैं। और गालियां बक रहे हैं। बस इतनी ही बात है। मैं स्वयं देखे आ रहा हूँ।" शाहनवाज खां उसके विश्वास में रह गया।

मीर आतिशकुली खां उसे समझा बुझाकर मुराद की छावनी में ले गया। उसने सोचा कि वहां जाकर कुछ और मदद इकट्ठी कर लाऊं। परन्तु मीर आतिश ने मौका पाकर उसका सिर काट डाला। फिर उसने छावनी में देखा—कि कुछ उड़ती सी खबर यहां भी पहुंच गई है। सिपाही दल बांध बांधकर इस बात की चर्चा कर रहे

थे। उसने उन सब को यह कहकर ठण्डा कर दिया कि मैं अपनी आंखों से देखे आ रहा हूँ। जहांपनाह ने ज़रा ज्यादा चढ़ा ली थी; वे अभी वहीं पर आराम फर्मा रहे हैं। सुबह तशरीफ ले आएँगे। सिपाही अपने ही सेनापति की बात पर विश्वास कर गए। इसके बाद उसने सब बड़े बड़े अधिकारियों को बड़े बड़े सब्ज बाग दिखाए। वे कुछ कुछ तो पहिले ही से जानते थे—और अब उच्चाकांक्षा की आशा में कान में तेल डाल बैठे। जिनपर संदेह रहा—उन्हें भारी भारी घूसें दी गईं। वेतन दूने कर दिए गए।

इस प्रकार कुछ घन्टों ही में इस शराबी और मूर्ख जहांपनाह को लोग एक बारगी ही भूल बैठे। और मामले का गूढ़ मर्म समझ गए।

जब औरंगजेब को सूचना मिल गई कि उधर सब ठीक ठाक हो गया है और अब पत्ता तक खड़कने का भय नहीं है, तब उसने हथकड़ियों और बेड़ियों में जकड़े हुए उस अपने सगे भाई को जिसे आज ही संध्या काल में जहांपनाह कह कर उसने मुंह की गर्द पोछी थी एक बन्द जनानी फौलादी अम्बारी में बन्द करके—तेज हथिनी पर सलीम गढ़ के किले में कैद करने को दिल्ली की ओर रवाना कर दिया, जिसकी रक्षा के लिए मुहम्मद सुलतान नंगी तलवार हाथ में लिए पांच सौ सवारों के साथ उसी अंधेरी रात में रवाना हो गया।

प्रभात होते ही मुराद के सब अमीरों और मुसाहिबों ने आकर औरंगजेब को सलाम की। और उसकी सेवाएँ स्वीकार कीं। औरंगजेब ने सबके दर्जे बढ़ाए। भारी भारी इलम दिए। तनखाहें दूनी कर दीं। सैनिकों को तीन माह का वेतन इनाम में बांटा। और उन्हें अपनी सेवा में रख लिया। दो पहर होते होते मुराद की सारी सेना—दरबारी अमीर उमराव औरंगजेब का जय जयकार करने लगे।

इस झंझट से निबट कर अब उसने अपने विश्वासी सेवक ख़ानए दौरान को एक अच्छी फौज देकर इलाहाबाद को रवाना कर दिया और उसे हुक्म दिया कि वह वहां के हाकिम से इलाहाबाद छीन ले—जो दारा का नियुक्त किया हुआ था। साथ ही उसने विजेता बहादुर खां को एक फौज की सरदारी सौंपकर उसे दारा के पीछे भेज दिया जो लाहौर में फौजें जमा कर रहा था। इसके बाद वह इत्मीनान से दिल्ली की ओर रवाना हुआ।

६४

आलमगीर ग़ाजी

औरंगजेब ने बड़ी बड़ी ऐतिहासिक घटनाएं बड़ी तेज़ी से तय कर डालीं। उनतीस मई सन् १६५८ को उसने समूमगढ़ में विजय पाई। पहिली जून को वह आगरे पहुँचा। पांचवीं जून को आगरे का क़िला घेरा, आठ जून को क़िला फ़तह किया, दस जून को बादशाह को कैद किया। तेरह जून को वह आगरे से चला और पचीस जून को मथुरा में मुराद को कैद किया। इस प्रकार एक महीने से भी कुछ कम समय में उसने इतनी बड़ी बड़ी साहसिक घटनाएं कर डालीं जिनका ऐतिहासिक महत्व बहुत अधिक था।

इधर तो उसने मुराद को सलीम गढ़ की ओर रवाना किया। उधर ख़ानए दौरान को एक दस्ता फौज देकर इलाहाबाद की ओर रवाना कर दिया कि वह इलाहाबाद जाकर वहां के दारा द्वारा नियुक्त हाक़िम से इलाहाबाद छीन कर उस पर दख़ल कर ले। यह अत्यन्त दूरंदेशी का महत्वपूर्ण क़दम था—क्योंकि इलाहाबाद बंगाल का द्वार था और अभी उसका प्रबल शत्रु शाह शुजा बंगाल में अपनी जंगी तैयारी कर रहा था जिसकी तरफ से औरंगजेब बेख़बर नहीं हो सकता था।

दारा पांचवीं जून को दिल्ली पहुँच चुका था। और अभी तक अपनी इधर की खटपट में फंसे रह कर औरंगजेब उसके लिए कुछ भी बन्दोवस्त न कर सका था। दिल्ली पहुँचते पहुँचते दारा के साथ पांच हजार सवार जमा हो गए थे। अब उसने दिल्ली पहुँचते ही नई सेना भर्ती करना प्रारम्भ कर दिया। धन उसके पास काफी था। बादशाह ने उसे दो हाथी अशर्फियों से लाद कर भेजे थे। उसके पास भी काफी हीरा, मोती, सोना था। फिर दिल्ली के क़िले से भी उसे भारी मदद मिल गई थी। इस कारण इन बीस दिनों के अवकाश में उसने एक अच्छी सेना तैयार कर ली।

औरंगजेब को ये सब सूचनाएं मिलती रहती थीं। अब उसने बहादुर खां को एक ज़बर्दस्त फौज देकर दारा को दिल्ली से खदेड़ने और अन्त तक उसका पीछा करने को भेजा। यह सूचना पाते ही दारा ने लाहौर की तरफ कूच बोल दिया। वह बहुत दिनों तक लाहौर का हाकिम रह चुका था। और इस समय वहां का हाकिम उसका विश्वस्त सरदार गैरत खां था। दिल्ली से लाहौर पहुंचने में उसे बाईस दिन लगे। वहां के किलेदार ने उसकी पूरी सहायता की और दारा ने बीस हजार सेना एकत्र कर ली। साथ ही सतलज के तलवान और रूपार के घाटों पर भी चौकियां बैठा दीं। और वह बड़ी तत्परता से लाहौर की किलेबन्दी में संलग्न हो गया।

मुराद की और अपनी संयुक्त सेना को संगठन करने और नई नई व्यवस्थाएं करने में औरंगजेब को कुछ दिन मथुरा में अटकना पड़ा। अन्त में छै जुलाई को उसने दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। जहां उसका धूमधाम से स्वागत किया गया।

दिल्ली को मुगल साम्राज्य की नई राजधानी बनाने की जितनी आवश्यक तैयारियां थीं उसने शीघ्रता से कीं। नए ओहदे-

दार, कर्मचारी-व्यवस्थापक, प्रबन्धक नियत किए। शासन में नए-नए फेरफार किए और सुदृढ़ प्रबन्ध की स्थापना की।

अंत में इक्कीस जुलाई को उसने अत्यन्त सादा ढंग पर अपनी तख्तनशीनी की रस्म अदा की। और सात करोड़ मूल्य के तख्त ताऊस पर बैठ कर आलमगीर गाजी के नाम से उसने अपने को मुग़ल साम्राज्य का बादशाह घोषित किया। और अपने नाम का खुतबा पढ़ाया। नए वजीरों, अमीरों और मनसबदारों को जागीरें, खिताब और इनाम दिए।

इस व्यस्त कार्य-क्रम में भी दारा पर उसकी नज़र थी, जो लाहौर में अपने क़दम जमाए था। वह जानता था कि पंजाब और काबुल के सूबेदार उसके दोस्त हैं। वे उसे पूरी सहायता देंगे। वह नहीं चाहता था कि दारा उनसे सहायता पाकर सबल हो जाय। इसलिए उसने खलीलुल्ला खां को लाहौर का हाकिम नियुक्त कर और उसे दारा के पीछा करने वालों की मदद करने की हिदायतें दे कर लाहौर की ओर रवाना कर दिया।

इसके बाद उसने दिल्ली के किले को व्यवस्थित किया। अपने हरम को लाकर हरम का भी प्रबन्ध किया। शहर में व्यवस्था क़ायम की, कारोबार जारी किया और अब साम्राज्य में अमनोआराम की घोषणा की। यह सब प्रबन्ध करके वह स्वयं अपने शत्रु दारा के पीछे लगा।

बहादुर खां ने पाँच अगस्त को रूपार के पास एकाएक सतलज को पार किया। दारा के सेनानायकों को अब व्यास की ओर पीछे हटना पड़ा। इसी बीच औरंगजेब स्वयं सतलज जा पहुंचा। यह खबर पाकर दारा लाहौर छोड़ मुलतान की ओर जल-मार्ग से भागा। इस समय उसका परिवार भी उसके साथ था। उसके पीछे पीछे औरंगजेब की सेना लगी थी।

दारा की इच्छा, लाहौर में वहां की भलीभांति किलेबन्दी

करके, अपने दल का संगठन करने की थी। पर औरंगजेब ने इसका उसे अवकाश नहीं दिया। यद्यपि गर्मी बहुत अधिक थी—फिर भी उसकी सेना रात दिन बराबर बढ़ती ही चली जाती थी। सिपाहियों का साहस बढ़ाने के लिए वह स्वयं थोड़े से मनुष्यों के साथ प्रायः चार-पांच कोस सेना के आगे चलता था। वह साधारण सिपाही की भांति जैसा मिलता पानी पीता, और सूखी रूखी रोटी खाता, रात को पृथ्वी पर सो रहता था।

यदि दारा लाहौर से काबुल की ओर जाता तो ठीक करता। काबुल न जाकर उसने भारी भूल की। उसके शुभचिन्तकों ने काबुल जाने के लिए उसे बहुत समझाया था। पर सदा की भांति इस बार भी उसने उनकी बात पर ध्यान नहीं दिया। इस समय काबुल का हाकिम महावत खां था—जो एक प्रतिष्ठित बूढ़ा रईस था। वह औरंगजेब का मित्र भी न था, तथा उसके आधीन दस सहस्त्र शाही सेना भी थी। जो ईरानियों, उजबकों, अफ़गानों के विरुद्ध रणक्षेत्र में आ सकती थी। दारा के पास धन रत्न की भी कमी न थी। यदि वह वहां जाता तो महावत खां और उसकी सेना की उसे अवश्य सहायता मिलती। और वे उसका पक्ष ग्रहण करते। इसके सिवा ईरान और उजबक देश भी वहां से निकट थे। जहां से उसे अच्छी लड़ाकू सेना प्राप्त हो सकती थी। वह इस बात को भूल गया कि हुमायूं को जब शेरशाह ने हरा कर भारतवर्ष से निकाल बाहर किया था तब उसने ईरानियों ही से सहायता लेकर फिर राज्य प्राप्त किया था। पर दारा का स्वभाव ही ऐसा था कि समझदार और बुद्धिमानों की सम्मति पर वह कान ही नहीं देता था।

इसबार भी उसने ऐसा ही किया। काबुल न जाकर उसने सिन्ध की राह ली। सक्कर में औरंगजेब को सूचना मिली कि वह भक्खर के किले में अपनी बड़ी बड़ी तोपें और बहुत सा

माल असबाब छोड़ कर सहवान की ओर भाग गया है। जो सिन्धु नद के मध्य में था। जब औरंगजेब को दारा की इच्छा का पता लग गया, तो अब उसका पीछा करने का विचार उसने त्याग दिया। यह देख कर कि वह काबुल की ओर नहीं जाता है उसके मन का खटका निकल गया। और उसने अब अपने दूध-भाई मीरबाबा की आधीनता में आठ दस हजार सवार उसका पीछा करने को छोड़े। और वह स्वयं शीघ्रता से आगरे की ओर लौटा।

इस समय अनेक चिन्ताएं उसके मन में उठ रही थीं। वह सोच रहा था, उसकी गैरहाजिरी में न जाने राजधानी में क्या हो। संभव है जय सिह और जसवन्त सिंह बादशाह को कैद से छुड़ा दें। या सुलतान शुजा ही आगरे पर चढ़ आए। उसे इस बात की सूचनाएं मिल रही थीं कि शुजा निरन्तर सेनाएं भर्ती कर रहा है। उसे यह भी भय था कि कहीं सुलेमान शिकोह ही श्रीनगर के राजा की सेना लेकर पहाड़ों से न उतर पड़े।

सदा की भांति वह अपनी सेना से चार कोस आगे आगे चल रहा था। थोड़े से चुने हुए सैनिक और सरदार उसके साथ थे। अभी लाहौर कुछ अन्तर पर था। वह लाहौर शीघ्र से शीघ्र पहुंचना चाहता था। इसी समय उसने देखा—महाराज जय सिंह चार-पांच हजार वीर योद्धाओं के साथ उसकी ओर बढ़े आ रहे हैं। वह एक बार भय से सिहर उठा। वह वास्तव में अत्यन्त खतरनाक स्थिति में आ गया था। जय सिंह बादशाह के वैसे प्रेमी न थे, वह डर गया कि यदि इस समय महाराज जय सिंह जो शाहजहां के परम भक्त हैं, उसे कैद कर लें तो क्या हो।

लोगों का अनुमान था कि वास्तव मे राजा साहेब औरंगजेब को पकड़ने ही के लिए आए थे। परन्तु औरंगजेब ने असीम धैर्य का परिचय दिया। वह दूर से ही घोड़ा दौड़ाता हुआ और हाथ

हिलाता हुआ, प्रसन्नता प्रकट करता हुआ आगे बढ़ा—और पास पहुँच कर कहा—"सलामत वाशद राजा जी, सलामत वाशद बाबा जी, खुशामदीद, खुशामदीद। मैं बयान नहीं कर सकता कि मुझे आपके आने का किस क़दर इन्तजार था। बहुत ही खूब हुआ कि आप आ गए। अब तो लड़ाई खत्म हो चुकी। दारा शिकोह तबाहोबरबाद होकर खाक छानता फिरता है। मैंने मीरबाबा को उसके पीछे भेजा है, अग़लब है कि वह जल्द गिरफ्तार हो जायगा।"

इतना कहकर उसने अपने कंठ की मोतियों की माला उतार कर राजा साहेब के गले में डाल दी। और कहा—"हमारी फौज निहायत थकी है। इसलिए आप बहुत जल्द आगे बढ़ कर लाहौर पहुंच जाइए। वहां बदअमनी का मुझे अंदेशा है। मैं आपको पंजाब का सूबेदार मुकर्रर करता हूँ। और तमाम अख्तियारात देता हूं। मैं भी बहुत जल्द आप से आ मिलूंगा। हां, रुखसत होने से पहिले मुझे वाजिब है कि सुलेमान शिकोह के मुआमिले में आपने जो कारगुज़ारी की है, उसके लिए आपका शुक्रिया अदा करूँ। लेकिन आपने दिलेर खां को कहां छोड़ा? खैर, मैं उसे सख्त सज़ा दूँगा। अब आप जल्द लाहौर तशरीफ ले जांय। खुदा-हाफिज़!"

६५

सुलेमान शिकोह की दुर्दशा

बहादुरपुर में हार खा कर जब शुजा पटने की ओर भागा तो उसने मुंगेर में खाइयों और तोपखानों से सारा रास्ता रोक लिया। और जब महाराज मिर्जा राजा जय सिंह की सीख न मान कर सुलेमान शिकोह उसके पीछे दौड़ चला, तो उसे मुंगेर से पन्द्रह मील

दक्षिण पश्चिम में सूरजगढ़ में ही अटकना पड़ा। वह किसी तरह यहां से आगे बढ़ ही नहीं सका। यहीं उसे धरमत की पराजय के समाचार मिले, तो उसने लाचार होकर शुजा से सन्धि कर ली और उसे बंगाल, पूर्व बिहार और उड़ीसा का प्रदेश दे वह वापस आगरे की ओर फिरा।

परन्तु तब तक बहुत पानी बह चुका था। अभी वह इलाहाबाद से थोड़ा ही आगे बढ़ा था कि उसे समूमगढ़ की लड़ाई में अपने पिता के सर्वनाश का समाचार मिला। औरंगजेब के खत भी यहीं मिर्जा राजा जय सिंह और दिलेर खां को मिल चुके थे।

औरंगजेब का पत्र पाकर मिर्जा राजा जय सिंह विचार में पड़ गए। शाहजहां और दारा की ठीक ठीक दुर्दशा का उन्हें ज्ञान न था। शाही खानदान के आदमियों और शाहज़ादों पर हाथ उठाना हर हालत में अक्षम्य अपराध है, यह मुगल नीति वे जानते थे। इसके सिवा सुलेमान शिकोह के पराक्रम और साहस से भी वह परिचित थे। वह यह भी जानते थे कि शाहज़ादा आसानी से आधीन नहीं होगा।

सोच समझ कर उन्होंने अपने मित्र दिलेर खां से सलाह मश्वरा किया। दोनों ने डगमगाती मुग़ल राज्य की नाव की सच्ची परिस्थिति पर विचार किया। कुछ खानगी स्वार्थों के सम्बन्ध में उन्होंने आपस में कौल करार भी किया। फिर महाराज सुलेमान शिकोह के खीमें में पहुंचे और कहा—

"शाहज़ादा, आप जिस खतरनाक हालत में आ पड़े हैं, उसे आपसे छिपा रखना हम मुनासिब नहीं समझते। अब पहले जैसी परिस्थिति नहीं है। हालात ऐसे बदल गए हैं कि इस वक्त आपको न तो दिलेर खां पर भरोसा करना चाहिए, न दाऊद खां पर, न अपनी फौज पर। अब आप अपने वालिद की मदद करने को अगर आगे बढ़ेंगे तो जरूर खता खाएंगे। लिहाज़ा मेरी आप

को यह नेक राय है कि आप जल्द से जल्द गढ़वाल के पहाड़ों की ओर चले जांय। और वहां के राजा का आश्रय लें। मुझे आशा है वह आपको आश्रय देगा। स्थान दुर्गम होने और औरंगजेब के सौ झंझटों में फंसे रहने के कारण वह वहां पहुँच भी न सकेगा। आप वहां रह कर बदलते हुए हालात को देखते रहें और जब मौका देखें आकर अपनी जवांमर्दी और बहादुरी दिखाएं।"

यह सुनते ही शाहज़ादे का चेहरा ज़र्द हो गया। और वह समझ गया कि अपने भी बेगाने हो गए। अब किसी पर भी भरोसा किया नहीं जा सकता। वह यह भी समझ गया कि यहां रहना मौत के मुंह में जाना है। न जाने कौन विश्वासघाती पकड़ कर कैद कर ले।

उसने समझ लिया कि मिर्ज़ा राजा और दिलेर खां अब उसे सहायता न देंगे। इसी समय उसने सुना कि उसका पिता दिल्ली से लाहौर को भागा जा रहा है। उसने अपने मित्रों, मुसाहिबों और मनसबदारों से सलाह ली। मनसबदारों, मित्रों और सैनिकों ने उसके साथ जाना पसन्द किया, उन्हें संग लेकर वह इलाहाबाद को लौटा। उसका इरादा था कि गंगा के किनारे होते हुए पहाड़ों के पास नदियां पार कर के किसी तरह पंजाब में अपने पिता से जा मिले। वह एक वीर तरुण था। वह तेजी और बुद्धिमानी से चला। परन्तु सेना का अधिकांश मिर्ज़ा राजा और दिलेर खां के साथ रह गया था। उन्होंने उसे अपना बहुत सा मूल्यवान सामान छोड़ जाने को लाचार किया। जब वह चलने लगा तो उन्होंने उसका सब माल असबाब लुटवा लिया। जिसमें मुहरों से लदा हुआ एक हाथी भी था। इस हाथी को गवां देने पर लोगों ने समझ लिया कि जब लक्ष्मी ही चली गई तब उसके साथ जाने से क्या लाभ? बहुत से आदमियों ने उस अभागे का साथ छोड़ दिया। अब बहुत कम आदमी उसके साथ रह गए।

फिर भी वह आगे बढ़ता ही गया। परन्तु उसने देखा हर दिशा में भारी शत्रु सेनाएं उसका मार्ग रोके हुए थीं। लोग उसका साथ छोड़ते जाते थे। राह में गंवार देहातियों ने उसे बार-बार लूटा। और उसके साथियों को मार डाला। इस प्रकार निराश होकर वह शरण के लिए श्रीनगर के पहाड़ों में चला गया। गढ़वाल के राजा पृथ्वी सिंह ने उसे इस शर्त्त पर आश्रय दिया कि वह सारी सेना छोड़ दे और अपने कुटुम्बियों और केवल सत्रह नौकरों को साथ लाए। अन्त में सुलेमान को यही करना पड़ा।

६६

खजुआ की लड़ाई

सुलेमान शिकोह से सुलह करके शुजा ने फिर से अपना सैन्य संगठन किया। और जब उसने सुना कि औरंगजेब मुलतान और सिंध की ओर दारा के पीछे घूम रहा है तो वह साहस करके आगरे की ओर फिर लौटा। औरंगजेब ने तख्त पर बैठते ही उसे अत्यन्त प्रेम और सम्मानपूर्वक लिखा था कि बिहार और बंगाल का समूचा प्रान्त आप का है। परन्तु शुजा ने इसकी परवा न की और औरंगजेब की गैरहाजिरी से लाभ उठाना चाहा। उसकी महत्वाकांक्षा फिर जाग्रत हो उठी।

औरंगजेब को ज्योंही इस बात की सूचना मिली, वह ताबड़तोड़ मुलतान से लौटा। इस समय तक शुजा इलाहाबाद से आगे और तीन पड़ाव बढ़ आया था और खजुआ नाम के एक छोटे से गांव के पास तालाब के किनारे डेरा डाल चुका था। औरंगजेब ने शुजा के लश्कर को यहीं आ रोका। और शुजा के पड़ाव से आठ मील के अन्तर पर पश्चिम में कोंड़ा में अपने पुत्र से आ मिला, जिसे वह पहिले ही शुजा के अवरोध के लिए भेज चुका था।

इसी दिन मीरजुमला भी दक्षिण से आकर उसे आ मिला। दोनों लश्करों के बीच लड़ाई के योग्य विशाल मैदान था। औरंगजेब लड़ने को बेचैन हो रहा था।

दो जनवरी को औरंगजेब ने अपनी सेना नदी पार की, और व्यूहबद्ध कर आगे बढ़ाई। और शत्रु के पड़ाव से एक मील के अन्तर पर जा डटा। उसी रात को मीरजुमला ने दोनों सेनाओं के बीच पड़ने वाली एक छोटी सी पहाड़ी पर अपना तोपखाना जमा लिया। उसने चालीस तोपें इस युक्ति से लगाईं कि जब चाहे भागती या बढ़ती हुई सेना पर गोले बरसा सके। रातभर औरंगजेब की सेना में तैयारियां होती रहीं।

इस समय औरंगजेब की कमान में पचास हजार सेना थी, जो शुजा की तेईस हजार सेना का सामना करने को खड़ी थी।

शुजा को मालूम हो गया कि अपने से तिगुनी सेना से वह परंपरागत युद्ध प्रणाली से नहीं लड़ सकता है, इसलिए उसने अपनी सारी सेना तोपखाने के पीछे एक कतार में खड़ी की। और एक मजबूत किलेबन्दी बनाई।

दो घड़ी दिन चढ़े, लड़ाई छिड़ी। तोपों, गोलों और बन्दूकों की भयंकर गर्जना के साथ युद्ध आरम्भ हुआ। शुजा अपने स्थान पर जमकर औरंगजेब के आक्रमणों को व्यर्थ करने लगा। इससे औरंगजेब कुछ कठिनाई में पड़ गया। शुजा चाहता था कि गर्मी से घबरा कर शत्रु दल नदी की ओर लौटे तो उस पर सहसा टूट पड़े। औरंगजेब शुजा की इस चाल को समझ गया। अतः वह बढ़ता ही गया, पीछे न हटा। अंत में दोनों सेनाएं एक दूसरे से भिड़ गईं। और तीरों की वर्षा होने लगी। सैयद आलम ने तीन मतवाले हाथियों को आगे आगे खदेड़ते हुए औरंगजेब के बाएं पहलू पर आक्रमण किया। यह आक्रमण इतना भीषण था कि औरंगजेब का वाम पक्ष भंग हो गया और सेना भाग खड़ी हुई।

इसी समय न जाने कैसे औरंगजेब के मरने की ग़लत खबर फौज में फैल गई। जिससे उसकी सेना में भगदड़ शुरू होने लगी। ठीक इसी समय इसके मध्य भाग पर तीव्र आक्रमण हुआ। उस समय औरंगजेब की रक्षा के लिए केवल दो हज़ार सवार वहां थे—परन्तु उसकी सेना के दो पिछले दस्तों ने आगे बढ़ कर शत्रुओं की राह रोक ली। औरंगजेब ने बाईं ओर मुड़ कर सैयद आलम से मोर्चा ले उसे पीछे खदेड़ दिया। परन्तु तीनों मदमस्त हाथी तो बढ़े ही चले आ रहे थे। उनमें से एक औरंगजेब के हाथी के पास तक आ पहुँचा। यह एक संकट काल था। पर औरंगजेब ने अपने हाथी के पैरों में जंजीरें डाल कर उसे वहां से न हटने दिया। और वह चट्टान की भांति अचल खड़ा रहा। शत्रु के हाथी के महावत को उसने गोली से मार गिराया। फिर शाही महावत इस मस्त हाथी पर पीछे से सवार हो गया। और उसे काबू में कर लिया।

अब औरंगजेब ने अपने दाहिने पार्श्व पर रुख किया, जिसे शाहजादा बुलन्द अख्तर ने बुरी तरह झंझोड़ डाला था। यद्यपि शाहजादे की सेना अधिक न थी, पर उसने औरंगजेब की सेना के पैर उखाड़ दिए थे। औरंगजेब ने बड़ी दृढ़ता से उस पक्ष को व्यवस्थित किया। और अब दाहिना पक्ष सबल करके आगे बढ़ा। शीघ्र ही उसने शाहजादे की सेना को छिन्न-भिन्न कर दिया। इतने ही में औरंगजेब को एक नई विपद का सामना करना पड़ा। जिसने उसके सारे ही लश्कर को घबराहट में डाल दिया। जोधपुर के राजा जसवन्तसिंह—जो बड़े सद्भाव से औरंगजेब से आ मिले थे, और इस युद्ध में दाहिने पक्ष के नायक थे, उन्होंने एकाएक विश्वास-घात करके औरंगजेब की सेना के पिछले भाग पर आक्रमण कर दिया। उस मार से घबरा कर वह सेना तितर बितर होकर भाग चली। राजा साहेब ने खजाना और असबाब लूटना आरम्भ किया। सारी सेना में भय और आतंक व्याप गया। इसी समय

उपयुक्त अवसर समझ शुजा ने एक बहुत बड़ा आक्रमण किया। जिससे औरंगजेब की सेना में भगदड़ मच गई। औरंगजेब भागती सेना को रोक ही रहा था, कि एक तीर लगने से औरंगजेब का महावत मारा गया और उसे हाथी का सम्हालना कठिन हो गया। वह बिल्कुल लाचार होकर हाथी से उतरना चाह ही रहा था कि मीरजुमला घोड़ा दौड़ाता आया और कहा—"हज़रत, यह क्या गजब करते हैं, यह दकन नहीं है, क्या भाग कर दकन जाएंगे।" इस समय संध्या हो रही थी और मीरजुमला दिनभर बहुत व्यस्त रहा था। औरंगजेब हाथी पर जम गया। पर उसके चारों ओर शत्रु फैल गए थे और उसे भय हो रहा था कि कहीं मैं शत्रु के हाथ न पड़ जाऊँ।

इसी समय जुल्फिकार खां और मुहम्मद सुलतान ने अपनी ताज़ादम फौजों को आगे बढ़ा कर शत्रु पर हमला किया। शुजा की फौजों की कतारें बिखरने लगीं। मीरजुमला के प्रभाव से भागती सेना लौट पड़ी। अब सारी ही शाही सेना आगे बढ़ी और उसने शुजा के मध्य भाग को चारों ओर से घेर लिया। तोपों के गोले शुजा के सिर पर से जा रहे थे। इससे वह ख़तरे से बचने के लिए हाथी से उतर कर घोड़े पर सवार हो गया। शुजा के ऐसा करते ही युद्ध की समाप्ति हो गई। जो चूक औरंगजेब करते करते बचा, वह शुजा ने की। हाथी को सूना देख सेना में यह अफवाह फैल गई कि शुजा मारा गया। और देखते ही देखते उसके बंगाली सैनिक भाग खड़े हुए। शुजा अपने लड़कों और सैयद आलम के साथ रणक्षेत्र से भाग गया। औरंगजेब ने उसकी छावनी लूट ली।

६७

औरंगजेब की उलझन

औरंगजेब की इस आकस्मिक जीत को देख कर राजा जसवन्त सिंह लूट में जो हाथ लगा लेकर आगरे की ओर चल दिए। जिस समय वे आगरे पहुँचे, आगरे में यह अफवाह फैल चली थी कि औरंगजेब लड़ाई में हार गया और मीरजुमला के साथ पकड़ लिया गया। और शुजा अपनी विजयिनी सेना लिए आ रहा है। इन समाचारों को सुन कर आगरे के हाकिम शाइस्त खां, जो औरंगजेब के मामा थे, बहुत घबरा गए। और ज़हर पीकर जान देने पर आमादा हो गए। परन्तु उनके जनानखाने की औरतों ने प्याला उनके हाथ से छीन कर फेंक दिया। दो दिन तक आगरे में अंधेरगर्दी रही। यदि जसवन्त सिंह चाहते तो इस बीच में शाहजहां को कैद से छुड़ा सकते थे, पर वह यह भी न कर सके। और आगरे में अधिक ठहरना ठीक न समझ मारवाड़ को कूच कर गए।

औरंगजेब यद्यपि लड़ाई जीत गया था—परन्तु वह बड़ी ही उलझन में फंस गया। सबसे बड़ी चिन्ता उसे जसवन्त सिंह की थी। वे न जाने आगरे में जाकर क्या उत्पात खड़ा करें। आगरे की अब उसे ज़बर्दस्त चिन्ता लग गई। और उसने निर्णय किया कि आगरे लौटना उसके लिए आवश्यक है। उसे यह भी शीघ्र ही मालूम हो गया कि इस लड़ाई में शुजा की कुछ विशेष हानि नहीं हुई है। उसकी उदारता और धनाड्यता के कारण वे सब राजा—जिनके राज्य गंगा के दोनों किनारों पर थे–उसकी सहायता के लिए सेनाएं भेज रहे थे। उसने यह भी सुना कि शुजा इलाहाबाद में

पांव जमाना चाहता है, जो गंगा घाट के रूप में बंगाल का द्वार है।

अब औरंगजेब की आशाएं केवल दो व्यक्तियों पर आधारित थीं। एक उसका बड़ा लड़का मुहम्मद सुलतान और दूसरा मीर-जुमला। परन्तु इन दोनों से वह भय भी खाता था। जबसे मुहम्मद सुलतान ने शाहजहां को कैद किया और आगरे के किले पर विजय पाई थी, उसके हौसले बढ़ गए थे। और वह कुछ निरंकुश और स्वतंत्र हो गया था। मीरजुमला के धैर्य, साहस और सद्गुणों का औरंगजेब प्रशंसक था। पर उसकी शक्ति से डरता था। भारत-वर्ष भर में यह प्रसिद्ध था कि उसके पास बेशुमार धन है और वह बीस मन हीरों का स्वामी है। यह भी सब जानते थे कि वह युक्ति, नीति और बुद्धि मे कठिन से कठिन काम कर सकता है। कूटनीति-पटु औरंगजेब चाहता था कि ये दोनों राजधानी से दूर भी रहें और इन्हें बुरा भी न लगे। इसलिए एक बड़ी सेना उन दोनों को सुपुर्द कर उन्हें शुजा के पीछे भेज दिया। विदा करते समय मीरजुमला से उसने कहा—"फ़तह के बाद बंगाल के ज़र्खेज सूबे की हुकूमत आपके ही क़ब्जे में रहेगी। बल्के आपके बाद आपका बेटा भी इस सूबेदारी का मुस्तहक समझा जायगा। गो कि आपकी खिदमतें बहुत सी इनायतों के काबिल हैं। मगर उनमें से एक बिलफैल यह है कि आप जब शुजा पर फ़तह पा लेंगे—तब, अमीरुल उमर का खिताब जो हिन्दुस्तान का सबसे बड़ा खिताब है, आपको दिया जायगा।"

इस प्रकार मीरजुमला को संतुष्ट करके उसने अपने बेटे मुहम्मद सुलतान से कहा—'बेटा, ख़याल करो कि मेरी औलाद में तुम सबसे बड़े हो, और अपने ही काम पर जाते हो। बेशक, तुमने बड़े बड़े काम किए हैं, मगर सच पूछो तो अभी कुछ नहीं हुआ है। जब तक सुलतान शुजा को—जो हमारा सबसे बड़ा दुश्मन है,

शिकस्त देकर न पकड़ लाओ, हमारे सारे ही काम अधूरे हैं।" इतना कह कर औरंगजेब ने मीरजुमला और मुहम्मद सुलतान को सिरोपाव दे अनेक हाथी घोड़े भेंट दिए। और विदा किया।

परन्तु उसने मुहम्मद सुलतान की बेगम और मीरजुमला के बेटे मुहम्मद अमीन को अपने पास रोक लिया। उसने मुहम्मद सुलतान से कहा—"बेगम गोलकुण्डा के बादशाह की बेटी है, ऐसी ऊँचे खानदान की खातून को लड़ाई के मैदान में जाना मुनासिब नहीं है।" मुहम्मद अमीन की बाबत यह कहा—"उसकी उम्र बहुत कम है और हमें उसे देखकर बहुत मुहब्बत होती है। मैं कुछ दिन उसे अपनी आंखों के सामने रखूंगा और उसकी तालीम का उम्दा बन्दोबस्त करूंगा।" पर वास्तव में उन दोनों की जान बंधक थी। जिसके कारण मीरजुमला और मुहम्मद सुलतान किसी प्रकार का कपटाचरण न कर सकें।

यह सब इन्तजाम करके और सब आगा पीछा सोच कर औरंगजेब आगरे लौटा।

६८

शुजा की शामत

रण क्षेत्र से भाग कर शुजा ने गंगा के इस पार आकर इलाहाबाद में दम लिया। वह इस बात से डर रहा था कि बंगाल के निचले भाग के वे राजा लोग जो उसकी लूट खसोट के शिकार बने थे—इस अवसर पर उपद्रव न खड़ा कर दें। जब उसे औरंगजेब के प्रबन्ध का पता लगा तो उसे यह भय हुआ कि कहीं ऐसा न हो कि मीरजुमला इलाहाबाद को छोड़ किसी दूसरे घाट से गंगा पार कर पीठ पर जा पहुंचे और उसका बंगाल लौटना ही असंभव हो जाय। इन सब बातों पर भलीभांति विचार कर वह इलाहाबाद से हट कर बनारस और पटना होता हुआ मुंगेर में मुकीम

हुआ।

मुंगेर गंगा तट पर एक छोटा सा शहर था। उसके एक ओर पहाड़ और दूसरी ओर सघन जंगल और नदी थी। सैनिक दृष्टि से यह बंगाल का द्वार समझा जाता था। यहां उसने दृढ़ मोर्चा स्थापित किया और नगर तथा नदी के किनारे से पहाड़ तक एक गहरी खाई खुदवायी। अब वह गंगा के घाट को रोककर मीरजुमला की ताक में बैठ गया। थोड़ी सी शाही सेना आई। जिसे वह पन्द्रह दिन तक रोके बैठा रहा। पर अब उसे यह सूचना मिली कि इस सेना में मीरजुमला नहीं है, वह सिर्फ धोखे के लिए भेजी गई थी। मीरजुमला खड़गपुर के राजा बहरोज की मदद से अपनी सेना के साथ मुंगेर के किले से दक्षिण पूर्व की घाटियों और जंगलों में होकर उसकी पीठ पर पहुँच चुका है। यह सुनते ही शुजा साहिबगंज की ओर दौड़ा। और उसने वहां एक दीवार बनाकर वहां की सकड़ी घाटी का मार्ग रोक लिया। इतने परिश्रम और खर्च से बनाई खाई छोड़ देनी पड़ी। मुंगेर और राजमहल के बीच गंगा कई चक्कर खाकर गई है, फिर भी बहुत कष्ट उठाकर शुजा मीरजुमला से प्रथम ही राजमहल जा पहुंचा। और वहां अपना मोर्चा जमा दिया। मीरजुमला और मुहम्मद सुलतान अपने बाएं हाथ पर अनेक दुर्गम और भयानक मार्गों को पार करते हुए इसलिए गंगा की ओर चले कि उनका भारी तोपखाना और सेना जल मार्ग से आ रही थी। वे उन्हें साथ साथ लेना चाहते थे। उन्होंने वीरभूमि और चटनगर के ज़मींदारों को भी मिला लिया था। अभी वे सूरी तक पहुँच पाए थे कि शाही सेना में यह अफवाह फैल गई कि दारा अजमेर की लड़ाई में जीतकर राजपूतों से बदला ले रहा है। इस अफवाह से परेशान हो कर मीरजुमला के राजपूत सैनिक सेना छोड़ अपने अपने घरों को रवाना हो गए। परन्तु मीरजुमला ने अपनी सेना को सम्हाला और अन्त में राजमहल के

मैदान में आ डटा। पांच दिन घनघोर युद्ध हुआ और मीरजुमला की तोपों ने उसकी बुर्जियों को जो मिट्टी और वृक्षों की डालों से बनाई गई थीं नष्ट कर दिया। अब उसे बरसात का भी भय था, उसे रातों रात वहां से भागना पड़ा। दो तोपें भी वह छोड़ गया।

मार्च समाप्त हो रहा था। मीरजुमला का राजमहल पर अधिकार होने से गंगा के पच्छिम का सारा प्रदेश शुजा के हाथ से निकल गया।

शुजा के साथ अब केवल पांच हज़ार सैनिक रह गए थे। और उसकी स्थल सेना लड़ने के योग्य न रह गई थी। उधर मीरजुमला का लश्कर खूब मजबूत था। पर जल सैन्य नाकाफी थी। शुजा के साथ बड़ी बड़ी तोपें थीं, जिन्हें योरोपियन चलाते थे। फिर बंगाल की समूची जल सेना भी उसी के अधिकार में थी। शुजा ने गौर किले से चार मील पच्छिम डांडा को अपना प्रधान सैनिक केंद्र बनाया। और गंगा के पूर्वी किनारों पर मौके मौके खाइयां खोदीं।

इस समय मीरजुमला ने उसका पीछा नहीं किया। उसे भय था कि शुजा छापा मारने की इच्छा से छिपा न बैठा हो। इस समय रात ही में भारी वर्षा हो गई। लाचार वर्षा की समाप्ति तक मीरजुमला को राजमहल में ही ठहरना पड़ा।

इससे शुजा को तैयार होने का पूरा मौका मिल गया। उसने नई सेना भरती की। जिनमें अधिकांश पुर्चुगोज थे। जो कुछ तोपों के साथ बंगाल के निचले प्रान्तों में आ गए थे। ये सब असल और दोगले सब मिलाकर नौ दस हजार थे जिन्हें अपने सद्व्यवहार से शुजा ने अपना साथी बना लिया। इस समय मीरजुमला की फौजें गंगा के पूरे पच्छिम किनारे तक फैली हुई थीं। उत्तर में मुहम्मद मुराद बेग राजमहल में था। शाहज़ादा स्वयं सेना के एक बड़े भाग को लिए जुल्फिकार खां और इस्लाम खां के साथ

दक्षिण में तेरह मील की दूरी पर दोगाची स्थान पर शुजा के सामने डटा था। आठ मील और दक्षिण में दूकापुर में अलीकुली खां बैठा था। आठ हजार चुने सवारों के साथ मीरजुमला मुगल सीमा के अंतिम छोर पर राजमहल से अट्ठाईस मील दक्षिण में सूरी पर अधिकार जमाए बैठा था।

मीरजुमला के आदेश से दोगाची के पड़ाव से शुजा पर आक्रमण किये गए जिनमें सफलता मिली। परन्तु तीसरे आक्रमण में मीरजुमला को बहुत हानि उठानी पड़ी। उसके अनेक उच्च अधिकारी और सैनिक मारे गए और कैद हुए।

इसी समय शाहज़ादा मुहम्मद सुलतान दोगाची में अपने डेरे से चुपचाप भागकर शुजा से जा मिला। बहुत दिन तक मीरजुमला का हुक्म उठाते उठाते वह तंग आ गया था। वह अपने को सारी सेना का अफ़सर समझता था। और मीरजुमला का अनुशासन उसे सह्य न था। वह मीरजुमला को तिरस्कार की दृष्टि से देखता था। वह दिन दिन दबंग और उदण्ड होता जाता था। एक दिन बात ही बात में उसने कह दिया कि "आगरे के किले की दस्तयाबी मेरी ही कोशिशों और मिहनत से हुई, पस, अगर हज़रत इसके लिए किसी के ममनून हों तो उन्हें मेरा ही ममनून होना चाहिए।"

ये बातें औरंगजेब के कान तक भी पहुँचीं। और वह नाराज हो गया। यह बात शाहजादे से छिपी न रही। वह डर गया कि कहीं उसे कैद न कर लिया जाय। अन्त में एक रात वह चुपचाप चलकर शुजा के लश्कर में जा पहुंचा। शुजा ने उसे अपनी पुत्री गुलरुख बानू व्याह देने और तब राजगद्दी प्राप्त करने में उसकी मदद लेने को गुप्त वचन दिया था। पर जब वह मूर्ख शाहजादा अकेला उसके लश्कर में जा पहुँचा, तो शुजा ने उसपर विश्वास

नहीं किया। उसने समझा कि कहीं यह औरंगजेब की चाल न हो। मुहम्मद सुलतान ने बड़ी बड़ी प्रतिज्ञाएँ कीं, बहुत बहुत कसमें खाईं फिर भी शुजा ने उसे अपनी सेना में कोई अधिकार नहीं सौंपा। वह उसके चाल चलन की जांच ही करता रहा।

ज्योंही मीरजुमला को इसकी सूचना मिली—वह तुरन्त दोगाची पहुंचा। और सेना में अनुशासन स्थापित किया। दूसरे नायकों ने मीरजुमला को अपना अधिपति मान लिया। और उसकी आधीनता स्वीकार कर ली। इस प्रकार उसने बड़ी ही आफत से शाही लश्कर को बचाया। इस सेना ने केवल एक ही आदमी खोया—वह था केवल शाहज़ादा।

वर्षा ऋतु के कारण अब युद्ध असंभव हो गया। बंगाल में वर्षा बहुत होती है। मीरजुमला ने मासुमाबाजार में डेरा डाला और बाकी सेना जुल्फिकार खां की अध्यक्षता में राजमहल में ठहरी रही। वर्षा के कारण राजमहल के आसपास का तालुका दलदल बन गया। नगर की खाद्य सामग्री शुजा ने रोक दी। मुगल सेना के पास अनाज की बहुत कमी हो गई। इसी समय शुजा ने अकस्मात् राजमहल पर आक्रमण करके उसे अधिकृत कर लिया। मुगल सेना बुरी तरह हारी। और उसके सारे सामान पर शुजा का अधिकार हो गया।

मुहम्मद सुलतान से शुजा की नहीं पटी और वह वर्षा ऋतु समाप्त होने के प्रथम ही भागकर मीरजुमला के लश्कर में आ मिला। मीरजुमला ने उसका साधारण सत्कार किया और कहा—"अगर्चे आपका कुसूर बहुत बड़ा है, मगर खैर, बादशाह से कोशिश करके माफी की दर्खास्त करूंगा।"

६६

औरंगजेब का नया कदम

आगरे में पहुंचकर औरंगजेब ने नगर की सब व्यवस्था देखी। जहां जो त्रुटि पाई उसे ठीक किया। किले के पहरे का पूरा इन्तजाम किया। मुराद बख्श को उसने ग्वालियर के किले में भेज दिया। और अब दिल्ली आकर तख्ते ताऊस पर बैठ कर खुलेआम दरबार करना शुरू कर दिया।

इसी समय उसे सूचना मिली कि शाहज़ादा मुहम्मद सुलतान ने विद्रोह किया है। पर वह सब परिस्थिति देखकर चुप हो गया। बाद में जब उसे सूचना मिली कि वह फिर वापस आ गया है तो उसने मीरजुमला को हुक्म भेजा कि उसे तुरन्त दिल्ली भेज दो। भाग्यहीन मुहम्मद सुलतान दिल्ली भेज दिया गया। परन्तु उसने ज्योंही गंगा पार की—शाही सिपाहियों ने उसे घेरकर पकड़ लिया, और हथकड़ी बेड़ियों में जकड़ कर जबर्दस्ती एक अम्बारी में बन्द करके ग्वालियर की ओर ले चले। जहां वह कैद कर दिया गया और आगे चलकर यहीं उसकी मृत्यु हुई।

अपने बड़े बेटे मुहम्मद सुलतान को ग्वालियर के किले में कैद करके उसने शाहज़ादा मुअज्जम से कहा—"ऐसा नहीं कि तुम भी सरकशी और बलंद परवाज़ी के ख़यालात में भाई की तरह हो जाओ, और वही मुआमिला तुमको पेश आए जो उसको पेश आया है। याद रक्खो, सल्तनत एक ऐसा नाजुक मुआमिला है, कि बादशाहों को अपने साए से भी हसद और बदगुमानी होती है। पस, यह ख्याल कभी न करना कि औरंगजेब भी अपने बेटों से वही सब देख सकता है, जो जहांगीर और शाहजहां ने आंखों देखा

था। या जिस तरह शाहजहां ने तख्तोताज खो दिया, औरंगजेब भी उसी तरह खो सकता है।"

शाहजादा मुअज्जम ने हर तरह दीनता दिखा कर बाप की आधीनता और आज्ञाकारिता प्रकट की।

खजुआ की लूट में जो माल जसवन्त सिंह के हाथ लगा था, उससे उन्होंने एक बड़ी सेना एकत्रित कर ली, और दारा शिकोह को लिखा कि वह आगरे चला आए,मैं उमे राह में मिल जाऊंगा। दारा ने भी बहुत सी सेना एकत्र कर ली थी, पर वह कुछ अच्छी न थी। जसवन्त सिंह का पत्र पाते ही वह अहमदाबाद से चल पड़ा। उसे बहुत आशा बंध गई। उसने सोचा कि जब मैं ऐसे नामी राजा की राजधानी में पहुँचूंगा तो मेरे शुभचिन्तक अवश्य मेरे झण्डे के नीचे एकत्र हो जाएंगे। इसी भरोसे वह बड़ी तेजी से अजमेर की ओर चला।

परन्तु महाराज जसवन्त सिंह ने अपना वचन पालन नहीं किया। जय सिंह ने एक पत्र देकर उन्हें ऊँचनीच समझा कर रोक दिया--उन्होंने उन्हें समझाया—"आपने डूबते हुए का साथी बनने में क्या लाभ सोचा है ? इसका परिणाम तो यही होगा कि आपके कुटुम्ब की दुर्दशा हो। मैं भी एक राजा हूँ। और निवेदन करता हूँ कि राजपूत वीरों का रक्त व्यर्थ बहाने से क्या लाभ है। आप यह भी जान रखिए कि अन्य राजपूत राजा आपको सहायता नहीं देंगे। मैं ही उन्हें रोकूंगा। इसलिए आप ऐसी आग मत भड़काइये जो देश भर में फैल जाय और उसे कोई न बुझा सके। आप यदि दारा को उसके भाग्य के भरोसे छोड़ देंगे तो औरंगजेब भी आपको क्षमा कर देगा। और आपसे वह धन भी नहीं मांगेगा जो खजुआ की लूट में आपने लूटा है। इसके अतिरिक्त आपको गुजरात की सूबेदारी भी मिल जायगी। इसका लाभ आप समझ सकते हैं कि आप एक ऐसे प्रान्त के अधिकारी हो

जाएंगे जो आपके राज्य के निकट है, और वहां आप आनन्द से रह सकते हैं, और लाभ उठा सकते हैं—इन सब बातों का जो मैंने पत्र में लिखी हैं पूरा करने का जिम्मा मैं लेता हूँ।"

इस पत्र को पाकर जसवन्त सिंह चुपचाप पड़ा रहा और अभागा दारा ज्योंही अजमेर पहुँचा—औरंगजेब की सेना ने उसे घेर लिया।

७०

दोराई की लड़ाई

ठाठ्ठ से पचपन मील पूर्व में हटकर दारा ने कच्छ के रन को पार किया और भुज और काठियावाड़ में नवानगर की राह तीन हजार सैनिकों के साथ वह अहमदनगर पहुंचा। जहां पर शहवाज खां दारा के साथ हो गया। सूरत के तोपखाने को भी वह ले आया और अजमेर की ओर चला। परन्तु अजमेर पहुंचते ही उसे जसवन्त सिंह के विश्वासघात का पता लग गया। फिर भी अब उसका वापस लौटना संभव न था। गर्मी बहुत सख्त थी। और उस इलाके में पानी की भारी कमी थी, फिर विरोधी राजाओं के राज्य में होकर तीस—पैंतीस दिन की यात्रा लश्कर सहित करना किसी भी हालत में दारा के लिए संभव न था, तिस पर औरंगजेब जैसा शत्रु उसके सिर पर था। जिसके पास बढ़िया सेना थी। अतः अब दारा को युद्ध करने को छोड़ दूसरा उपाय न था।

परन्तु यह स्पष्ट था कि यह बराबर की लड़ाई न थी। अजमेर से चार मील दक्षिण में दोराई की घाटी में औरंगजेब को रोकने का उसने निश्चय किया। उसके दोनों बाजू बिटली और गोकला पहाड़ियों से सुरक्षित थे। और अजमेर का समृद्ध नगर उसके पीछे

था। अपनी सेना के दक्षिण में दोनों पहाड़ियों के बीच की समतल भूमि में उसने एक दीवार बनवाई और उसके सामने खाइयां और स्थान स्थान पर बुर्जियां बनवाईं।

औरंगजेब ने दक्षिण दिशा से इस मोर्चेबन्दी का सामना किया। पहली मार्च के संध्या काल में उसने दारा पर गोलाबारी शुरू कर दी। परन्तु शत्रु की खाइयां बड़ी दुर्गम थीं, दारा की तोपें और बन्दूकची भी ऊंचे स्थानों पर थे, वे औरंगजेब के पैदलों और बन्दूचियों को मौत के मुंह में धकेलने लगे। दो सप्ताह में भी औरंगजेब पंक्ति भेद न कर सका। तब उसने सेनापतियों से सलाह कर के नई योजना बनाई। और एक मजबूत दस्ते को ले शाहनवाज खां के ऊपर जो—दारा के बाएं पक्ष में था—जोर का आक्रमण किया। उधर जम्मू के पहाड़ी राजा राजरूप के पहाड़ी सैनिकों ने गोकला पहाड़ी पर चढ़ने का एक अज्ञात मार्ग ढूंढ़ निकाला। और वह राजा चुपचाप उस पहाड़ी की चोटी पर चढ़ गया।

अब ज्योंही शाही सेना ने शाहनवाज खां के मोर्चे पर धावा बोला, साथ ही औरंगजेब का तोपखाना भी आग उगलने लगा। इससे दारा की सेना का अन्य भाग शाहनवाज को सहायता न पहुँचा सका। फिर भी शाहनवाज ने डट कर सामना किया। परन्तु अन्त में उसके पैर उखड़ गए और वह भाग चला। औरंगजेब ने खाइयों के किनारे तक के सारे मैदान पर अधिकार कर लिया। इसी समय राजरूप के सैनिकों ने गोकला की चोटी पर शाही झंडा गाड़कर जोर से जयनाद किया। अब यह देखकर कि शत्रु पीठ पर भी जा पहुंचे, दारा की सेना निराश हो भाग चली। इसी समय औरंगजेब ने खाइयों पर हमला बोल दिया। अब तो सैनिक तथा सेनापति सब भाग खड़े हुए और मैदान औरंगजेब के हाथ रहा। गोकला पहाड़ी पर शत्रु का अधिकार हो जाने से दारा बहुत घबरा गया और बौखला कर केवल बारह साथियों तथा अपने

पुत्र सिपर शिकोह के साथ वह सिर पर पैर रखकर गुजरात की ओर भागा। जसवन्त सिंह के बहकाने से जो हजारों राजपूत युद्ध-क्षेत्र के पास ही एकत्र थे, उन्होंने दारा की सेना की सारी सामग्री और सामान ढोने वाले उसके बहुत से जानवर लूट लिए।

कहा जाता है कि इस युद्ध में शाहनवाज खां ने उसे पूरा धोखा दिया। प्रकट में वह लड़ रहा था पर वह दुश्मन से मिला था। जो गोले छोड़े जाते थे, उनकी थैलियां बिना गोली की बारूद भरी थीं। उनसे केवल शब्दमात्र ही होता था। शाहनवाज खां इसी लड़ाई में मारा गया। और महाराज जयसिंह ने दारा को सूचना दी कि पकड़े जाने से बचना चाहते हो, तो तुरन्त युद्धक्षेत्र से अलग हो जाओ। इस पर विमूढ़ की भांति दारा भाग खड़ा हुआ। और खेत औरंगजेब के हाथ रहा। युद्ध के समय दारा ने अपना सारा खजाना और हरम अजमेर में आनासागर के किनारे छोड़ा था। उन्हें लेकर किसी तरह उसके साथी मेड़ता में उससे जा मिले। यहां उसने सुना कि महाराज जयसिंह और बहादुर खां की आधीनता में जबर्दस्त फौज उसके पीछे आ रही है।

अब दारा की सारी आशा अहमदाबाद पर निर्भर थी। मेड़ता में उसके पास दो हजार सवार एकत्र हो गए थे। पर कुछ राह ही में भागने लगे। कुछ गर्मी से मर गए। उसे इस सख्त गर्मी में यह लम्बा चौड़ा रास्ता विपक्षी राजाओं के राज्य में होकर पार करना था। अब खीमें तक उसके पास न थे, फिर कोली लोग रात दिन उसका पीछा कर रहे थे। वे अवसर पाते ही उसके सिपाहियों पर टूट पड़ते और लूटपाट कर उन्हें मार डालते थे। केवल एक पग पीछे रहना भी खतरनाक था। दिन पर दिन उसकी हालत खतरनाक होती जाती थी। उसके हाथी, घोड़े, ऊँट, सिपाही गर्मी से मरते जाते थे।

किसी तरह इन सब विपत्तियों से बचकर दारा ऐसे स्थान पर पहुंचा जहां से अहमदाबाद केवल एक दिन की राह पर था। उसे बड़ी आशा थी कि उसे अब आश्रय मिल जायगा। परन्तु वह अपने पीछे जिस व्यक्ति को अहमदाबाद का किलेदार बनवा गया था--वह औरंगजेब से मिल गया और दारा को उसके दूत ने सचेत किया कि नगर के निकट न आइए, फाटक बन्द है और सेना शस्त्र सज्जित आपको गिरफ्तार करने को तैयार खड़ी है।

यह सुनकर दारा की बेगम रोने पीटने लगी। दारा भी बाल नोचने लगा। उसके पास अब एक भी खीमा न था। उसकी बेगम और स्त्रियां केवल एक कनात की आड़ में थीं, जिसकी रस्सियां बहली के पहियों में बंधी थीं। स्त्रियों के विलाप ने सबको रुला दिया। सब एक दूसरे का मुंह ताक रहे थे, किसी को राह न सूझती थी। दारा शिकोह कनात के भीतर गया—स्त्रियों को तसल्ली दे जब वह बाहर आया, तब उसके मुंह पर मुर्दनी छाई हुई थी। वह किसी से कुछ कहता था, किसी से कुछ। एक साधारण सिपाही से भी पूछता था कि वह क्या करे। वह नहीं जानता था कि कहां जाय। आखिर वह वहां से आगे बढ़ा। अब उसके पास केवल एक घोड़ा, एक बहली और पांच ऊँट थे। घोड़े पर वह स्वयं और ऊँटों पर उसकी बेगमात थीं। कुछ लद्दू टट्टू भी साथ थे। थोड़े से नौकर, चाकर थे—जिन्होंने साथ नहीं छोड़ा था। तीन दिन वह बिना रुके चलता चला गया। गर्मी इतनी प्रचंड थी और धूल इतनी उड़ती थी कि दम घुटा पड़ता था। बहली का एक बैल मर गया था। दूसरा भी मरने की दशा को पहुँच चुका था। उसकी बेगम के पैर में एक गहरा घाव हो गया था, जो सड़ गया था। वह, एशिया के सबसे समृद्ध, शक्तिशाली साम्राज्य का मनोनीत युवराज ऐसे दीन हीन वेश में उस उजाड़ रन [illegible] की दक्षिणी सीमा की ओर जा रहा था।

७१

विश्वासघाती के हाथ में

औरंगजेब की इस प्रबल शत्रु पर तीखी नजर थी। उसने राजा जय सिंह और बहादुर खां को तो दारा के पीछे अजमेर से भेज ही दिया था, अब लाहौर के हाकिम खलीलुल्ला खां को लिखा कि यह भक्खर जाकर दारा की राह रोक ले। अब सिन्ध के अधिकारी के और जयसिंह के दस्ते उत्तर पूर्व से दारा को घेरे हुए आगे बढ़ रहे थे। उसके लिए भाग निकलने को केवल एक ही राह थी और वह उत्तर पच्छिम को मुड़ा। सिन्ध नदी पार की, और कन्धार की राह ईरान भाग जाने के इरादे से वह सहवान जा पहुँचा।

जब जय सिंह छोटे बड़े रन को पार कर—बड़ी बड़ी कठिनाइयों को झेल सिबिस्तान की सीमा पर सिन्धु तट पर पहुँचे, तो उन्हें मालूम हुआ कि दारा भारत की मुगल सीमा पार कर गया है। और वह सिन्धु के किनारे किनारे उत्तर की राह, भारत से बाहर की ओर चल रहा है।

इस समय उसका ईरान को निकल जाना अधिक अच्छा होता। परन्तु उसकी बेगम नादिरा बानू, जो उस समय इस भयानक यात्रा के कष्टों के कारण सख्त बीमार थी, उसने कहा—"कि यदि आप ईरान जाने का क़स्द करते हैं तो मुझे और मेरी बेटी को शाह ईरान की लौंड़ियां बननी पड़ेंगी। जो ऐसी बेइज्जती की बात होगी, जिसे मुग़लिया खानदान कभी गवारा न करेगा।"

हाय रे मुग़लिया खानदान! इस बात को बेगम और दारा

दोनों ही भूल गए कि जब हुमायूं ने शेरशाह से हार कर ऐसी ही आपदाओं में पड़कर ईरान की शरण ली थी, तब उसकी बेगम भी उसके साथ थी, तब शाहे ईरान ने उनकी मर्यादा के अनुकूल ही अभ्यर्थना की थी।

अब दारा को अपने एक पुराने कृपापात्र दादर के पठान सरदार जीवन खां की याद आई। जिसका गांव निकट ही था। वह एक बलवान और प्रसिद्ध जमींदार था। डाकेजनी और विद्रोह के अपराध में उसे दो बार शाहजहां ने हाथी के पांव तले रूंद देने का दण्ड दिया था। और दोनों बार दारा ने उसके प्राण की रक्षा की थी। दारा ने सोचा कि उससे कुछ सिपाहियों की सहायता मिल जाय तो ठट्ठ के किले को, जिसे मीरबाबा घेरे पड़ा था—कब्जे में कर ले। और वहां जो खजाना है उससे नई सेना भरती करके भाग्य की परीक्षा करे। या फिर क़ाबुल या कन्धार चला जाय।

बोलन घाटी की भारतीय सीमा के छोर से नौ मील पूर्व में स्थित दादर की यह जमींदारी थी—दारा को आशा थी कि दो दो बार जिसने उसके प्राणों की रक्षा की है—उसके प्रति जीवन खां कृतज्ञता प्रकट करेगा।

जीवन खां के यहां जाने का नाम सुनकर स्त्रियां बहुत घबराईं और बोलीं—कि उस डाकू के घर जाना ठीक नहीं है। बेगम और शाहज़ादी तथा उसके पुत्र सिपर शिकोह ने उसके पांवों पर गिरकर कहा—"उधर मत जाइए वह पठान भयानक डाकू है। उसका क्या भरोसा। उन्होंने यह भी समझाया कि ठट्ठ के घेरे को बिना उठाए और बिना लड़ाई झगड़े के भी आप काबुल जा सकते हैं, जहां का हाकिम महावत खां आप की सहायता करेगा। क्योंकि उसे वहां आपही ने हाकिम बनाया था। पर दारा ने न माना—और जीवन खां के यहां चला गया।

दारा को जीवन खां आदरपूर्वक घर ले गया। बेचारी नादिरा बानू दादर पहुँचते पहुँचते ही मार्ग के कष्टों से मर गई। इस दुःख से दारा पागल हो गया। उसने सब्र किया और उसकी लाश को अपने आध्यात्मिक गुरु मियां मीर के कब्रस्तान में गड़वाने को लाहौर भिजवा दिया। इस समय उसके कुछ साथी आ गए थे, उनमें से दस आदमियों को उसने अपने परमभक्त गुल मुहम्मद की अध्यक्षता में बेगम की लाश की रक्षा करने के लिए भेज दिया। और कहला दिया कि लाहौर से उनकी इच्छा जहां हो चले जांय। काबुल चलना चाहें तो हमारे साथ रहें।

जीवन खां ने समझा था कि दारा के साथ बड़ी फौज आती होगी। उसने उसे और उसके साथी सिपाहियों को आदर सत्कार से ठहराया। पर जब देखा कि उसके साथ केवल दो तीन सौ ही आदमी हैं, तो उसकी नीयत अशर्फियों से लदे खच्चरों को देखकर बदल गई। जो लूटमार से अब भी उसके पास बच रहे थे। और भटक भटका कर उसके विश्वासी आदमी उन्हें यहां ले आए थे। उसने एक दिन रात के समय बहुत से लुटेरों को जमा किया, और दारा के सब रुपए पैसे, असबाब, स्त्रियों के आभूषण छीन लिए— और दारा और उसके पुत्र सिपर शिकोह पर आक्रमण किया। जिन्होंने बाधा दी उन्हें तलवार के घाट उतार दिया। फिर उन दोनों भाग्यहीन बाप बेटों को, दोनों शाहज़ादियों सहित हाथ पांव बांध हाथी पर सवार कराया। एक बधिक को नंगी तलवार लेकर उनके पीछे बैठा दिया और कहा कि ये लोग ज़रा भी हाथ पांव हिलाएँ, या इनका कोई मददगार छुड़ाना चाहे तो उसी वक्त सिर काट डालना।

इस प्रकार अपमानजनक रीति से उसने दोनों बाप बेटों को ठट्ठ में मीरबाबा के सुपुर्द कर दिया।

७२

दिल्ली के बाज़ारों में

सावन की कटीली धूप थी। दिल्ली के बाज़ारों में बड़ी उत्तेजना फैली थी। खटाखट सब दूकानें और कारबार बन्द होते जाते थे। लोग इधर से उधर भागे जाते थे, शहर में बलवे के आसार नजर आ रहे थे। लोगों के चेहरों पर हवाइयां उड़ रही थीं और चारों ओर घबराहट फैल रही थी।

एक हथिनी झूमती झामती चांदनी चौक में बढ़ी चली आ रही थी, यह कोई डीलडौल वाली सिंहलद्वीप की या पैरू की हथिनी न थी। जिस पर शाहज़ादा सज धज कर बैठा करता था। एक गन्दी और सड़ियल हथिनी थी जिस पर खुले हौदे में एशिया का शानदार युवराज, मुगल साम्राज्य का कर्ता धर्ता दारा और उसका राजकुमार सिपर शिकोह बैठा हुआ था। जिसकी आयु केवल पन्द्रह साल की थी। इनके पीछे हाथ में नंगी तलवार लिए कैदखाने का अफसर गुलाम नजर बेग बैठा था। संसार के इस सबसे समृद्ध साम्राज्य के उत्तराधिकारी के गले में न तो हीरों का कण्ठा ही था, न हमेशा सुशोभित होने वाले जवाहरात ही से वह सुसज्जित था। उसके शरीर पर जरवफ्त का क़बा और सिर पर वह पगड़ी न थी, जो भारतवर्ष के बादशाह पहना करते हैं। वे पिता-पुत्र मोटे वस्त्रों की मैली कुचैली बगलबन्दी पहने थे, जो शायद हफ्तों से नहीं बदली गई थी। और जिसे गरीब से गरीब भी दिल्ली में पहनना नहीं पसंद कर सकता था। एक गन्दी और काली कलूटी पगड़ी उसके सिर पर लिपटी हुई थी। उसके पैरों में बेड़ियाँ पड़ी थीं। हाथ अवश्य खुले थे। उसका सिर नीचे झुका हुआ था—और नजर अपने ही पैरों पर थी। सावन की चमचमाती धूप उनके

सिरों पर पड़ रही थी।

इस भाग्यहीन राजपुत्र को इस हीन दशा में देखने के लिए जगह जगह भीड़ जमा हो जाती थी। लोग खड़े खड़े दारा के भाग्य पर हाथ मलते और रोते थे। चारों ओर से लोगों के रोने चिल्लाने की आवाजें आ रही थीं। जगह जगह लोग डाकू जीवन खां को गालियां दे रहे थे। बच्चे उत्तेजित होकर बुरी तरह चीख रहे थे। जीवन खां पठान, जिसे अब मलिक का खिताब तथा एक हज़ारी जात का मनसब मिला था—घोड़े पर सवार हथिनी के साथ था—जिसका नया नाम औरंगजेब ने बख्तियार खां रक्खा था।

सवारी आगे बढ़ती गई। साथ ही भीड़ बढ़ती गई। लोगों का रोना चिल्लाना बढ़ता गया। एक फकीर ने दूर से देखा—वह दौड़ा हुआ दारा के सामने आया। दारा जब जब बाज़ार में निकलता था, फकीरों पर अशर्फियां लुटाता था—यह फकीर भी उससे बहुत कुछ पाता था। वह अंधा फकीर था। वह नहीं जानता था कि आज दारा दुर्दिन का शिकार हो रहा है। उसने सुना कि दारा की सवारी आ रही है। उसने दोनों हाथ पसार कर चिल्ला कर कहा—"दारा दाता, आज क्या इस फकीर को कुछ नहीं मिलेगा बादशाह।"

दारा ने सुना। आंख उठाकर उसने फकीर को देखा, जिसकी अंधी आंखें और हाथ उसी की ओर उठे हुए थे। उसने अपनी कमर में लिपटा हुआ वह कम्बल—जिससे उसका अंग ढंका था, उतार कर फकीर पर फेंक दिया।

दारा की यह उदारता और बेबसी देख लोग जोर जोर से दारा दारा कह कर रो उठे। बहुतों ने दुष्ट जीवन खां को पत्थरों से मारना प्रारम्भ कर दिया, यह देख जीवन खां प्राण लेकर भाग खड़ा हुआ। और हथियार बन्द सिपाहियों की टुकड़ी ने भीड़ को छांट कर हथिनी को आगे बढ़ाया।

७३

कत्ल

उसी अभागे दिन की रात्रि को लाल किले में नए बादशाह का दीवाने ख़ास में दरबार जुड़ा था। शाइस्त खां, मुहम्मद अमीन खां, बहादुर खां और दानिशमन्द खां आदि चुने हुए अमीर और वज़ीर हाजिर थे। दरबार में दारा के भाग्य का फैसला हो रहा था। अनेक हाफिज, उल्मा और मौलवी भी हाजिर थे। शाहज़ादी रोशनआरा झरोखे में बैठी थी। उसने अपनी बारीक आवाज में स्पष्ट शब्दों में कहा—

"इस्लाम और सल्तनत की भलाई और बहबूदी के लिए हम मुनासिब समझती हैं कि क़ाफिर दारा को कत्ल कर दिया जाय।"

दानिशमन्द खां ने कहा—"यह ठीक न होगा, कत्ल करने की फिलहाल जरूरत नहीं, मुमकिन है इससे शहर में बलवा हो जाय। उसे हिफाजत से ग्वालियर के किले में कैद कर लिया जाय।"

शाहज़ादी ने गुस्सा करके कहा—"किस लिए एक काफिर और गुमराह कैदी को कैद करने का खतरा उठाया जाय ? बस हमारी राय है कि उसे फौरन कत्ल कर डाला जाय।"

खलीलुल्लाह खां और शाइस्त खां जो प्रथम ही से उससे खार खाए थे, दोनों ने नजर मिलाई और कहा—'कत्ल, सिर्फ कत्ल।'

इस पर हकीम दाऊद ने—जो ईरान से भागकर हिन्दुस्तान में आ गया था और खुशामद की बदौलत इस रुतबे को पहुँचा था, कड़क कर कहा—"बेशक कत्ल। दारा शिकोह को जिन्दा छोड़ना हरगिज़ मुनासिब नहीं है। सल्तनत की बेहतरी और सलामती इसी में है कि फौरन इसकी गर्दन काटी जाए। मुझे

उसके कत्ल की सलाह देने में जरा भी तआम्मुल नहीं होता। क्योंकि वह बेदीन और काफिर है। और अगर ऐसे कत्ल से कुछ गुनाह आयद होता हो तो वह मेरी गर्दन पर हो।"

इस पर बादशाह ने मौलाना और हाफिजों से फतवा मांगा, सबने एक स्वर से फतवा दिया—"इस्लाम के खिलाफ काम करने वाले को सजाए मौत ही मिलनी चाहिए।"

अब बादशाह ने दारा की मौत का फर्मान तैयार कराया। जिसपर बादशाह से तनखाह पाने वाले इन धर्मगुरुओं ने दस्तखत कर दिए। यह छोटा सा दरबार बर्खास्त हुआ। और बादशाह औरंगजेब जाहिरा अफसोस प्रकट करता हुआ और शोकातुर सा धीरे धीरे महलसरा में गया।

उसी रात को खवासपुरा के कैदखाने में दारा और सिपर-शिकोह बैठे चूल्हे पर दाल पका रहे थे कि गुलाम नजर वेग, चार दूसरे गुलामों के साथ नंगी तलवारें लिए—बारहदरी में घुस आया। उन्हें देखते ही दारा ने सिपर शिकोह से कहा—"लो बेटा, कातिल आ गए।" यह कहकर वह एक कोई बर्तन उठाकर उनकी ओर लपका। परन्तु उन कद्दावर गुलामों ने उसे धरती पर पटक दिया। चौदह वर्ष का बालक सिपर शिकोह पिता से लिपट कर रोने लगा। इस पर नजर वेग ने उसे खींचकर अलहदा कर लिया। और इसी समय एक गुलाम ने खट से दारा का सिर काट लिया। वे तुरन्त उस सिर को और सिसकते हुए सिपर-शिकोह को लिए हुए—वहां से चल दिए।

नजर वेग ने जब चांदी की थाली में रखकर वह सिर औरंगजेब के सामने पेश किया तो उसने उसके मुंह पर का खून धोने का हुक्म दिया। जब उसे भलीभांति निश्चय हो गया कि यह दारा का ही सिर है तो उसकी आंखों से आंसू निकल पड़े। और हाथ मलते हुए उसने कहा—"ऐ बदबख्त!" फिर उसने कहा—

"अच्छा इस दर्दअंगेज सूरत को मेरे सामने से ले जाओ, और लाश को हाथी पर रखकर शहर में घुमाओ फिर हुमायूं के मकबरे में दफ़न कर दो।" ऐसा ही किया गया।

उसकी दोनों पुत्रियां उसी रात महल में भेज दी गईं जो कुछ दिन बाद शाहजहां और जहांआरा की प्रार्थना पर उन्हें सुपुर्द कर दी गईं। सिपर शिकोह को ग्वालियर के किले में भेज दिया गया।

मलिक जीवन खां को जब औरंगजेब ने पुरस्कृत करके बिदा किया तो राह ही में कुछ लोगों ने उसे मार डाला। इस प्रकार उस विश्वासघाती को हाथोंहाथ दण्ड मिल गया।

७४

शाही कैदखाना

ग्वालियर का दुर्ग जो उस समय शाही कैदखाना बना हुआ था—एक भारी पहाड़ की चोटी पर तीन फर्लांग के घेरे में बना था। जिसके चारों तरफ हरा भरा मैदान था। दूर दूर तक कोई ऊंची जगह न थी जहां से इस पर हमला हो सके। इस पर चढ़ने का केवल एक ही रास्ता था जिसके दोनों ओर दीवारें और फाटक बने हुए थे। जिनमें से प्रत्येक में सिपाही और संतरी मुस्तैद रहते थे। पहाड़ी की राह कुदरती चट्टान के रूप में थी जिसके चारों ओर प्राचीन ज़माने की बैठकें, बारहदरियां, बुर्जियां आदि बनी हुई थीं। पहाड़ की चोटी पर किले के भीतर विस्तृत मैदान था। जिसके चारों ओर अनेक महल बने थे। जिनमें भिन्न भिन्न प्रकार के पत्थर के दरीचे, और पेशदालान तथा सुन्दर नज़रबाग बने थे। बागान में सरू और अन्य प्रकार के सुन्दर वृक्ष ऐसे ऊंचे खड़े थे कि दूर से नज़र आते थे। इस किले में चमेली का तेल बनाया जाता था, जिसकी बेलें इर्दगिर्द की तमाम समतल धरती

पर बहुत अधिकता से फैली हुई थीं। इस इलाके में लोहे की खानें भी अनेक थीं जिससे बेशुमार चीजें तैयार करके साम्राज्य भर में भेजी जाती थीं।

शहर पहाड़ के बगल में था। जो गवैयों के लिए प्रसिद्ध था। इसी पेशे से वे रोजी कमाते थे।

मुगल खानदान के शाहज़ादे और शाही कैदी यहां जो एकबार आते थे जिन्दा वापस नहीं जा सकते थे। यहां उन्हें सबसे पहले पोस्त पिलाया जाता था। यह अफीम के छिलकों को उबाल कर तैयार किया जाता था। इसके पीने से भाग्यहीन कैदी धीरे धीरे निस्तेज और मुर्दार हो जाता था। उसका पौरुष और साहस खत्म हो जाता था। उसकी विचार शक्ति कुंठित हो जाती थी। और धीरे धीरे अर्धविच्छिन्न अवस्था में घुल घुलकर मर जाता था। कैदी जबतक पोस्त का कटोरा न पी लेता था, उसे खाना नहीं दिया जाता था।

अपने को सब से बड़ा बहादुर और बादशाह समझने वाला बेवकूफ और बदनसीब मुराद बख्स इसी किले में कैद था। किले में कैद हुए उसे तीन साल बीत चुके थे। अब यह जवांमर्द और लापरवाह ऐयाश शाहज़ादा न था। जिसे हमने समूमगढ़ और क्षिप्रा के तट पर विजय पाते देखा था। अब उसके शरीर पर हीरे मोती सजे न थे। न कमर में वह जड़ाऊ तलवार थी, जिसपर उसे बड़ा घमण्ड था। इन सालों में पोस्त पी पीकर उसकी कमर झुक गई थी। आंखों के चारों ओर स्याही दौड़ गई थी, और वह हर वक्त गुमसुम बैठा अकेला ही बड़बड़ाता रहता था। कभी कभी वह अपने को बादशाह समझ कर तरह तरह के हुक्म देता—कभी खिलखिला कर हँसता। कभी हफ्तों चुपचाप पड़ा रहता था।

सर्दी के दिन थे। और सुबह का समय। कैदखाने के दारोगा ने एक गुलाम के साथ आकर उसे सलाम किया। गुलाम के हाथ

में एक चांदी का कटोरा था—जिसमें पोस्त भरा था।

मुराद बड़ी देर तक कैदखाने के दारोगा को गुस्से भरी निगाहों से देखता रहा—फिर कहा—"क्या वजह है कि तुम हर रोज इसी वक्त हमारे तखिलए में दखल देते हो। बस, हम यह नापसंद करते हैं।"

दारोगा ने सिर झुकाकर कहा—"पोस्त पी लीजिए शाहज़ादा।"

"फिर शाहज़ादा, कौन है शाहज़ादा, हम जहांपनाह हैं।"

"बेहतर, अब खुदारा प्याला उठाइए।"

"हम पोस्त नहीं पिएँगे।"

"तो हज़रत आज खाना नहीं मिलेगा।"

मुराद ने और भी गुस्सा करके पोस्त के प्याले को लिए हुए गुलामों की ओर देख कर कहा—

"तुम सब नमकहराम हो, प्याला हमें दो।"

गुलामों ने प्याला उसे दे दिया। मुराद कड़वी दवा की भांति उसे गटागट पी गया। पीकर उसने प्याला फेंक दिया और कहा—"अब चले जाओ यहां से।"

मगर दारोगा गया नहीं, खड़ा रहा। उसने धीरे से कहा—"कुछ मुलाक़ाती आप से मुलाक़ात करने आए हैं।"

"कौन हैं वे, क्या औरंगजेब तो नहीं आया है। याद रक्खो, मैं उस शैतान को हरगिज़ माफ न करूंगा।"

"जी नहीं, वे अहमदाबाद के उस सैयद के बेटे हैं जिसे आपने बेगुनाह क़त्ल करवा डाला था।"

मुराद का गुस्सा काफूर हो गया। उसने भयभीत स्वर से कहा—"उनका यहां आने का मकसद क्या है?"

"वे बदले में आप का सिर मांगने आए हैं, जिसका शाही हुक्मनामा उनके पास है। अब आप तैयार हो जाइए।"

अभी उसकी बात समाप्त भी नहीं हुई थी कि चार तरुण

नंगी तलवारों से उसे चारों दिशा से घेर कर खड़े हो गए।

मुराद साक्षात् मृत्यु को सामने देख एकदम उछल कर खड़ा हो गया। उसने इधर उधर अपनी तलवार टटोली, पर तलवार वहां कहां थी। इसी समय एक सैयद ने बढ़कर उस पर तलवार का वार करते हुए कहा—"यह निर्दोष सैयद के खून का बदला है।" तलवार मोढ़े पर पड़ी। और मुराद दर्द से कराह उठा। खून का फव्वारा बह चला। इसी समय चारों सैयद उस पर टूट पड़े। और उसी जगह उसके टुकड़े टुकड़े कर डाले।

७५

शुजा की समाप्ति

अब केवल शुजा ही औरंगजेब का एक शत्रु बच रहा था। उसने यद्यपि समझ लिया था कि औरंगजेब के तेज का सामना करना संभव नहीं है। मीरजुमला ने, जिसे बराबर सैनिक सहायताएं मिलती जा रही थीं उसे चारों ओर से घेर लिया था। और वह अब जान बचाने के लिए ढाके की ओर भाग गया था, जो बंगाल का समुद्र के तट पर अंतिम नगर है। परन्तु यहां भी उसे शरण नहीं मिली। वहां के सारे जमींदार उसके विरुद्ध उठ खड़े हुए, तब वह ढाका छोड़ जलमार्ग से समुद्र की ओर चला। ढाका छोड़ने के दो दिन बाद अराकान के राजा के चटगांव के सूबेदार ने उसके पास एकावन नावें भेज दी थीं। अब उसे बंगाल को जीतने की तनिक भी आशा न थी। वह कड़ा दिल करके असभ्य मेघों के प्रदेश में जाने को उद्यत हो गया।

उसके इस इरादे को जानते ही उसके कुटुम्बियों और अनुचरों में कुहराम मच गया। परन्तु शुजा ने औरंगजेब के हाथों में पड़ने की अपेक्षा यही ठीक समझा, और बीस मई १६६० को वह इस बंगाल को छोड़कर—जहां वह बीस वर्ष से भी अधिक समय तक

शासन कर चुका था, हमेशा के लिए चल दिया। अराकान की इस जलयात्रा में उसके साथ उसके कुटुम्ब के अतिरिक्त केवल चालीस आदमी और थे।

समुद्र पार जाने के लिए उसके पास न तो जहाज ही थे, न वह यही जानता था कि वहां जाने से उसकी रक्षा होगी। अब उसने अपने पुत्र सुलतान बाकी को अराकान के राजा के पास, जो मेघों का राजा था, भेजकर प्रार्थना की—कि आप कुछ दिन हमें आश्रय दें तो हम आपके पास, आ जायं, और जब हवा के चलने की ऋतु आ जाय तब आप मुखा तक पहुंचाने के लिए अपना एक जहाज दे दें, जिसपर सवार होकर हम मक्का और वहां से रूस और ईरान को चले जांय। राजा ने उसे आश्रय देना स्वीकार कर लिया। और सुलतान बाकी को कुछ नावें, जिसके मल्लाह गोवा से भागे हुए पोर्चुगीज थे, और जो आवारा और डाकू थे, पर अब राजा के नौकर हो गए थे और मौका पाकर बंगाल के समुद्र तट के गांवों में धाड़ा मारने का काम करते थे, दे दी। शुजा अपनी बेगम और तीन पुत्रियां तथा पुत्रों सहित उनपर सवार होकर अराकान पहुँचा।

राजा ने उसकी कोई बहुत आवभगत नहीं की। पर उसके लिए सब आवश्यकता की वस्तुएं जुटा दीं।

यहां उसे कई माह बीत गए—अच्छी खासी ऋतु भी आ गई। पर मुखा जाने के लिए उसे जहाज न मिला। शुजा के पास धन की कमी न थी—वह केवल इतना ही चाहता था कि उसे भाड़े पर जहाज मिल जाय। परन्तु राजा ने उसकी बात पर कुछ ध्यान नहीं दिया। इसी बीच शुजा के मन में एक विकार उत्पन्न हुआ, जिसने उसके हृदय में आशा का संचार कर दिया। उसके साथ कुछ लुटेरे पोर्चुगीज आए थे। कुछ ऐसे ही विदेशी यहां अराकान में थे, जिन्हें वहां के राजा ने पकड़ कर गुलाम बना

लिया था। उसने इन सब बदमाशों का एक संगठन किया और यह षड़यन्त्र रचा कि एकाएक राजा के महल पर आक्रमण करके उसे मार डाला जाय। और फिर लौटकर बंगाल में अपने भाग्य की परीक्षा की जाय। परन्तु राजा को किसी तरह उसके षड़यन्त्र का पता लग गया। और राजा ने शुजा को पकड़ कर सकुटुम्ब कत्ल कर डालने का हुक्म दिया।

शुजा को जब यह सूचना मिली तो वह भागा। वह पेगू को भाग जाना चाहता था। पर मार्ग दुर्गम पर्वतीय था। वह आठ पहर ही में पकड़ लिया गया। उसने युद्ध किया—पर उसे बांधकर राजधानी में लाया गया। सुलतान बड़ी ही वीरता पूर्वक लड़ा, पर उन्होंने उसे पत्थर मार मार कर लोहू लुहान कर दिया। शुजा की बेगम और लड़कियों को भी कैद कर लिया गया। उनके साथ बहुत निर्दयता की गई। सुलतान शुजा को कत्ल कर दिया गया। उसकी बड़ी लड़की से राजा ने विवाह कर लिया। सुलतान बाकी ने अवसर पाकर फिर एक षड़यन्त्र रचा, जो खुल गया। इसपर राजा ने क्रुद्ध होकर इस समूचे राज परिवार को तलवार के घाट उतार दिया। यहां तक शुजा की वह लड़की—जिसके साथ राजा ने विवाह कर लिया था और अब गर्भवती थी, निर्दयता पूर्वक कत्ल कर दी गई। और उसके भाइयों तथा सुलतान बाकी के सिर कुल्हाड़ों से काट डाले गए।

७६

आखिरी-शिकार

अपने सब भाइयों पर विजय प्राप्त करके अन्त में औरंगजेब का ध्यान भाग्यहीन दारा के अभागे पुत्र सुलेमान शिकोह की ओर गया। उसने गढ़वाल के राजा पर परवाना भेजा कि शाहजादे को शाही हुजूर में भेज दे। पर बूढ़ा राजा शरणागत को

उसके शत्रु को सौंपने को राजी न हुआ। फलतः औरंगजेब ने राजा पर चढ़ाई का इरादा किया। इसपर राजा का युवक पुत्र अपने पिता के राज्य को ख़तरे से बचाने के लिए शाहज़ादे को औरंगजेब को सौंप देने को राजी हो गया। जब शाहज़ादे को यह समाचार मिला तो वह बर्फीले पहाड़ पार कर लद्दाख पहुँचने की चेष्टा करने लगा। परन्तु उसे पकड़ लिया गया। आत्मरक्षा के लिए युद्ध करके वह घायल भी हुआ। उसे अन्त में औरंगजेब को सौंप दिया गया।

वह शाहज़ादा कैदी के रूप में अपने भयानक चाचा के सामने दीवानेख़ास में लाया गया। सभी ख़ास ख़ास अमीर उमरा दरबार में हाजिर थे। दरबार से बाहर ही कैदी की बेड़ियां निकाल दी गईं। परन्तु हथकड़ियां जिन पर सोने का मुलम्मा किया हुआ था, हाथों में पड़ी थीं। उस सुन्दर सजीले शाहज़ादे को इस अवस्था में देखकर दरबारियों की आंखों से आंसू बहने लगे। झरोखे में बहुत सी बेगमात भी इस भाग्यहीन कैदी को देखने के लिए आ बैठी थीं।

बादशाह ने शाहज़ादे की हालत पर अफसोस प्रकट किया, और कहा—"खुदा पर नजर करो, और इतमीनान रक्खो कि तुम को ज़रर नहीं पहुँचाई जायगी। बल्कि तुम्हारे साथ मिहरबानी की जायगी। तुम्हारा बाप तो सिर्फ इसलिए क़त्ल हुआ कि वह काफिर और लामज़हब हो गया था।"

इस पर सुलेमान शिकोह ने बादशाह को बंदगी की और आदाब बजाया। और कहा—"अगर हुजूर का मंशा यह हो कि मुझे पोस्त पिलाए जाया करें, तो बेहतर है कि मुझे अभी कत्ल करा डाला जाय।"

बादशाह ने कहा—"नहीं, तुमको पोस्त हर्गिज़ नहीं पिलाए जाएँगे, इतमीनान रक्खो।"

इस पर सुलेमान शिकोह ने बादशाह को फिर उसी प्रकार सलाम किया। बादशाह ने कहा—"तुम क्या उस हाथी की बाबत कुछ बता सकते हो—जिसपर अशर्फियां लदी थीं और जो लूट लिया गया था ?"

"हुजूर, मैं कुछ अर्ज नहीं कर सकता—कि उसका क्या हुआ। लेकिन उस हाथी पर दो लाख रुपयों की अशर्फियां थीं।"

इसके बाद बादशाह के संकेतसे वह दीवानेआम में ले जाया गया, जहां से वह दूसरे दिन ग्वालियर के दुर्ग में भेज दिया गया। जहां वह एक साल तक पोस्त पी पी कर, अंत में मर गया।

विहंगम दृष्टि

औरंगजेब का सारा शासन काल २५-२५ वर्ष के दो समान भागों में बंट जाता है। पहला अर्द्धांश उत्तर भारत में और दूसरा अर्द्धांश दक्षिण भारत में। पहला काल उत्तर भारत का महत्व-पूर्ण ऐतिहासिक काल है। इस काल में सम्पूर्ण सार्वजनिक व सैनिक कार्यवाहियों का केन्द्र उत्तर भारत ही रहा। परन्तु अपने शासन के उत्तरार्ध में औरंगजेब अपने कुटुम्बियों, अमीरों, दरबा-रियों, बड़े बड़े हाकिमों और सारी सेना के साथ दक्षिण में पड़ा रहा, और राज्य की सारी शक्तियां दक्षिण में जुट गईं। जिसका यह परिणाम हुआ कि उत्तरी भारत की शासन-व्यवस्था गड़बड़ा गई, जिससे प्रजा में दरिद्रता व्याप गई और राज-कर्मचारी भ्रष्टाचारी हो गए। यह परिस्थिति पूरे पच्चीस वर्ष तक रही। साम्राज्य का ढाँचा बिखर गया और उसमें अराजकता के लक्षण दीखने लगे।

यह एक मार्के की बात है कि औरंगजेब के शासन के पूर्वार्ध में जो महत्वपूर्ण घटनाएं घटीं वे उत्तरी भारत के किसी एक ही स्थान में केन्द्रित न थीं। इस काल में साम्राज्य का शाही झंडा काबुल से लेकर कामरूप की पहाड़ियों तक और तिब्बत से बीजा-पुर तक फहराने लगा।

शासन काल के दूसरे वर्ष तेरह मई १६५६ में औरंगजेब बड़ी धूमधाम से दिल्ली के तख्ते ताऊस पर बैठा। और इस अवसर पर राज्य भर में उत्सव मनाया गया। शासन काल के पांचवें वर्ष वह काश्मीर गया, लेकिन जब तक शाहजहां ज़िन्दा कैद में रहा, औरं-गजेब आगरे नहीं गया। न उसने वहां दखल किया। १६६७ फर-

बरी में जब शाहजहां की मृत्यु हुई, तब वह आगरे गया। राज्यकाल के इक्कीसवें वर्ष में उसने अपने राज्याभिषेक की तिथि का उत्सव मनाने और भेंट लेने की रस्म को बंद कर दिया। शासन काल के बारहवें वर्ष में उसने हिन्दू मन्दिर तोड़ने की आज्ञाएं प्रचारित कीं। इस बीच में राव करण और महेबा का राजा चम्पतराय विद्रोही हुए। राज्यारोहण के दूसरे वर्ष ही उसने बहुत से करों को माफ़ कर दिया, लेकिन साथ ही साम्राज्य में कट्टर इस्लाम की स्थापना के लिए कुछ आज्ञाएं प्रचलित कीं। कुछ प्राचीन रसूम बंद किए। शाही सिक्कों पर जो कल्मा की मोहर लगती थी, वह बंद कर दी। और नोरोज़ का त्योहार भी बंद कर दिया। नशीली चीजों का सेवन, जुआ खेलने और शराब पीने की भी मनाही कर दी। सोलह मई १६५६ को साम्राज्य भर में भांग की भी पैदावार रोक दी गई। पुरानी मसजिदों की मरम्मत की गई और इमामों, मुअज्ज़िनों और खतीबों के वजीफे मुकर्रर किए। इक्कीसवें साल उसने दरबार में गाने बजाने की पूरी मनाही कर दी। साथ ही जन्मतिथि पर तुलादान करने की परिपाटी भी रोक दी। दरबारियों को हिन्दू तरीके से प्रणाम करना रोक दिया गया। शाही नगाड़ा जो अब तक दिन भर बजता था, अब सिर्फ तीन घंटे बजने लगा। बड़े बड़े राजाओं को राज सौंपने के वक्त बादशाह अपने हाथ से जो तिलक करता था, वह रोक दिया। और झरोखे में बैठकर दर्शन देने की प्रथा भी बंद कर दी। नर्त्तकी और वेश्याओं को विवाह करने को मजबूर किया और सती प्रथा को भी बंद करने की आज्ञा दी। छोटे बच्चों को गुलाम बनाकर बेचना और हरम में नौकरी करने के लिए उन्हें हीजड़े बनाने की भी सख्त मनाही कर दी गई। कट्टर इस्लामी धर्म के विरोधी फकीरों में मियां मीर के शागिर्द शाह मुहम्मद बदख्शी और सूफी फकीर सरमद, मुहम्मद ताहिर और एक पुर्त्तगाली पादरी को धर्म भ्रष्ट होने के अपराध में कत्ल कर दिया। बोहराओं

के धर्मगुरु सैय्यद कुतुबुद्दीन को, जो अहमदाबाद में रहते थे, उनके सात सौ शिष्यों सहित कत्ल करा दिया गया। राज्याभिषेक के बाद ही सैय्यद मीर इब्राहीम को साढ़े छै लाख रुपया देकर मक्का मदीना खैरात बांटने के लिए भेज दिया।

आगरे से भागते वक्त दारा अपने हरम की औरतों और लड़कियों को मय सत्ताइस लाख के जवाहरात के-जो आगरे के किले में छोड़ गया था, अपने कब्जे में कर लिया। और दारा की जार्जियाना लौंडी को अपने हरम में दाखिल करके उसका नाम उदयपुरी बेगम मशहूर कर दिया। साथ ही किले के सब शाही जेवरात और कपड़ों पर अपना कब्जा कर लिया।

मुहम्मद सुलतान को कैद करके ग्वालियर भेज दिया गया। मुतमाद नाम के एक हिजड़े को आगरे के किले का अफसर बना दिया। जिसने कैदी शाहजहां के साथ बड़ी सख्ती और निर्दयता का व्यवहार किया। उन दिनों पिता पुत्र में जो पत्र-व्यवहार हुआ, उसमें औरंगजेब ने अपनी न्यायपरता और नम्रता का पूरा दिखावा करते हुए, और अपने पिता को शासन के अयोग्य और असफल कहते हुए अपने कामों का समर्थन किया। उसने बादशाह को लिखा कि जब तक हुकूमत की बागडोर आपके हाथ में रही, मैंने बिना आपके हुक्म के कोई काम नहीं किया। आपकी बीमारी में दारा ने राजकाज अपने हाथ में ले लिया और इस्लाम के खिलाफ़ कार्यवाहियाँ कीं। मेरा इरादा विद्रोही बनकर आगरे में आने का नहीं था। मैं तो सिर्फ दारा के इस्लाम विरोधी कामों और कुफ्र से सल्तनत को पाकसाफ़ करना चाहता था। बादशाह बनने में मेरा अपना कुछ भी स्वार्थ न था। बादशाह के लिए यह मुनासिब नहीं कि वह अपने ऐशोआराम में लगा रहे। उसका फर्ज है कि वह आम लोगों की भलाई में अपना सारा समय लगाए।

शाहजहां औरंगजेब की इस दग़ा और ढकोसले को समझता था। और उसने यह भी समझ लिया था कि अब उसका कोई चारा नहीं चल सकता। अन्त में हार मानकर बूढ़े शाहजहां को दुर्भाग्य के सामने सिर झुकाना पड़ा। एक के बाद एक दुखदायी चोट उसपर पड़ी। दारा, मुराद और सुलेमान कत्ल किए गए। शुजा को मेघों के देश में जाकर कुल्हाड़ों का शिकार बनना पड़ा। अन्त में उसने ईश्वर का सहारा लिया। कन्नौज का सैय्यद मुहम्मद, जो उसका गुरु शिक्षक और विद्वान् पुरुष था, अन्त तक बादशाह की सेवा में रहा और उसके साथ शाहज़ादी जहांआरा भी, जिसने अपने पिता के लिए सब सुखों को तिलाञ्जलि दे दी—उसके साथ रही। अन्त में चौहत्तर साल की उम्र में—जबकि आगरे में बहुत कड़ी सर्दी पड़ रही थी, मृत्यु उसके निकट आई और उसने परमात्मा को उसकी कृपाओं का धन्यवाद दिया, और अपने आपको उसके हवाले कर दिया। मरने से पहले उसने एक वसीयत लिखी और अपने कुटुम्बियों और नौकरों को इनाम दिए। उस वक्त उसके पास उसकी दो बेगमें अकबराबादी महल और फतहपुरी महल, बेटी जहांआरा और दूसरी स्त्रियां थीं जो रो रही थीं। अन्त तक बादशाह के होश-हवाश ठीक रहे और वह स्त्रियों को तसल्ली देता रहा। अपनी बेगम मुमताज महल की यादगार ताज की ओर मुसम्मन बुर्ज में लेटा हुआ वह टकटकी लगा कर देखता रहा। उसने कल्मा पढ़ा और प्रार्थना की कि ऐ खुदा इस दुनियां में मेरी मदद कर, और उस दुनियां में दोजख़ की आग से बचा। जब संध्या समय सवा सात बजे सूरज अस्त हो रहा था, इस बड़े बादशाह ने अपनी आखिरी सांस ली।

जिस दिन शाहजहां को कैद किया गया था, उसी दिन मुसम्मन बुर्ज के नीचे सीढ़ियों का दरवाजा ईंटों से चुनकर बंद कर दिया गया था। वह दरवाजा इस समय तोड़कर उसी राह से उसक

जनाजा ताजमहल पहुँचा दिया गया, और उसकी बेगम मुमताज़ महल के पास ही उसे दफ़ना दिया गया।

शाहजहां की मृत्यु की सूचना पाकर जब औरंगजेब आगरा पहुंचा तो अपनी बदनसीब बहन जहांआरा से मिला। जहां-आरा ने एक थाल भर कर हीरे उसके नज़र किए और कहा कि बादशाह तुम्हारे अपराधों को क्षमा कर गया है और क्षमा-पत्र पर हस्ताक्षर कर गया है। इसपर औरंगजेब लज्जित हुआ और अपनी बहन के आराम से रहने का पूरा पूरा बन्दोबस्त कर गया।

इस बीच सीमाओं पर निरन्तर युद्ध होते रहे। अफगानिस्तान से युद्ध हो रहा था। मीरजुमला कूचविहार और आसाम में फंसा रहा, अन्त में उसको कामयाबी हासिल हुई और ब्रह्मपुत्र के उत्तरी तट से लेकर कलिंग नदी के दक्षिण तट के पश्चिम भाग तक का आसाम प्रदेश मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया। यह मीरजुमला की आखिरी फतह थी। इसके बाद ही मार्च १६६३ को यह महान् राजनीतिज्ञ सेनापति मर गया।

मीरजुमला के समान उस युग में दूसरा सेनानायक राजपुरुष मुगल राज्य में न था, जिसने कठिनाइयों पर कठिनाइयां सहन करते हुए अपना अनुशासन कायम रखा। यह बीस मन हीरों का मालिक—और बंगाल जैसे धनी प्रदेश का सूबेदार होते हुए भी मृत्यु के समय तक सामान्य सैनिकों की तरह युद्ध की कठिनाइयों को उठाता और कठिन परिश्रम करता रहा। उसके आदेश बड़े बड़े होते थे और वह सदैव सतर्क रहता था। एक शब्द में कहा जा सकता है कि औरंगजेब का निर्माण मीरजुमला ने ही किया। इस प्रकार निरन्तर पच्चीस वर्ष तक काबुल से लेकर आसाम के अन्तिम छोर तक उत्तर भारत जबर्दस्त संघर्ष और हलचलों का केन्द्र रहा।

औरंगजेब कट्टर मुसलमान था और इस्लाम के अतिरिक्त

किसी भी धर्म या जाति के प्रति उदारता प्रकट करना वह पाप समझता था। उसने अपने राज्य में इस्लाम के अतिरिक्त अन्य धर्मावलम्बियों को सब राजनैतिक अधिकारों से वंचित करना प्रारम्भ कर दिया। इसका अभिप्राय यह था कि कोई भी अन्य धर्मावलम्बी किसी भी मुस्लिम राज्य का नागरिक नहीं हो सकता।

इस्लाम धर्म के अनुसार प्रत्येक मुस्लिम शासक खुदा का प्रतिनिधि होता है, जिसका प्रधान उद्देश्य इस्लाम को फैलाना है। उसे जिहाद करने का हक है, जिसका मतलब यह है कि जब पवित्र माह समाप्त हो जाय, तब उन सब आदमियों को जो ईश्वर के साथ और देवताओं के नाम भी जोड़ते हैं, जहां मिलें मार डाले जायं, या गुलाम बना लिए जायं, कोई भी अन्य धर्मावलम्बी इस्लामी राज्य में एक दलित समाज के आदमी की तरह रह सकता है कि जिसकी स्थिति एक गुलाम से कुछ ही अच्छी रहती है। ईश्वर के द्वारा दिए गए जीवन और धन का भोग करने के लिए इस्लामी शासक जो उसे जिन्दा रहने देते हैं, उसके बदले में उसका फ़र्ज हो जाता है कि वह सब नागरिक अधिकार को त्याग दे और कर के रूप में धन दे जो जज़िया कहाता है। उसे न तो सेना में भरती होने का अधिकार है, न धन संग्रह करने का। उसे जिम्मी कहा जाता है। वह न घोड़े पर चढ़ सकता है, न हथियार बांध सकता है, न महीन कपड़ा पहिन सकता है। जिम्मी को अदालत में गवाही देने का भी हक़ नहीं है। उसका यह कर्त्तव्य है कि वह इस्लाम के प्रत्येक सदस्य के साथ सम्मानपूर्वक दीन भाव से रहे। उसे मार डालने, लूट लेने की आज्ञा पैग़म्बर ने मुसलमान को दी है।

मुगलों के पहले सभी मुसलमान सुलतानों ने ऐसी ही कट्टर मुस्लिम भावनाओं से काफी अत्याचार और खून खराबी से भरे हुए शासन किए। परन्तु अकबर ने सब से पहले यह धार्मिक द्वेष

दूर किया और हिन्दुओं से न केवल राजनैतिक सहयोग स्थापित किए, बल्कि उनके साथ बेटी-व्यवहार के सम्बन्ध भी स्थापित किए। परन्तु औरंगजेब ने फिर से इसी धर्मान्धता का प्रचार किया और हिन्दू धर्म पर धीरे धीरे आक्रमण करने आरम्भ किए। सन् १६४४ में जब वह गुजरात का सूबेदार था, उसने अहमदाबाद के तत्काल ही बने हुए चिन्तामणि के प्रसिद्ध मन्दिर को गौ-हत्या करके भ्रष्ट कर दिया। बाद में उसे मसजिद बनवा दिया। गुजरात के और मन्दिरों को भी उसने ढहा दिया। अपने राज्य के पहले ही वर्ष में उसने बनारस में एक नए मन्दिर बनाने की आज्ञा नहीं दी। साथ ही उसने कटक से लेकर मेदनीपुर तक के सब छोटे बड़े मंदिरों की मरम्मत बंद कर दी।

सन् १६५६ के अप्रेल में उसने एक आम हुक्म दिया कि हिन्दुओं की सब पाठशालाएँ और मन्दिर गिरा दिए जायं और उनकी धार्मिक प्रथाएँ बंद कर दी जायं। इसी समय उसने गुजरात का सोमनाथ मन्दिर, बनारस का विश्वनाथ मन्दिर और मथुरा का केशव राय का मन्दिर ढहाया। मथुरा हिन्दुओं का एक अच्छा धर्म केन्द्र था, विशेषकर वैष्णवों का बहुत प्रसिद्ध केन्द्र बन चुका था। दुर्भाग्य से यह शहर देहली और आगरा के बीच जाने वाली सड़क पर था, इसलिए इस पर औरंगजेब की सबसे क्रूर दृष्टि पड़ी और उसने अब्दुल नबी नाम के कट्टर मुसलमान को मथुरा का फौजदार नियुक्त किया, जिसने वहां के केशव राय के मन्दिर को ढहा दिया और मथुरा शहर का नाम बदल कर इस्लामाबाद रख दिया।

इसी समय उसने एक महकमा कायम करके साम्राज्य भर के सारे सूबों, परगनों और शहरों में मोतासिब नियुक्त कर दिए, जिनका काम हिन्दुओं के तीर्थों और मन्दिरों को तहस नहस करना ही था।

१६८० में उसने आमेर रियासत के सब मन्दिर तुड़वा डाले, और गुजरात के हिन्दुओं को जो ज़मीनें वजीफे के रूप में दी थीं, सब जब्त कर लीं। १६७६ में औरंगजेब ने साम्राज्य भर के गैर मुस्लिमों पर जज़िया कर लगा दिया। स्त्रियों, चौदह वर्ष से कम उम्र के बच्चों और गुलामों को इस कर से छूट दी गई। मठाधीशों और महन्तों को भी यह कर चुकाना पड़ता था। यह कर तीन दरों में लिया जाता था जो बारह, चौबीस और अड़तालीस दरहम प्रति वर्ष थीं। शिवाजी मरहठा और उदयपुर के महाराणा राजसिंह ने इस कर के खिलाफ बहुत कुछ कहा सुनी की। दिल्ली और आसपास की प्रजा ने भी प्रार्थना की, परन्तु औरंगजेब ने उस पर ध्यान नहीं दिया। इस कर से बहुत बड़ी रकम वसूल होती थी। अकेले गुजरात से ही पांच लाख रुपये आते थे। इस कर से बचने और अपमानों से छुटकारा पाने के लिए लोग धड़ाधड़ मुसलमान होने लगे। इतने पर ही औरंगजेब चुप नहीं हुआ। उसने मुसलमान सौदागरों पर से चुंगी कर बिल्कुल उठा लिया, लेकिन हिन्दू सौदागरों पर पांच प्रतिशत चुंगी कर बढ़ा दिया। जो लोग मुसलमान हो जाते थे, उन्हें इनाम मिलते थे। ज़मीन जायदाद मिलती थी, ऊंचे पद मिलते थे, करों से छुटकारा मिल जाता था, विवाद-ग्रस्त जायदाद पर उनका अधिकार मान लिया जाता था। १६७१ में बादशाह ने यह हुक्म दिया कि राज के सब कर वसूल करने वाले सब मुसलमान ही हों और हाकिमों और तालुकेदारों को आज्ञा दी कि वे हिन्दू पेशकारों और दीवानों को निकाल कर मुसलमानों को भरती करें। यहां तक कि कानून को मुसलमान बनने के लिए एक प्रसिद्ध कहावत बन गई।

मुसलमान होने के लिए हाथियों पर बैठा कर गाजे बाजे के साथ जलूस निकाले जाते थे और उन्हें दैनिक तनख्वाहें दी जाती थीं। मार्च १६६५ में उसने हुक्म दिया कि राजपूतों के सिवा और

कोई हिन्दू हाथी, घोड़े और पालकी पर न चढ़ने पाए, न हथियार बांधे। इसी समय उसने साम्राज्य भर में तीर्थों में भरने वाले धार्मिक मेलों को क़तई बन्द कर दिया। होली और दीवाली के त्योहार भी सार्वजनिक रूप से नहीं मनाए जाते थे।

इन सब बातों का यह परिणाम हुआ कि हिन्दुओं में विद्रोह की भावना बढ़ती गई। १६६६ में मथुरा में भयानक विद्रोह उठ खड़ा हुआ। इस विद्रोह का नेतृत्व तिलपट के जाट गोकुला ने किया। मथुरा का हाकिम अब्दुल नबी इस विद्रोह में मार डाला गया। गोकुला ने शाहाबाद का परगना लूट लिया। अन्त में गोकुला को दबाने के लिए बड़ी भारी सेना भेजी गई, जिसका नेता हसन अबी खां था। उसने बड़ा जबर्दस्त दमन किया और गोकुला को सपरिवार कैद कर लिया। लेकिन इसके थोड़े दिन बाद ही राजाराम के नेतृत्व में जाटों ने फिर मथुरा में भारी विद्रोह खड़ा किया। सन् १६७२ में सतनामी सम्प्रदाय के साधुओं ने, जिनका केन्द्र नारनौल था, विद्रोह किया।

यह झगड़ा बहुत शीघ्र एक भारी युद्ध में परिणत हो गया। इसमें पांच हजार सतनामी साधुओं ने भाग लिया, जिसका नेतृत्व एक बूढ़ी औरत ने किया। उन्होंने नारनौल के फौजदार को मार भगाया और शहर पर कब्जा कर लिया, नारनौल को लूट लिया, और जिले में अपना शासन कर लिया। मालिजदों को ढहा दिया। इस विद्रोह को दबाने के लिए औरंगजेब को काफ़ी सेना भेजनी पड़ी।

इसी समय पंजाब में सिखों ने सिर उठाया। इस समय सिख लोग गुरु को राजा के समान मानने लगे थे। गुरुओं के दरबार लगते थे और वे दरबारियों और मन्त्रियों से घिरे रहते थे। ये मन्त्री मसन्द कहलाते थे जो कि पठान बादशाह के खिताब 'मसनदर्द आली' का बिगड़ा हुआ नाम था। जब जहांगीर ने गुरु अर्जुन

पर दो लाख रुपया जुर्माना किया था और जुर्माना न देने पर उसे लाहौर में तपती हुई रेती पर बैठने को बाध्य किया था, जिससे उसकी मृत्यु हो गई थी। इसके बाद उनके पुत्र हरगोविन्द ने सिख सम्प्रदाय को सैनिक रूप दिया और उसने एक छोटी सी सेना बना ली, जिससे बादशाही सेना की एक दो बार झड़प भी हुई। बादशाह ने उसके बाद गुरु तेग बहादुर को दिल्ली में बुलाकर उसका सिर काट लिया और इसके बाद ही गुरु गोविन्द सिंह ने शाही सेना के साथ युद्ध छेड़ दिया।

गुरु गोविन्द ने निरन्तर लड़ाई जारी रखी और बहुत ही शीघ्र औरंगजेब के लिए वह एक कट्टर शत्रु के रूप में खड़ा हो गया। गुरु गोविन्द की मृत्यु के बाद सिखों के छोटे छोटे दल बन गए। और वे डाकुओं के समूह की भांति फिरते और लूटपाट करते थे। औरंगजेब की धर्मान्धता का यह परिणाम हुआ कि राजपूतों की वीर जाति उसकी शत्रु बन गई।

सन् १६७८ के अन्त में जमरुद में जसवन्त सिंह की मृत्यु हुई, उसी समय औरंगजेब ने मारवाड़ को मुगल साम्राज्य में मिला लिया। इस पर दुर्गादास ने बादशाह से लोहा लिया। बादशाह को उससे लड़ने के लिए स्वयं अजमेर जाना पड़ा, जहां राठौरों से बड़ा भारी युद्ध हुआ। बहुत से राजपूत कट मरे और जो बच रहे वे पहाड़ों में छिप गए। किन्तु इसी समय मेवाड़ के राणा राज सिंह ने औरंगजेब को चुनौती दी और औरंगजेब ने मेवाड़ पर चढ़ाई कर दी। इस लड़ाई में बड़ी बड़ी दिक्कतों का सामना करना पड़ा और औरंगजेब घिर गया। इसमें सबसे अधिक अपमान औरंगजेब के छोटे पुत्र मुहम्मद अकबर खां को सहना पड़ा जिसकी उम्र छब्बीस साल की थी। निरन्तर हार खाने पर वह झिड़का जाता था। अन्त में उसने राजपूतों से मिलकर औरंगजेब के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा खड़ा किया, जिसे दबाने में

औरंगजेब को बहुत अधिक प्रयास करना पड़ा।

मुगल राज्यकाल में मारवाड़ का एक विशेष सैनिक महत्व था। मुगल राजधानी से समृद्ध उद्योग धंधे वाले नगर अहमदाबाद और खम्भात के काम धंधे वाले बंदरगाह को जाने वाला सबसे सीधा और नजदीक का व्यापारी माल मारवाड़ की सीमा पर होकर जाता था। यह स्वाभाविक था कि औरंगजेब के रूप में यह भावना पैदा हो कि यदि मारवाड़ राज्य मुगल साम्राज्य में मिला लिया जाय तो न केवल राजपूताने के ठीक बीचोबीच एक सैनिक और व्यापारिक महत्वपूर्ण लम्बे प्रदेश की—जिस पर मुसलमानों का एकाधिपत्य होगा, स्थापना हो जायगी, अपितु उदयपुर के गौरवपूर्ण राणाओं को बगल से घेर लिए जाने की बड़ी भारी सुविधा मिल जायगी।

इसी से महाराज जसवन्त सिंह के मरते ही औरंगजेब मारवाड़ राज्य को खालसा करने के लिए तुरन्त स्वयं अजमेर को चल दिया। इस घटना और खबर से राजाओं में बड़ी गड़बड़ी पैदा हो गई। उनमें इतनी शक्ति नहीं थी कि वे इस सशक्त मुगल सेना का सामना करें। इसी समय औरंगजेब ने हिन्दुओं पर जज़िया का कर भी लगा दिया था, जो पिछले सौ साल से बंद था। ये झगड़े हो ही रहे थे कि ज़मरुद से लौटते समय जसवन्त सिंह की दो विधवा रानियों ने लाहौर में दो पुत्रों को जन्म दिया। एक तो कुछ दिन बाद मर गया, दूसरे अजीत सिंह को लेकर जसवन्त सिंह का कुटुम्ब दिल्ली पहुँचा। अजीत सिंह के अधिकारों के सम्बन्ध में औरंगजेब से बहुत बातें हुईं, परन्तु कुछ निर्णय नहीं हुआ और रानी वीरतापूर्वक बालक राजा को लेकर अपने मुट्ठीभर सिपाहियों के साथ मारकाट करके निकल गई और उदयपुर के महाराणा की शरण ली। बादशाह यह सुन कर बहुत गुस्से में आया और बड़ी भारी सेना लेकर अजमेर पहुँचा। वहां का मुगल

हाकिम फौजदार तहब्बुर खां था। पुष्कर में राजपूतों से उसकी लड़ाई हुई। राजपूत हार कर पहाड़ों में छिप गए। कहने को बादशाह जीत गया, किन्तु वास्तविक बात यह थी कि राठौरों ने निरंतर तीस वर्षों तक स्वतन्त्रता का यह युद्ध चलाया और अन्त में अजीत सिंह को जोधपुर का अधिपति बना कर बैठाया।

उदयपुर के राणाओं ने जो राठौरों को सहायता दी उसके एवज में औरंगजेब ने मेवाड़ को एकदम तहस नहस कर दिया। लगातार कई वर्ष तक लड़ाई करने के बाद महाराणा से संधि हो गई। और इस प्रकार से तब औरंगजेब अपनी दृष्टि से विजयी हो चुका था। उसके पुत्र अकबर ने राजपूतों से मिल कर विद्रोह का झण्डा खड़ा कर दिया। परन्तु उस वक्त उसको सफलता नहीं मिली और उसे सुदूर दक्षिण में जाकर शिवाजी के अयोग्य पुत्र शम्भुजी की शरण लेनी पड़ी। यह एक ऐसी भयानक बात थी कि जो औरंगजेब को दक्षिण खींच ले गई, जहां उसे पच्चीस वर्ष तक निरन्तर घोड़े के पीठ पर रहना पड़ा, और वहीं की मिट्टी में उसे दफ़न होना पड़ा। और जिस अमूल्य तख्तेताऊस के लिए उसने अपने बाप को कैद किया, भाइयों का क़त्ल किया, उसपर आराम से बैठना उसे नसीब नहीं हुआ। उसके शासन के इन पिछले पच्चीस वर्षों में उत्तर भारत की सारी ही शासन व्यवस्थाएं बिगड़ गईं, क्योंकि उस समय राज्य की सारी शक्तियां दक्षिण में आ लगी थीं। बादशाह स्वयं अपने कुटुम्बियों, दरबारियों, हाकिमों और सारी सेना के साथ दक्षिण चला गया था। इस प्रकार अनिच्छापूर्वक देश निकाले के दिनों में दक्षिण में पड़े हुए अधिकारी और सैनिक अपने घरों को लौट आने के लिए बेचैन हो गए। यहां तक कि एक अफसर दिल्ली आने के लिए एक वर्ष की छुट्टी लेने के लिए बादशाह को एक लाख रुपया भेंट करने को तैयार हो गया। राजपूतों ने भी शिकायत की कि हम इस प्रकार जिन्दगी

भर दक्षिण में पड़े रहे तो हमारे वंश ही नष्ट हो जायेंगे। इधर उत्तरी भारत का शासन प्रबन्ध ढीला होकर धीरे धीरे बिगड़ता गया, प्रजा गरीब होती गई, लोगों में आचार-भ्रष्टता और अकर्मण्यता बढ़ गई। इसके अतिरिक्त राजपूतों में, सिखों में और दूसरी जातियों में जो विद्रोह और आशन्ति के बीज बादशाह बो गया था, उनका पूरा विकास हुआ। और सारे साम्राज्य के सारे उत्तरी भाग में एक प्रकार की अराजकता फैल गई। यह परिस्थिति पचीस वर्ष तक बनी रही। यह काल थोड़ा न था। इतने काल में तो भारतीय समाज की एक पूरी की पूरी पीढ़ी निकल गई।

दक्षिण में शिवाजी ने औरंगजेब की गैरहाजिरी का लाभ उठा कर अपने राज्य का पूरा विस्तार कर लिया था, और अपनी शक्तियां बहुत बढ़ा ली थीं। वह दक्षिण का एकछत्र सर्वश्रेष्ठ और समर्थ राजा बन बैठा था। अफ़जल खां को मारने से और दो बार सूरत को लूटने से उसकी धाक जम गई थी। बीजापुर और गोलकुण्डा के राजा उससे भय खाते थे। दक्षिण में अकेले उसी की तूती बोल रही थी। शिवाजी को परास्त करने के लिए औरंगजेब ने जो उद्योग किए थे, उनमें एकबार राजा जयसिंह की सहायता से उसे इतनी ही सफलता प्राप्त हो गई थी कि शिवाजी ने साम्राज्य के प्रति राजभक्त बने रहने की स्वीकृति दे दी थी और आगरे भी चला गया था। परन्तु दो चरम श्रेणी के घमण्डी व्यक्तियों का मेल संभव न था। शिवाजी आगरे से लौट कर आया तो उसने पूरे वेग से दक्षिण में मुगलों का संहार आरम्भ कर दिया। और अपने राज्य का अधिक से अधिक विस्तार करके दक्षिण की सब मुस्लिम शक्तियों को दलित करके वह दक्षिण का सबसे बड़ा छत्रपति राजा बन चुका था, जिसके पास अस्सी हजार तक सैनिक लड़ने के लिए तैयार रहते थे। यद्यपि औरंगजेब उत्तर में बड़े झंझटों में फंसा था, फिर भी वह शिवाजी की तरफ से बेखबर न

था। उसने शिवाजी को जेर करने के लिए कुछ भी कसर न छोड़ी थी। परन्तु उसका कुछ भी बस न चला और शिवाजी अपने मिशन में सफल होता चला गया। अन्त में शिवाजी की मृत्यु हुई और उसके बाद उसका अयोग्य पुत्र शम्भुजी राजा बना दिया गया। शम्भुजी में पिता के कोई गुण न थे। वह लापरवाह, दुराचारी, मूर्ख और अकर्मण्य व्यक्ति था। यद्यपि लड़ाइयों के जो जाल शिवाजी के मृत्युकाल में फैले हुए थे, उनके कारण शम्भुजी को गद्दी पर बैठते ही लड़ाइयों में फंसना पड़ा, परन्तु उसके दुर्भाग्य से उसी समय औरंगजेब का पुत्र अकबर उसकी शरण आ गया, जिसके कारण बादशाह औरंगजेब एकदम बौखला उठा और एक बड़ी भारी सेना लेकर दक्षिण को चला आया। यहां आकर उसने गोलकुण्डा और बीजापुर के राज्यों को तहस नहस कर दिया। इस समय गोलकुण्डा की गद्दी पर अब्दुल हसन, एक कमजोर और आलसी आदमी था जो न कभी दरबार करता था, न गोलकुण्डा के किले से बाहर जाने का साहस ही करता था। उसके हिन्दू मंत्री मादन्ना और आकन्ना राज्य के सर्वेसर्वा थे। सुल्तान अब्दुल हसन अपने जनानखाने में पड़ा हुआ अनगिनत रखेलियों और नर्त्तकियों के साथ जीवन बिताता था। उन दिनों हैदराबाद दुराचार और विलास का केन्द्र बन गया था। वहां बीस हजार वेश्याएं थीं, जो हर शुक्रवार को सार्वजनिक चौक में नृत्य करती थीं। अनगिनत शराबखानों में प्रतिदिन बारह सौ बड़ी बड़ी पखालें ताड़ी की खाली हो जाती थीं। इस प्रकार इस सुल्तान की पौने तीन करोड़ रुपयों की वार्षिक आय ऐश-आराम में खर्च हो जाती थी।

दक्षिण में आकर औरंगजेब लगातार लड़ाइयों और संघर्षों में लगा रहा। उसे बड़ी बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। महामारी और अकाल से उसका लश्कर तबाह हो गया। चारों

ओर लाशों के ढेर लग गए। अन्त में गोलकुण्डा को उसने फतह किया। गोलकुण्डा को जीतने पर वहां के किले से उसको सोने चांदी के बर्त्तनों, रत्नों और जड़ाऊ सामान के अतिरिक्त सात करोड़ रुपए नकद भी मिले। जीते हुए राज्य की आमदनी दो करोड़ सत्ताइस लाख थी।

बीजापुर राज भी उसने विजय किया। बादशाह ने बीजापुर के सुल्तान को 'खां' का खिताब दिया और एक लाख रुपया सालाना पेंशन भी नियत कर दी। धूमधाम के साथ उसने तख्ते रवाँ पर बैठ कर सोने चांदी की मोहरें लुटाते हुए बीजापुर में प्रवेश किया और अपनी विजय की सूचना वहां की मशहूर तोप 'मलिके मैदान' पर खुदवा दी।

शिवाजी के मरने पर मराठा राज्य में बहुत झगड़े झंझट उठ खड़े हुए थे। शिवाजी का बड़ा लड़का बहुत ही अयोग्य था। इसलिए दरबारियों ने शिवाजी के छोटे लड़के राजाराम को—जिसकी उम्र दस वर्ष की थी, सिंहासन पर बैठा दिया। परन्तु इससे मराठे सरदारों में आपस में फूट पड़ गई और सेनापतियों ने शम्भुजी को ही राजा बना लिया। शम्भुजी ने जब उसके विद्रोही शाहज़ादे अकबर को शरण दी तो बादशाह का गुस्सा और बढ़ गया। यह शाहज़ादा एक अज्ञात गांव में बैठा हुआ सेना की भरती की खटपट कर रहा था। इस समय उसके पास दो हजार घुड़सवार थे। उधर शम्भुजी दिन पर दिन आलसी और बेपरवाह होता जाता था। उसने सब राजकाज अपने मंत्री कवि कलश पर छोड़ दिया था, जो इलाहाबाद का एक कनौजिया ब्राह्मण था। जब औरंगजेब ने चारों ओर से उस पर चढ़ाई की, तब उसे बहुत सी लड़ाइयां लड़नी पड़ीं। परन्तु शम्भुजी के दुराचार और अस्थिरचित्त वृत्ति के कारण उसके बहुत से आदमी उसे छोड़ छोड़ कर मुग़लों से जा मिले। इससे उसका संगठन टूट गया। बादशाह चढ़ाई पर चढ़ाई

करता जा रहा था कि इसी समय शाही लश्कर में प्लेग फूट निक-ला—जिससे एक लाख आदमी मर गए।

जिस समय शाहज़ादा अकबर ने चार सौ घुड़सवार सैनिकों का एक दस्ता, जिनमें अधिकांश राजपूत थे, और बारबरदारी के पचास ऊंट लेकर शम्भुजी की शरण ली, उस समय शम्भुजी के सरदार भीतरी विद्रोह कर रहे थे। शम्भुजी ने अपने विरोधि-यों के नेताओं को कैद कर लिया। फिर भी व्यवस्था बिगड़ रही थी। एक यह भी षड़यन्त्र चल रहा था कि शम्भुजी को क़त्ल कर दिया जाय और राजाराम को अकबर के संरक्षण में गद्दी पर बैठा दिया जाय। यह षड़यन्त्र फूट गया और शम्भुजी ने सब विद्रोहि-यों को निर्दयतापूर्वक मृत्यु दण्ड दिया। इसी समय कवि कलश उसके मुँह चढ़ गया और शम्भुजी दिनोंदिन निरुद्यमी, लापरवाह होकर सुरा और सुन्दरियों में अपने दिन व्यतीत करने लगा।

जहां इस प्रकार दुर्व्यवस्था हो रही थी, औरंगजेब ने शम्भुजी पर सब ओर से चढ़ाई करने का निश्चय कर लिया। उधर इसी अवसर में शम्भुजी को पुर्त्तगालियों से भी उलझना पड़ा। इससे उसकी शक्तियां और भी क्षीण हो गईं। शाहज़ादा अकबर तो अपने मतलब को हल करने की फिक्र में था, परन्तु शम्भुजी से उसे कोई सहायता नहीं मिल रही थी। शम्भुजी की अयोग्यता और दुराचार के कारण उसके दरबारी, सरदार पहले ही से उसके विरोधी हो गए थे और जो कसर रह गई थी उसे अब औरंगजेब की रिश्वतों ने पूरा कर दिया था। परिणाम यह हुआ कि औरंगजेब को बराबर सफलता मिलती चली गई। शम्भुजी फिर भी साव-धान नहीं हुआ, न उसने औरंगजेब के इस बढ़ते हुए खतरे का कोई उपाय किया। उसके सैनिक मुगल प्रदेशों पर लूट मार करते रहे, परन्तु इसका सैनिक परिस्थिति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। न इन छोटी मोटी बातों की तरफ औरंगज़ेब ने ध्यान दिया। उस

मराठा राजा के दिमाग में औरंगजेब के सैनिक संगठन को खंडित करने योग्य किसी योजना का उदय नहीं हुआ। षड़यन्त्रों के कारण उसका शासन प्रबन्ध बहुत बिगड़ गया। मद्रास और कर्नाटक के प्रदेश उसके हाथ से निकल गए। इसका परिणाम यह हुआ कि शम्भुजी का आलस्यपूर्ण शासन और उसके अधिकारियों के भ्रष्टाचार और विद्रोहों से मराठा राजा का आर्थिक, और राजनैतिक सर्वथा पतन हो गया।

अक्तूबर १६८८ में जब वह संगमेश्वर में थोड़े से शरीर रक्षक लिए हुए बिल्कुल लापरवाह शराब और व्यभिचार में डूबा हुआ था, उस पर औरंगजेब के उत्साही सेनापति मुकर्रर खां ने अकस्मात् आक्रमण करके उसे घेर लिया। कवि कलश ने मुकाबिला किया और घायल हुआ। शम्भुजी और मंत्री मकान के तहखाने में छिप गए, जहां से मुगल सैनिकों ने उनके बाल खींच कर निकाला और पकड़ कर हाथियों पर बांध दिया। शम्भुजी के साथ पचीस आदमी, उनकी औरतें, लड़कियां भी पकड़ ली गईं। जब ये कैदी १५ फरवरी को बहादुरगढ़ के शाही पड़ाव पर पहुंचे—तो औरंगजेब के हुक्म से उन्हें पैदल सारे पड़ाव में घुमाया गया और फिर औरंगजेब के दरबार में हाजिर किया गया। कैदी शम्भुजी को देखते ही औरंगजेब तख्त से उतर कर कालीन पर घुटनों के बल बैठ गया और नमाज पढ़ने लगा। इस पर कवि कलश ने उसी समय एक छन्द बना कर कहा, जिसका अभिप्राय था कि 'ओ राजा, औरंगजेब, तेरे सामने तख्त पर बैठा नहीं रह सका। वह घुटने टेक कर तेरा अभिनन्दन करता है।' शम्भुजी को प्रेरित किया गया कि वह औरंगजेब को झुक कर सलाम करे, लेकिन उसने ऐसा नहीं किया और आंखें तरेर कर औरंगजेब को देखा। उसी रात शम्भुजी की आंखें फोड़ दी गईं और कवि कलश की जुबान काट ली गई। अंत में अनेक यातनाएं और पीड़ा देने

के बाद उन्हें अत्यन्त क्रूरतापूर्वक ११ मार्च को कत्ल कर दिया गया।

शिवाजी की विधवाओं, शम्भुजी की, राजाराम की पत्नी, पुत्रियों और वधुओं को पकड़ कर कैद कर लिया गया। शम्भुजी के सात साल के पुत्र शाहूजी को राजा की उपाधि देकर और सात हजारी का मनसब देकर कैद में रखा।

इस प्रकार आदिलशाह, कुतुबशाह और शम्भुजी इन तीनों ही दक्षिण के राजाओं का खात्मा हो गया और वे राज्य मुगल राज्य में मिला लिए गए। इस प्रकार १६७६ के अंत में ऐसा प्रतीत होने लगा कि औरंगजेब ने अब सब कुछ प्राप्त कर लिया, पर वास्तविकता यह थी कि वह सब कुछ खो बैठा था।

मुगल साम्राज्य इतना विस्तार में फैल गया था कि इस काल में एक व्यक्ति के द्वारा एक केन्द्र से उस पर शासन होना सम्भव नहीं था। सभी दिशाओं से इसके शत्रुओं ने सिर उठाया और उसने उन्हें हराया, परन्तु उनका कुचलना सम्भव न था। उत्तरी और मध्य भारत के सब प्रदेशों में अराजकता फैली थी। शासन प्रबन्ध ढीला था, भ्रष्टाचार का बोलबाला था। दक्षिण के इस अनन्त युद्ध ने मुगल राज्य का वह अटूट खजाना बिल्कुल खाली कर दिया था जो तीन पीढ़ियों में संचित किया गया था और जिसकी समृद्धि का बोलबाला संसार भर में था।

शम्भुजी की मृत्यु के बाद मराठा-संगठन का स्वरूप ही बदल गया। अब वे लूट मार करने वाली जाति या विद्रोही मात्र न रहे, मुगल साम्राज्य के एक मात्र प्रबल संगठित शत्रु और दक्षिणी भारत की राजनीति की महत्वपूर्ण शक्ति बन गए। सारे भारतीय प्रायद्वीप में बम्बई से मद्रास तक फैला हुआ सर्वव्यापी यह शत्रु वायु के समान किसी भी पकड़ में न आने वाला था, और मालवा, मध्य प्रदेश, बुन्देलखन्ड तक के मुगल विद्रोही गुट उसके

मित्र थे, इसलिए अब औरंगजेब का दिल्ली लौट जाना सम्भव ही न रहा। उसके जीवन के आखरी दिनों में एक ही दुखद घटना की पुनरावृत्ति होती रही–कि बहुत सा समय, धन और सैनिकों की बरबादी के बाद वह एक पहाड़ी किला जीतता और कुछ ही महिनों बाद मौका पाकर मराठे उसे छीन लेते। और बादशाह को फिर चढ़ाई करनी पड़ती। चढ़ी हुई नदियों, दलदल से भरे हुए रास्तों, ऊबड़खाबड़ पहाड़ियों व पगडण्डियों में चलने से मुगल सैनिक हतोत्साह हो गए। बहुधा मजदूर भाग खड़े होते। बारबरदारी के जानवर भूख और थकावट से मर जाते और शाही सैनिक हमेशा भूखे रहते, खाने पीने को कमी ही रहती, कभी समाप्त न होने वाले शाही फरमानों से अधिकारीगण थक गए और यह आवश्यक हो गया कि औरंगजेब खुद ही प्रत्येक चढ़ाई का संचालन करे। अब वह अट्ठासी वर्ष का बूढ़ा था, और मृत्यु उसे चारों ओर से घेरती हुई चली आ रही थी। उसका अर्द्ध शताब्दी का शासन बिल्कुल असफल रहा, यह उसे दीख गया था। शाही कोष खाली हो गया था, साम्राज्य दिवालिया था, तीन तीन साल की तनख्वाहें चढ़ी हुई थीं और भूखों मरने वाले सिपाही विद्रोह पर आमादा थे। शाही राजघराने का खर्चा बंगाल से मुर्शिदकुली खां के द्वारा भेजी जाने वाली रकम से किसी तरह चलाया जाता था, जिसकी बड़ी उत्कण्ठा से इन्तजारी की जाती थी। खेतों में न वृक्ष थे न कोई फसल। वहां मनुष्यों और पशुओं की हड्डियां बिखरी दीख पड़ती थीं। सारा प्रदेश ऐसा वीरान दीखता था कि तीन-चार दिन निरन्तर यात्रा करने पर ही कहीं आग या दीपक दीख पड़ता था।

अकबर का स्थापित किया हुआ और शाहजहां द्वारा समृद्ध किया हुआ संसार प्रसिद्ध मुगल साम्राज्य इस बड़े बादशाह के हाथों सत्रहवीं शताब्दी के अन्त में मत्यु के मुख में पहुंच चुका था। उसकी फौज में हर साल कुल मिलाकर एक लाख आदमी मर जाते

थे। और मरने वाले पशुओं, बारबरदारी के ऊंट बैलों की संख्य तीन लाख से भी ऊपर पहुँच जाती थी। १७०२ से १७०४ तक दो ही वर्षों में दक्षिण में अकाल और महामारी से बीस लाख आदमी मर गए।

अब पूरे राज्य में मराठों का अमल था। उन्होंने सारे रास्ते रोके हुए थे। अन्न की कीमत बहुत बढ़ गई थी और शाही पड़ाव में लोग भूखों मरते थे। शाही लश्कर के पीछे पचास-साठ हजार मराठे लुटेरों का दल चलता रहता था। जो मौका पाते ही खजाने और खाद्य सामग्री को लूट लेता था। उन्हें अब मुगलों का डर न था। मुगल ही उनसे डरने लगे थे। उनके पास तोपें बंदूकें, तीर, तलवारें सब कुछ था। सामान ढोने के लिए हाथी और ऊंट भी थे। और इस प्रकार ये मराठा लुटेरे एक सुगठित सैनिक संगठन में सुसज्जित हो गए थे। अन्त में औरंगजेब बीस जनवरी १७०६ को पूरे तेईस वर्ष बाद अहमदनगर लौटा। इस वक्त उसकी उम्र नब्बे को पार कर चली थी। उसने देखा कि उसके जीवन भर के प्रयत्नों का परिणाम राजनैतिक क्षेत्रों में उल्टा ही हुआ। साम्राज्य में अराजकता ही दीख पड़ी। उसके सारे संगी साथी, अमीर-उमराव एक एक करके मर गए थे। एक वजीर असद खां ही जिन्दा था, जो उम्र में बादशाह से दो-चार साल छोटा था। उसका दिल बिल्कुल सूना हो गया था। जब वह शाही दरबारियों पर नज़र डालता था तो उसे अपने चारों ओर अनुभव हीन, ऐशपसन्द, जिम्मेदारी से घबड़ाने वाले, थोड़ी उम्र के नौजवान ही नज़र आते थे, जो निरन्तर दरबार में षड़यन्त्र करते रहते थे। सिर्फ दो ही आदमी उसके सहचर थे, एक उसकी बेटी जीनत उन्नीसां जो अब बूढ़ी हो चली थी और दूसरी उसकी बेगम उदय पुरी महल—कामबख्श की मां, जो पशु की तरह मूर्ख और शराबी थी। कामबख्श सनकी, व्यसनी और स्वेच्छाचारी था, जिसने अपने

बाप की सब आज्ञाओं का उल्लंघन किया था। मराठों के उपद्रव बहुत बढ़ गए थे। औरंगजेब की आपत्तियां बढ़ती जा रही थीं। शाही लश्कर की हालत संकटपूर्ण थी। मोहम्मद आज़म अपने प्रतिद्वन्दियों को रास्ते से हटाकर बादशाह होने की फिक्र में था। वज़ीरे आज़म असद खां भी विद्रोहियों में सम्मिलित हो गया था। उसके सब बेटे आपस में लड़ रहे थे। बादशाह को रुक रुक कर बेहोशी के दौरे होते थे। उसने अपने पास से सब बेटों को बिदा कर दिया। अपनी वसीयत की और मृत्यु का मुकाबिला करने की तैयारी की। बीस फरवरी १७०७ शुक्रवार प्रातःकाल बादशाह ख़्वाबगाह से निकला, सुबह की नमाज पढ़ी और हाथ में माला लेकर कल्मा पढ़ने लगा। धीरे धीरे उस पर बेहोशी छाने लगी, स्वांस रुकने लगा, फिर भी आठ बजे तक—जब तक उसका दम नहीं निकल गया, उसकी उंगलियां निरन्तर माला फेरती रहीं और होठ कल्मा का उच्चारण करते रहे।

अन्त में उसे शेख़ जैनुद्दीन की समाधि की चारदीवारी में दफन के लिए दौलताबाद के पास खुलदाबाद भेज दिया गया। जहां इसकी हड्डियां एक साधारण पुरानी टूटी फूटी कब्र के नीचे दबी हुई हैं, जिस पर न कोई संगमरमर का चबूतरा है, न शानदार गुम्बज।

॥ समाप्त ॥

हमारे और प्रकाशन

विश्लेषण

इलाचन्द्र जोशी

●

किरात-कन्या

द्विजेन्द्र, एम० ए०

●

आखिरी मंजिल

श्री राजेन्द्र

●

बन्दर मामा

श्री पागल

●

हंस और हंसा

श्री पागल

●

शारदा प्रकाशन

भागलपुर-२

(बिहार)